उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम

संस्कृत व्याकरण-३४६

पुस्तक-२

विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

(शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार के अधीन एक स्वायत्त संस्थान)

ए-२४-२५, संस्थागत क्षेत्र, सेक्टर-६२, नोएडा-२०१३०९ (उत्तरप्रदेश)

वेबसाइट - www.nios.ac.in, टोल फ्री नंबर-१८००१८०९३९३

© राष्ट्रीय-मुक्त-विद्यालयी-शिक्षा-संस्थान National Institute of Open Schooling

प्रथम संस्करण २०२१ First Edition 2021 (Copies)

ISBN (Book 1)

ISBN (Book 2)

सचिव, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, ए-२४-२५, संस्थागत क्षेत्र, सेक्टर - ६२, नोएडा - २०१ ३०९ (उत्तरप्रदेश) द्वारा प्रकाशित। ..... द्वारा मुद्रित।

उच्चतर माध्यमिक
संस्कृत व्याकरण (३४६)

सलाहकार समिति

प्रो. सरोज शर्मा
अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तरप्रदेश-२०१३०९

डॉ. राजीव कुमार सिंह
निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तरप्रदेश-२०१३०९

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

प्रो. अर्कनाथ चौधरी (समिति अध्यक्ष)
उपकुलपति
श्री सोमनाथ संस्कृत विश्वविद्यालय
वेरावल-३६२२६६ (गुजरात)

डॉ. नीरज कुमार भार्गव (समिति उपाध्यक्ष)
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७११२०२ (प. बंगाल)

डॉ. हरि राम मिश्र
सहायक प्राध्यापक
संस्कृत एवं प्राच्य विद्या संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

स्वामी वेदतत्त्वानन्द
प्राचार्य
रामकृष्ण मठ विवेकानन्द वेद विद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७1१२०२ (प. बंगाल)

डॉ. विजेन्द्र सिंह
वरिष्ठ प्राध्यापक (संस्कृत)
शिक्षा निदेशालय, दिल्ली सरकार
नई दिल्ली

श्री मलय पोडे
सहायक प्राध्यापक (WBES) (संस्कृत विभाग)
राणीबाँध सरकारी महाविद्यालय
स्थान-राणीबाँध, मण्डल-बाँकुड़ा-७२२१३५
(प. बंगाल)

श्री सुमन्त चौधरी
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
सबं सजनीकान्त महाविद्यालय
पत्रालय-लुटुनिया, रक्षालय-सबं
मण्डलम-पश्चिम मेदिनीपुरम-७२११६६
(प. बंगाल)

डॉ. राम नारायण मीणा
सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तरप्रदेश-२०१३०९

संपादक मण्डल

डॉ. नीरज कुमार भार्गव
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७११२०२ (प. बंगाल)

स्वामी वेदतत्त्वानन्द
प्राचार्य
रामकृष्ण मठ विवेकानन्द वेद विद्यालय
बेलुर मठ, मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

पाठ लेखक

(पाठ १-८)
श्री मलय पोडे
सहायक प्राध्यापक (WBES)
(संस्कृत विभाग)
राणीबाँध सरकारी महाविद्यालय
स्थान-राणीबाँध, मण्डल-बाँकुड़ा-७२२१३५
(प. बंगाल)

(पाठ ९-११)
डॉ. नीरज कुमार भार्गव
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
बेलुड़ मठ, हावड़ा-७११२०२ (प. बंगाल)

(पाठ १२-२०)
स्वामी वेदतत्त्वानन्द
प्राचार्य
रामकृष्ण मठ विवेकानन्द वेद विद्यालय
बेलुर मठ, मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

(पाठ २१-२७, ३०-३१)
श्री राहुल गाजी
अनुसन्धाता (संस्कृत विभाग)
जादवपुर विश्वविद्यालय
कलकता-७०००३२ (प. बंगाल)

(पाठ २८-२९)
श्री विष्णु पदपाल
अनुसन्धाता (संस्कृत अध्ययन विभाग)
रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय
मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

अनुवादक मंडल

डॉ. योगेश शर्मा
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत विभाग)
संस्कृत, दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग
बनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान-३०४०२२

श्री गैंदा राम जाट
वरिष्ठ अध्यापक (संस्कृत)
माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, राजस्थान सरकार

सुश्री प्रियंका जैन
अनुसन्धाता
संस्कृत, दर्शन एवं वैदिक अध्ययन विभाग
बनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान-३०४०२२

डॉ. राम नारायण मीणा
सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश-२०१३०९

श्री पुनीत त्रिपाठी
वरिष्ठ कार्यकारी अधिकारी
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश-२०१३०९

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. राम नारायण मीणा
सहायक निदेशक (शैक्षिक)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश-२०१३०९

रेखा चित्रांकन, मुखपृष्ठ चित्रण तथा संगणकीय विन्यास

मुखपृष्ठ चित्रण
स्वामी हररूपानन्द
रामकृष्ण मिशन
बेलुड मठ
मण्डल-हावडा-७११२०२ (प. बंगाल)

संगणकीय विन्यास
श्री कृष्णा ग्राफिक्स
दिल्ली

आपसे दो बातें...

अध्यक्षीय सन्देश

प्रिय विद्यार्थी,

'भारतीय ज्ञान परम्परा' पाठ्यक्रम के अध्ययन के लिए आपका हार्दिक स्वागत है।

भारत अति प्राचीन और अति विशाल है। भारत का वैदिक वाङ्मय भी उतना ही प्राचीन, प्रशसनीय और महान है। सृष्टिकर्ता भगवान् ही भारतीयों के सम्पूर्ण विद्याओं के प्रेरक है, ऐसा सिद्धान्त शास्त्रों में प्राप्त होता है। भारत के अच्छे विद्वान, सामान्य जनमानस तथा अन्य ज्ञानी लोगों का प्राचीन काल में आदान-प्रदान का माध्यम सस्कृत भाषा ही थी ऐसा सभी को ज्ञात है। इतने लम्बे काल में भारत के इतिहास में जो शास्त्र लिखे गए, जो चिन्तन उत्पन्न हुए, जो भाव प्रकट हुए वे सभी संस्कृत भाषा के भण्डार में निबद्ध हैं। इस भण्डार का आकार कितना, भाव कितने गभीर, मूल्य कितना अधिक इसका निर्धारण करने में कोई भी समर्थ नहीं है। प्राचीन काल में भारतीय क्या क्या पढ़ते थे, वो एक श्लोक के माध्यम से प्रकट होता है -

अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः।
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश॥ (वायुपुराणम् ६१.७८)

इस श्लोक में चौदह प्रकार की विद्याएँ बताई गयी है। चार वेद (और चार उपवेद) छः वेदाङ्, मीमांसा (पूर्वोत्तरमीमांस) न्याय (आन्वीक्षिकी) पुराण (अठाहर मुख्य पुराण और उपपुराण) धर्मशास्त्र (स्मृति) ये चौदह विद्या कहलाते हैं। अनेक काव्य और बहुत शास्त्र हैं इन सभी विद्याओं का प्रवाह जल के समान ज्ञान प्रदान करने वाला प्रगति करने वाला और वृद्धि करने वाला लम्बे समय से चल रहा है। समाज के कल्याण के लिए भारत के विद्या दान परम्परा में गुरुकुलो में आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक, आयुर्वेद, राजनीति, दण्डनीति, काव्य, काव्यशास्त्र और अन्य बहुत से शास्त्र पढ़ते-पढ़ाते थे।

विद्या के शिक्षण के लिए ब्रह्मचारी परिवार को छोड़कर गुरुकुल में ब्रह्मचर्याश्रम को धारण कर जीवन बिताते थे और इन विद्याओं में पारंगत होते थे। इन विद्याओं में आज भी कुछ पारंगत लोग है। प्राकृतिक परिवर्तन के कारण, विदेशी आक्रमण के कारण, स्वदेश में हो रही ऊठा-पटक इत्यादि अनेक कारणों से पहले जैसा अध्ययन-अध्यापन की परम्परा अब छूटती जा रही है। इन पाठ्यक्रमों की परीक्षा प्रमाणपत्र इत्यादि आधुनिक शिक्षण पद्धति के द्वारा कुछ राज्यों में होता है, परन्तु बहुत से राज्यों में नहीं होता है। अतः इन प्राचीन शास्त्रों के अध्ययन, परीक्षण, और प्रमाणीकरण का होना आवश्यक है। इसे ध्यान में रखकर यह पाठ्यक्रम राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के द्वारा प्रारम्भ किया गया है। लोगों के कल्याण के लिए जितना ज्ञान आवश्यक है वैसा ज्ञान इन शास्त्रों में निहित किया गया और मनुष्य के सामने प्रकट हो, ऐसा लक्ष्य है। जिसके द्वारा सभी यहाँ पर सुखी हो, सभी निरोगी हो, सभी कल्याण दृष्टि से कल्याणकारी हों। किसी को कोई दुख प्राप्त नहीं हो, कोई किसी को दुःख नहीं दे, इस प्रकार अत्यन्त उदार उद्देश्य को ध्यान में रखकर 'भारतीय ज्ञान परम्परा' इस नाम से इस पाठ्यक्रम की रचना की गई है। विज्ञान शरीरारोग्य का चिन्तन करता है, कला विषय मनोविज्ञान को तथा मनोविज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान का पोषण करता है। विज्ञान साधनस्वरूप और सुखोपभोग साध्य है। अतः निःसन्देह रूप से कहा जा सकता है कि कला विषय शाखा विज्ञान से भी श्रेष्ठ है। लोग कला को छोड़कर विज्ञान से सुख नहीं प्राप्त कर सकते हैं परन्तु विज्ञान को छोड़कर कला से सुख को अवश्य प्राप्त कर सकते हैं।

यह संस्कृत व्याकरण का पाठ्यक्रम छात्रानुकूल, ज्ञानवर्धक, लक्ष्यसाधक और पुरुषार्थ साधक है ऐसा मेरा मानना है।

इस पाठ्यक्रम के निर्माण में जिन हिताभिलाषी, विद्वांन, उपदेष्टा, पाठलेखक, त्रुटिसंशोधक और मुद्रणकर्ता ने साक्षात् या परोक्षरूप से सहायता की, उनको संस्थान पक्ष से हार्दिक कृतज्ञता ज्ञपित करते हैं। रामकृष्ण मिशन-विवेकानन्द विश्वविद्यालय के कुलपति श्रीमान् स्वामी आत्मप्रियानन्द जी का विशेषरूप से धन्यवाद जिनकी आनुकूलता और प्रेरणा के बिना इस कार्य की परिसमाप्ति दुष्कर थी।

इस पाठ्यक्रम के अध्येताओं का विद्या से कल्याण हो, सफल हो, विद्वांन हो, सज्जन हो, देशभक्त हो, समाज सेवक हो ऐसी हमारी हार्दिक इच्छा है।

अध्यक्ष

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

आपसे दो बातें...

निदेशकीय वाक्

प्रिय पाठक,

'भारतीय ज्ञान परम्परा' पाठ्यक्रम को पढ़ने की इच्छा से उत्साहित भारतीय ज्ञान परम्परा के अनुरागी और उपासकों का हार्दिक स्वागत करते है। अत्यधिक हर्ष का विषय है, की गुरुकुलों में पढ़ाये जाने वाला पाठ्यक्रम हमारे राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के पाठ्यक्रम में भी सम्मिलित किया गया है। आशा है की लम्बे समय से हमारी संस्कृति से जो दूरी थी वह अब समाप्त हो जाएगी। हिन्दु जैन बौद्धों के धर्मिक, आध्यात्मिक और काव्यादि वाङ्मय प्रायः संस्कृत में लिखा हुआ है। इस 24 करोड़ मनुष्यों के प्रिय विषयों की भूमिका के माध्यम से प्रस्तुत प्रवेश योग्यता के द्वारा और मन को प्रसन्न करने के लिए माध्यमिक स्तर और उच्चतर माध्यमिक स्तर में कुछ विषय पाठ के माध्यम से सम्मिलित किये गए हैं। जैसे आंग्ल, हिंदी, आदि भाषा ज्ञान के बिना उस भाषा के लिखे गए माध्यमिक स्तरीय ग्रन्थ पढ़ने में और समझ में सक्षम नहीं हो सकते हैं, वैसे ही यहाँ पर प्रारम्भिक संस्कृत को नहीं जानते तो इस पाठ्यक्रम को जानने में समर्थ नहीं हो सकते हैं। अतः प्रारम्भिक संस्कृत तथा हिन्दी भाषा के जानकार छात्र यहाँ इस पाठ्यक्रम के अध्ययन के अधिकारी है ऐसा जानना चाहिए।

गुरुकुलों में अध्ययन करने वाले छात्र आठवीं कक्षा तक जितना अपनी परंपरा से अध्ययन करें। नौवीं, दशवीं कक्षा और ग्यारहवीं तथा बारहवीं कक्षा तक भारतीय ज्ञान परम्परा के इस पाठ्यक्रम का निष्ठा से नियमित अध्ययन करें। इस पाठ्यक्रम से विद्यार्थी उच्च शिक्षा के लिए योग्य होंगे।

संस्कृत के विभिन्न शास्त्रों में किया गया कठिन परिश्रम विद्वान्, प्राध्यापक, शिक्षक और शिक्षाविद् इस पाठ्यक्रम का प्रारूप रचना में, विषय निर्धारण के लिए विषय परिमाण निर्धारण में विषय प्रकट करने का भाषा स्तर निर्णय में और विषय पाठ लिखने में संलग्न हैं। अतः इस पाठ्यक्रम का स्तर उन्नत होना है।

संस्कृत व्याकरण की यह स्वाध्याय सामग्री आपके लिए पर्याप्त सुबोध रुचिकर आनन्दरस को देने वाली, सौभाग्य देने वाली धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, उपयोगी रहेगी ऐसी हम आशा करते हैं। इस पाठ्यक्रम का प्रधान लक्ष्य है की भारतीय ज्ञान परम्परा का शैक्षणिक क्षेत्रों में विशिष्ट और योग्य स्थान स्वीकृत होना चाहिए। वह लक्ष्य इस पाठ्यक्रम के माध्यम से पूर्ण होगा, ऐसा हमारा दृढ विश्वास है। पाठक अध्ययनकाल में यदि मानते है की इस अध्ययन सामग्री में पाठ के सार में जहाँ संशोधन, परिवर्तन और परिवर्धन संस्कार चाहते हैं, उन सभी के प्रस्तावों का हम स्वागत करते हैं। इस पाठ्यक्रम को फिर भी और अधिक प्रभावी, उपयोगी और सरल बनाने में आपके साथ हम हमेशा तत्पर है।

सभी अध्येताओं के अध्ययन में सफलता और जीवन में सफलता के लिए और कृतकृत्य के लिए हमारे आशीर्वचन-

किं बाहुना विस्तरेण। अस्माकं गौरववाणीं जगति विरलाम् सर्वविद्याया लक्ष्यभूताम् एव उद्धरामि॥

सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्॥

दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात्।
शान्तो मुच्येत बन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् विमोचयेत्॥

स्वस्त्यस्तु विश्वस्य खलः प्रसीदतां ध्यायन्तु भूतानि शिवं मिथो धिया।
मनश्च भद्रं भजतादधोक्षजे आवेश्यतां नो मतिरप्य हैतुकी॥

निदेशक

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

आपसे दो बातें...

समन्वयक वचन

प्रिय जिज्ञासुओं

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु सह वीर्य करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

परम्परा को आधार मानकर यह प्रार्थना कि हमारा अध्ययन विघ्नों से रहित हो। अज्ञान का नाश करने वाला तेजस्वि हो। द्वेष भावना का नाश हो। विद्यालाभ के द्वारा सभी कष्टों की शान्ति हो।

भारतीय ज्ञान परम्परा इस पाठ्यक्रम के अङ्गभूत यह पाठ्यक्रम उच्चतर माध्यमिक कक्षा के लिए निर्धारित किया गया है। इस पाठ्यक्रम की अध्ययन सामग्री आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मैं परम हर्ष का अनुभव कर रहा हूँ। जो सरल संस्कृत तथा हिन्दी भाषा को जानता है, वह इस अध्ययन में समर्थ है।

संस्कृत व्याकरण का अध्ययन स्तर के अनुसार होता है। इस लिए स्तरों के प्रत्येक पर्व का आरोहण क्रम के अनुसार ही होना चाहिए। अतः पाणिनीय अष्टाध्यायी का विद्वानों ने भिन्न क्रमानुसार व्याख्या किया है। यहाँ भी उसी प्रक्रिया का क्रम है। उसी क्रम को स्वीकार कर यह अध्ययन सामग्री सोपान, पर्व आदि के क्रम में निर्मित है। एक भाग माध्यमिक और अन्य भाग उच्चतर माध्यमिक कक्षा में है। इससे पाणिनीय तंत्र में प्रवेश के लिए छात्र की योग्यता बढ़ती है।

उच्चतर माध्यमिक कक्षा में दिया हुआ पाणिनीय व्याकरण विषय भी अत्यन्त उपकारक है। यह सामग्री पाणिनीय व्याकरण के श्रद्धा सहित अध्ययन में प्रवेश के लिए और मन को शांति देने वाली है। इस ग्रन्थ के आकार पर नहीं जाना चाहिए और न इससे भय होना चाहिए अपितु गम्भीर रूप से अध्ययन करना चाहिए।

सम्पूर्ण पाठ्य पुस्तक तीन भागों में विभक्त है। इसके अध्ययन से छात्र पाणिनीय व्याकरण के मूलभूत ज्ञान को प्राप्त करेंगे।

पाठक पाठों को अच्छी तरह से पढ़कर पाठ में आये प्रश्नों के उत्तरों पर स्वयं विचार कर अन्त में दिए हुए प्रश्नों के उत्तरों को देखें, और उन उत्तरों को अपने उत्तरों से मिलाएं। प्रत्येक पत्र में दिए हुए रिक्त स्थान पर टिप्पणी करना चाहिए। पाठ के अन्त में दिये प्रश्नों के उत्तरों का निर्माण करके परीक्षा के लिए तैयार हो जाएँ। अध्ययन काल में किसी भी कठिनता का अनुभव करते हैं, तो अध्ययन केन्द्र में किसी भी समय जाकर के समस्या के समाधान के लिए आचार्य के समीप जाएँ। या राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान के साथ ई-पत्रद्वारा सम्पर्क करें। वेबसाइट पर भी संपर्क व्यवस्था है। वेबसाइट www.nios.ac.in इस प्रकार से है।

ये पाठ्य विषय आपके ज्ञान को बढ़ाए, परीक्षा में सफलता को प्राप्त करवाए, रुचि बढाए, मनोरथ पूर्ण करे, ऐसी कामना करते हैं।

अज्ञानान्धकारस्य नाशाय ज्ञानज्योतिषः दर्शनाय च इयं में हार्दिकी प्रार्थना.
ॐ असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्मामृतं गमय॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भवत्कल्याणकामी

पाठ्यक्रम समन्वयक
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

अपने पाठ कैसे पढ़ें !

बधाई! आपने स्व-शिक्षण की चुनौती स्वीकार की है। एनआईओएस हर कदम पर आपके साथ है और विशेषज्ञों के दल के साथ मिलकर आपको ध्यान में रखते हुए ''संस्कृत व्याकरण'' की यह सामग्री तैयार की गई है। इसमें अपनाया गया प्रारूप स्वतंत्र शिक्षण के अनुकूल है। यदि आप इसमें दिए अनुदेशों का पालन करेंगे तो आप इस सामग्री से अधिकाधिक लाभ ले सकेंगे। इस सामग्री में प्रयुक्त प्रासंगिक आइकॉन आपका मार्गदर्शन करेंगे। इन आइकॉन को आपकी सुविधा के लिए नीचे स्पष्ट किया गया है।

शीर्षक : आपको अंदर की पाठ्य सामग्री का स्पष्ट संकेत देगा।

परिचय : यह आपको पूर्ववर्ती पाठ से जोड़ते हुए पाठ का परिचय कराएगा।

उद्देश्य : ये ऐसे कथन हैं, जिनसे आपको पता चलेगा कि आप इस पाठ से क्या सीखने जा रहे हैं। उद्देश्य आपको यह जांचने में भी सहायता करेंगे कि आपने इस पाठ को पढ़ने के बाद क्या सीखा है। इन्हें अवश्य पढ़ें।

नोट्स : प्रत्येक पृष्ठ पर किनारे के हाशियों में खाली स्थान है, जिसमें आप महत्वपूर्ण बिंदु लिख सकते हैं या नोट्स बना सकते हैं।

पाठगत प्रश्न : प्रत्येक खंड के बाद स्वयं जांच हेतु बहुत छोटे उत्तरों वाले प्रश्न हैं, जिनके उत्तर पाठ के अंत में दिए गए हैं। इनसे आपको अपनी प्रगति जांचने में सहायता मिलेगी। इन्हें अवश्य हल करें। इनको सफलतापूर्वक पूरा करने पर आप जान सकेंगे कि आपको आगे बढ़ना चाहिए या इसी पाठ को दोबारा पढ़ना चाहिए।

आपने क्या सीखा : यह पाठ के मुख्य बिंदुओं का सारांश है। इससे आपको संक्षिप्त में दोहराने में सहायता मिलेगी। इसमें आप अपने बिंदु भी जोड़ सकते हैं।

पाठांत प्रश्न : यह लंबे व छोटे उत्तरों वाले प्रश्न हैं जो आपको पूरे विषय की स्पष्ट समझ प्राप्त करने के लिए अभ्यास करने का अवसर प्रदान करते हैं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर : इससे आपको यह जानने में मदद मिलेगी कि आपने प्रश्नों के उत्तर ठीक दिए हैं या नहीं।

पुस्तक-१

समास और स्त्री प्रत्यय

१. केवल समास और अव्ययीभाव समास

२. तत्पुरुषसमासः-द्वितीयादितत्पुरुषसमासः

३. तत्पुरुषसमास-तद्धितार्थादितत्पुरुषसमासः

४. तत्पुरुषसमास-कुगतिप्रादिसमास और, उपपदसमास

५. बहुब्रीहिसमास-व्यधिकरणबहुब्रीहि और समान्तप्रत्यय

६. बहुब्रीहिसमास-समासान्तप्रत्यय निपातव्यवस्थादिकम्

७. द्वन्द्वसमास-पूर्वपरनिपात विशेषकार्य और एकशेष

८. प्रकीर्ण समासप्रकरण

स्त्री प्रत्यय

९ स्त्रीप्रत्यय-चाप् टाप् डाप् प्रत्यय

१० स्त्रीप्रत्यय-डाप् डीप् प्रत्यय

११ स्त्रीप्रत्यय-डाप् प्रत्यय

पुस्तक-२

तिङन्त प्रकरण

१२. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-१

१३. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-२

१४. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिट् और लुट् लकार में रूपसिद्धि

१५. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लृट् और लोट् लकार में रूप सिद्धियाँ

१६. भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों में रूप सिद्धियाँ

१७. भ्वादिप्रकरण में - लट् लिट् के सूत्रशेष

१८. भ्वादिप्रकरण में - लिट् लकार का सूत्रशेष

१९. भ्वादिप्रकरण में - लिङ् लुङ् के सूत्रशेष

२०. भ्वादिप्रकरण में आत्मनेपद प्रकरण

२१. अदादि से दिवादि तक - अद्, हु, दिव् धातुएं

२२. स्वादि से रुधाादि तक - सु तुद् रुध धातवः

२३. तनादि से चुरादि तक - तन् कृ क्री चुर् धातवः

पुस्तक-3

णिजन्त प्रत्यय

२४. णिजन्त प्रकरण

२५. सन्नन्त प्रकरण

२६. परस्मैपदात्मनेपद प्रकरण

२७. भावकर्म प्रकरण

तद्धित प्रत्यय

२८. अपत्याधिकार प्रकरण

२९. मत्वर्थीय प्रकरण

३०. रक्ताद्यर्थक प्रकरण

३१. ठञधिकारादि प्रकरण

विषय सूची

पुस्तक-2

तिङन्त प्रकरण

१२.	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-१	१
१३.	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-२	२१
१४.	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिट् और लुट् लकार में रूपसिद्धि	३८
१५.	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लृट् और लोट् लकार में रूप सिद्धियाँ	६०
१६.	भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों में रूप सिद्धियाँ	८१
१७.	भ्वादिप्रकरण में - लट् लिट् के सूत्रशेष	१०३
१८.	भ्वादिप्रकरण में - लिट् लकार का सूत्रशेष	१२४
१९.	भ्वादिप्रकरण में - लिङ् लुङ् के सूत्रशेष	१३८
२०.	भ्वादिप्रकरण में आत्मनेपद प्रकरण	१५०
२१.	अदादि से दिवादि तक - अद्, हु, दिव् धातुएं	१७२
२२.	स्वादि से रुधादि तक - सु तुद् रुध धातुएं	१९१
२३.	तनादि से चुरादि तक - तन् कृ क्री चुर् धातुएं	२०९

अध्याय - तिङन्तप्रकरण

भूमिका

व्याकरण का लक्ष्य साधु शब्द का ज्ञान है। साधु शब्द व्याकरण की प्रक्रिया से निष्पादित होता है। व्यवहार योग्य साधु शब्द निष्पन्न होता है तो पद कहलाता है। सुबन्त और तिङन्त ये दो प्रकार के पद होते हैं। प्रातिपदिक से अथवा स्त्रीप्रत्ययान्त से सुप्-प्रत्यय के योग से सुबन्त पद निष्पन्न होता है। धातु से तिङ् प्रत्यय के योग से तिङन्त पद निष्पन्न होता है। धातुपाठ में पठित, सनादि धातु दो प्रकार की होती है। धातु से तिङ् और कृत् इन द्विविध प्रत्ययों का योग होता है। धातु से तिङ् प्रत्यय के योग से तिङन्त पद प्राप्त होता है। धातु से कृत् प्रत्यय के योग से कृदन्त प्रातिपदिक प्राप्त होता है। इस प्रातिपदिक से सुप् प्रत्यय के योग से सुबन्त पद निष्पन्न होता है। इस प्रकार धातु से तिङ् प्रत्यय के योग से तिङन्त, कृत् प्रत्यय के योग, तत्पश्चात् सुप् प्रत्यय के योग से सुबन्त पद प्राप्त होता है। यहाँ से बाद के पाठों में तिङन्त पद को आलोचित किया जायेगा। तिङन्तप्रकरण व्याकरण सम्प्रदाय में दशगणी इस नाम से प्रसिद्ध है।

धातु ही प्रायः सम्पूर्ण सुबन्त और तिङन्तों का मूल है। अतः धातुरूप प्रक्रिया निश्चय ही समझने योग्य है। इस प्रकार प्रक्रिया की दृष्टि से तिङन्त प्रकरण सभी प्रकरणों से कठिन है। सम्यक् ध्यान पूर्वक अध्ययन करते हैं तो तब ही सुगम होगा। आवृत्ति सर्वशास्त्रों के बोध से भी बड़ी है यह अभियुक्तों की उक्ति सदैव स्मरण रखना चाहिए।

इक् और तिप धातु निर्देश होने पर इसका उपयोग धातु के प्रकटन के लिए किया जाता है। बहुत स्थानों पर हलन्त धातु से अकारयोग से धातु लिखा जाता है। वहाँ यह अकार केवल मुखसुखार्थ होता है। अर्थात् अनायास उच्चारण के लिए जोड़ा जाता है। यथा वद् यह हलन्त धातु है। व्रज् यह हलन्त धातु है। परन्तु ''वदव्रजहलन्तस्याचः'' इस सूत्र में दोनों के पर अकार योजित है। और वह मुख सुख के लिए है। यह अन्यत्र भी समझने योग्य है।

सूत्रों का उपन्यास क्रम

यहाँ प्रकरण में सूत्र जिस क्रम से रखे गये हैं,उस क्रम में क्या मान है। अर्थात् उस क्रम से ही उन सूत्रों के यहाँ आने के क्या कारण है। तिङन्तों में सूत्रोपन्यास की दो प्रकार की गति है। धातुक्रम और लकारक्रम।

धातु क्रम

धातुक्रम में एक धातु ग्रहण की जाती है, उसके रूप सिद्ध करने के लिए जिन सूत्रों की आवश्यकता है उन सूत्रों को लट्, लिट्, लुट् इत्यादि लकारों में क्रम से उपस्थापित करते हैं। उस धातु के सभी लकार रूप समाप्त हो तो नवीन धातु ग्रहण की जाती है, उसके रूप सिद्ध करने के लिए जो अनतिक्रान्त सूत्र हैं, वे रखे गये हैं।

यहाँ तिङन्तप्रकरण में धातु चयन काल में भू धातु प्रथम है। अतः आदि में वर्णित है। फिर भी आगे प्रक्रिया सौकर्य के लिए और एक विषय से सम्बद्ध सूत्रों को एक स्थान पर रखने के लिए धातुएं वर्णित हैं।

लकार क्रम

एक ही लकार ग्रहण किया जाता है। उसमें अभीष्ट धातुओं के रूप कैसे होते हैं यह प्रदर्शित किया जाता है। उसके पश्चात् दूसरा लकार ग्रहण किया जाता है। उसमें अभीष्ट धातुओं के रूप प्रदर्शित किए जाते हैं। इस प्रकार क्रम प्रवर्तित होता है। वहां भी गणशः लकार क्रम और सकल धातु लकार क्रम यह दो प्रकार का होता है - **गणशः लकार क्रम** - एक ही लकार ग्रहण होता है। उसमें केवल भ्वादिगणीय धातुओं के रूप प्रदर्शित किए जाते हैं यह एक प्रकार है। **सकल धातु लकार क्रम** इस द्वितीय प्रकार में तो एक लकार ग्रहण किया जाता है। उसमें सभी गणों की धातुओं के रूप प्रदर्शित किए जाते हैं।

इस तिङन्तप्रकरण में धातु क्रम आदरित है। फिर भी सभी सूत्र केवल उस धातु के ही उपस्थापित किए गये हैं ऐसा नहीं है। बहुत स्थानों पर प्रकरण प्रकट के सौकर्य के लिए, विषय का ऐक्य करने के कारण, अथवा एक स्थान पर अध्ययन से विषय के स्फुटबोध के लिए कुछ वहाँ आगे दूसरी धातुओं अथवा प्रकरणों में से आवश्यक अप्रयुक्त सूत्रों को यहाँ लाकर रखा गया है। यथा – आत्मनेपद संज्ञा विधायक सूत्र तो आत्मनेपदप्रकरण में आवश्यक है। परन्तु प्रकरण के ऐक्यवश परस्मैपदप्रकरण में रखा गया है। आत्मनेपद के निमित्त प्रदर्शक सूत्र यथा – अनुदात्तङित आत्मनेपदम् इत्यादि सूत्र तो आत्मनेपदप्रकरण में आवश्यक है।फिर भी विषय के शीघ्र बोध के लिए और प्रकटन में सौकर्य होने के कारण उनको यहाँ रखा गया है।इस प्रकार यद्यपि कोई सूत्र वहाँ प्रसङ्ग में नहीं प्रयोग किया जाता है,फिर भी इन कारणों को मन में धारण कर यहाँ रखा गया है।

इन प्रकरणों के अध्ययनकाल में छात्र यहाँ से पूर्व इस पुस्तक का और दसवीं कक्षा की व्याकरण पुस्तक का अध्ययन समाप्त करके आएँ। यहाँ बहुत सूत्र पूर्वप्रकरणों के आवश्यक हैं।

व्याकरण अध्ययन काल में यहाँ ध्यान देने योग्य है-

बहुत स्थानों पर शास्त्रों में मूल का कण्ठ पाठ भी आवश्यक नहीं हो परन्तु व्याकरण के रूप सिद्ध करने हो तो सूत्रोल्लेख के सामने रूप सिद्ध किए जाते हैं। सूत्र ही लक्षण को कहता है। वह लक्षण जिस शब्द स्वरूप का संस्कार करता है वह शब्दस्वरूप उसका लक्ष्य कहलाता है। अतः व्याकरण के छात्र के द्वारा लक्षण और उसका लक्ष्य भलीभाँति बोध करना चाहिए। लक्षण का अर्थ जानता है, तब ही लक्ष्य का संस्कार करने में समर्थ हो सकता है। अतः लक्षण, अर्थ, लक्ष्य ये तीनों निष्ठा से ज्ञात होने चाहिए। यह ही अयमेव व्याकरण के अध्ययन का मार्ग है। वह ही वैद्य है जो रोग को जानता है और औषध को जानता है और औषध का प्रयोग जानता है। इनमें से एक भी नहीं जानता तो किस प्रकार का वह वैद्य है। इस प्रकार ही वह ही वैयाकरण है जो लक्षण को जानता है, अर्थ को जानता है और लक्ष्य को जानता है और लक्षण से लक्ष्य का संस्कार करता है। अतः लक्षणों का अर्थात सूत्रों का कंठ पाठ अनिवार्य ही है।

12

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-१

पाणिनी मुनि ने अष्टाध्यायी नामक ग्रन्थ लिखा। वहाँ लाघव सम्पादन के लिए धातुपाठ, गणपाठ, नामलिङ्गानुशासन इत्यादि की भी रचना की। धातुपाठ में पठित शब्द धातुएँ कहलाती हैं। उसी प्रकार सूत्र है - भूवादयो धातवः। धातु का अर्थ फल और व्यापार है। उसका आगे विस्तार से वर्णन करेगें। धातु से परे तिङ् और कृत् दो प्रकार के प्रत्ययों का विधान किया जाता है। वहाँ धातु से तिङ् प्रत्यय के विधान से तिङन्त पद निष्पादित होता है। उस प्रकार ही यह तिङन्तप्रकरण प्रकृत में है।

धातु और तिङ् के मध्य में विधीयमान प्रत्यय विकरण कहलाता है। धातुओं के दश विकरण हैं। यथा - शप्, शब्लुक्, शप्श्लु, श्यन्, श, श्नम्, उ, श्ना, शप्। अन्य भी विकरण हैं - स्य तास् च्लि इत्यादि। फिर भी गण के अनुरूप विभाजन का कारण शपादि दश विकरण ही हैं। जिस धातु से शप् विकरण विधान किया जाता है वह धातु प्रथमगण में पाणिनी के द्वारा स्थापित की गई है। उस प्रथमगण की प्रथम धातु तो भू है। अतः भू आदि में है, जिस गणसमूह के वह गण भ्वादिगण है। इस प्रकार जिन धातुओं से शब्लुक् विकरण है, वे धातुएँ द्वितीयगण में स्थापित की गई हैं। उस गण की प्रथम धातु अद् धातु है। अतः अद् आदि में है, जिस गण के वह अदादिगण होता है। इस प्रकार धातुओं के विकरण के अनुसार दश गण हैं। अतएव बहुत स्थानों पर जब धातु का उल्लेख किया जाता है, तब वह किस गण की है यह लिखा जाता है। यथा- भू (भ्वादि, प.प.) - अर्थात् भू धातु भ्वादिगणीय और परस्मैपदी। विकरण ज्ञान के बिना धातु के लट्, लोट्, लङ्, विधिलिङ् इन लकारों में रूप करने में समर्थ नहीं है। अन्य लकारों में विकरण का प्रभाव नहीं है। अतः गणज्ञान के बिना ही उनमें रूप करने में समर्थ है।

इस पाठ में और इसके बाद में नौ पाठों में भ्वादिगणीय धातुओं के ही रूप आलोचित किए गए हैं। भ्वादिगण के प्रायः सभी सूत्र अन्य गणों में धातुओं के रूप सिद्ध करने में अपेक्षित हैं। अतः भ्वादिगण का सम्यग् ज्ञान निश्चय ही अर्जन करना चाहिए।

टिप्पणियाँ

भू धातु से लट् लकार में सभी रूप इसलिए ही अतिविस्तार किए जा रहे है। अतः दो पाठों को एकत्रित करके यहाँ भू धातु के लट् में रूप रखे गए हैं। उसके बाद तीन पाठों में भू धातु के ही अन्य लकारों में रूप रखे गए हैं। इस प्रकार इस प्रकरण के उपयोगी कुछ सूत्र इस पाठ के अंत में दिए गए हैं।

इस प्रकार पांचवें पाठ के बाद भ्वादि प्रकरण के अवशिष्ट मुख्य सूत्र दिए गए हैं।

भू धातु से भवति यह रूप सिद्ध करने के लिए बहुत सूत्रों की आवश्यकता हैं। अतः भवति यह रूप एक स्थान पर प्राप्त नहीं होता है। वह बहुत सूत्रों में व्याप्त है। अतः छात्र के द्वारा वह एकत्र करना चाहिए।

उद्देश्य

इस पाठ को पढकर आप -

- तिङन्तप्रकरण के सूत्र जानेगें;
- धातुरूप सिद्ध करने में समर्थ होगें;
- सूत्रों की व्याख्या करना जानेगें;
- सभी लकारों के अर्थ और रूप जानेगें;
- संस्कृत व्याकरण में कालभेद को जानेगें;
- परस्मैपद और आत्मनेपद क्या है यह जानेगें;
- प्रथम, मध्यम और उत्तम पुरुष को जानेगें;
- सार्वधातुक और आर्धधातुक क्या है यह जानेगें;
- णोपदेश और षोपदेश धातु क्या है यह जानेगें।

भूधातु के लट् लकार में रूप

12.1 लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः॥ (३.४.६९)

सूत्रार्थ - लकार सकर्मक धातुओं से कर्म और कर्ता में हो। अकर्मक धातुओं से भाव और कर्ता में हो।

सूत्रावतरण - सकर्मक धातुओं से कर्म और कर्ता में लकार विधान के लिए, अकर्मक धातुओं से भाव और कर्ता में लकार विधान के लिए यह सूत्र रचा गया है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में छः पद हैं। 'लः कर्मणि च भावे च अकर्मकेभ्यः' यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। लः यह प्रथमाबहुवचनान्त पद है। कर्मणि यह सप्तम्यन्त पद है। च यह अव्ययपद है। भावे यह सप्तम्यन्त पद है। च यह अव्यय पद है। अकर्मकेभ्यः यह पञ्चम्यन्त पद है। यहाँ धातोः यह पञ्चम्यन्त पद अधिकृत है। इस सूत्र में दो वाक्य है। दोनों वाक्यों में चकार से कर्तरि कृत् इस सूत्र से कर्तरि यह सप्तम्यन्त पद लिया गया है।

प्रथम वाक्य - धातोः लः कर्मणि कर्तरि च यह। अकर्मक धातु से कर्म में लकारविधान सम्भव नहीं है। अतः यह सकर्मक धातु विषयक है। उससे लः अर्थात् लकार सकर्मक धातुओं से कर्म और कर्ता में होते हैं,यह प्रथमवाक्य का अर्थ है।

द्वितीय वाक्य - धातोः भावे कर्तरि च अकर्मकेभ्यः यह। धातोः इसका विशेषण अनुरोध से बहुवचनान्त होने से विपरिणाम किया जाता है। अतः अर्थ होता है - अकर्मक धातुओं से भाव और कर्ता में लकार होते हैं। यहाँ भावशब्द का अर्थ क्रिया ही है।

जिस सकर्मक धातु का कर्म वाक्य में नहीं है,वह धातु अविवक्षित कर्म कहलाती है। अतः उस धातु से भी लकार भाव और कर्ता में होते हैं।

लकार का विधान कर्ता, कर्म में और कर्ता, भाव में सम्भव है। धातु से परे कब कर्ता में लकार विधान करना चाहिए अथवा कब कर्म में इत्यादि विवेक तो वक्ता के द्वारा करना चाहिए। वाक्यरचना कर्ता अपनी विवक्षा से ही किस अर्थ में लकार प्रयोग हो यह चिन्तन करता है। अतः विवक्षा ही यहाँ विनिगमना।

कर्तरि लकारः विधीयते इस वाक्य का अर्थ होता है कर्ता अर्थ में लकार विधान किया जाता है। यहाँ कर्तरे, कर्मे, भावे ये सप्तम्यन्त पद हैं। उनके अर्थ तो कर्ता अर्थ, कर्म अर्थ, भाव अर्थ यह होता है। इस प्रकार ही आगे वर्तमाने लट् यहाँ वर्तमान अर्थ में लट् इत्यादि समझना चाहिए।

सकर्मक और अकर्मक धातु

जिस धातु का कर्म सम्भव होता है वह धातु सकर्मक कहलाता है। जिसका कर्म सम्भव नहीं है वह धातु अकर्मक कहलाती है। धातु का फल और व्यापार ये दो अर्थ है। वहाँ व्यापार ही क्रिया है। यह व्यापार फलजनक होता है। अतः फलानुकूल व्यापार कहलाता है। व्यापार का आश्रय एक कारक होता है। फल का आश्रय भी एक कारक होता है। जिस धातु का फल तो एक कारक में है, व्यापार दूसरे कारक में है, वह धातु सकर्मक कहलाती है। जिस धातु का फल जिस कारक में है, उसमें ही व्यापार हो तो वह धातु अकर्मक कहलाती है।

जैसे तक्षा कुठारेण काष्ठं छिनत्ति। इस उदाहरण में कुठार का उद्यमन निपातनरूप व्यापार तक्षा करता है। तक्षन् के विना यह व्यापार नहीं होता है। अतः व्यापारः तक्षन् में है। व्यापार जायमान छेदनरूप फल तो काष्ठ में है। अतः व्यापार तक्षन् में, फल काष्ठ में यह फलव्यापार दोनों का आश्रय भिन्न हैं। अतः छिद् धातु सकर्मक है।

रामः तिष्ठति। यहाँ स्था धातु से गतिनिवृत्ति अर्थ है। गतिविराम फल है। और उसके अनुकूल व्यापार स्थितिरूप है। दोनों ही राम में ही है। अतः फल और व्यापार का आश्रय भिन्न नहीं अपितु राम एक ही है अतः स्थाधातु अकर्मक है।

अकर्मक सकर्मक धातु के विषय में कुछ प्रसिद्ध श्लोक हैं -

कर्तृ-कर्म-क्रिया-युक्तः प्रयोगः स्यात् सकर्मकः।
अकर्मकः कर्मशून्यः कर्मद्वन्द्वो द्विकर्मकः।।

क्रियापदं कर्तृपदेन युक्तं व्यपेक्षन्ते यत्र किमित्यपेक्षाम्।
सकर्मकं तं सुधियो वदन्ति शेषस्ततो धातुरकर्मकः।।

अकर्मकधातुगणः

लज्जा-सत्ता-स्थिति-जागरणं वृद्धि-क्षय-भय-जीवित मरणम्।
शयन-क्रीडा-रुचि-दीप्त्यर्थ धातुगणं तमकर्मकमाहुः।।

कारिका में उक्त अर्थों के वाचक धातु अकर्मक होते हैं।

लकार

ल् इस वर्ण के बाद माहेश्वरसूत्र क्रम से अ इ उ ऋ ए ओ ये छः वर्ण जोड़ने चाहिए। उसके बाद ट् यह वर्ण जोड़ने योग्य है। तब लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट्, लोट् ये छः शब्द प्राप्त होते हैं। ये लकार कहलाते हैं। इनमें अन्तिम टकार हलन्त्यम् इस सूत्र से इत्संज्ञक होता है। अतः ये 'टित् लकार' भी कहलाते हैं।

ल् इस वर्ण के बाद माहेश्वरसूत्र क्रम से अ इ उ ऋ ये चार वर्ण जोड़ने चाहिए। तत्पश्चात् ङ् यह वर्ण जेड़ना चाहिए। तब लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ् ये चार शब्द प्राप्त होते हैं। ये लकार कहलाते हैं। इनमें अन्तिम ङकार हलन्त्यम् इस सूत्र से इत्संज्ञक होता है। अतः ये 'ङित् लकार' भी कहलाते हैं।

टित् छः, ङित् चार इस प्रकार दस लकार होते हैं। उनमें लेट् लकारः वेद में ही प्रयोग किया जाता है। इस पाठ्यक्रम में वैदिक प्रकरण नहीं है। अतः लेट् लकार के रूप प्रदर्शित नहीं किए जाते हैं। अतः नौ लकार शेष रहते हैं। वहाँ भी पुनः लिङ् लकार के विधिलिङ् आशीर्लिङ् ये दो भेद होते हैं। इस प्रकार मिलाकर दस लकार होते हैं।

वह ही यहाँ तालिका में प्रदर्शित करते हैं।

लकारः	अर्थः	विधायकं सूत्रम्
ल् + अ + ट् = लट्	वर्तमान	वर्तमाने लट्
ल् + इ + ट् = लिट्	अनद्यतनपरोक्षभूत	परोक्षे लिट्

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-१

ल् + उ + ट् = लुट्	अनद्यतनभविष्यत	अनद्यतने लुट्
ल् + ऋ + ट् = लृट्	भविष्यत	लृट् शेषे च
ल् + ए + ट् = लेट्	वेदे में ही प्रयुक्त	लिङर्थे लेट्
ल् + ओ + ट् = लोट्	विध्याद्यर्थ में	लोट् च। आशिषि लिङ्लोटौ।
ल् + अ + ङ् = लङ्	अनद्यतनभूत काल में	अनद्यतने लङ्
ल् + इ + ङ् = लिङ्	विध्याद्यर्थ में	विधिनिमन्त्रणामत्रणा धीष्टसंप्रश्न प्रार्थनेषु लिङ्
ल् + इ + ङ् = लिङ्	आशीर्वादार्थ में	आशिषि लिङ्लोटौ
ल् + उ + ङ् + लुङ्	सामान्यभूत काल में	लुङ्
ल् + ऋ + ङ् + लृङ्	क्रियातिपत्ति में	लुङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ। भूते च।

लकारबोधिका कारिका

लट् वर्तमाने लेट् वेदे भूते लुङ्-लङ्-लिटस्तथा।
विध्याशिषास्तु लिङ्लोटौ लुट्-लृट्-लृङ् च भविष्यति।।

उदाहरण

पठ्-धातु **सकर्मक है** - रामः वेदं पठति यहाँ पठ्-धातु से लकार कर्ता में विहित है।

'रामेण वेदः पठ्यते' इस वाक्य में पठ् धातु से लकार कर्म में विहित है।

'रामः तिष्ठति' इस वाक्य में स्थाधातु **अकर्मक है।** उस धातु से लकार कर्ता में विहित है।

'रामेण स्थीयते' इस वाक्य में स्था धातु से लकार भाव में विहित है।

'रामः खादति' इस वाक्य में कर्म उल्लिखित नहीं है। अतः खाद् धातु यहाँ अविवक्षितकर्म है। यहाँ खाद् धातु से लकार कर्ता में विहित है।

'रामेण खाद्यते' इस वाक्य में कर्म का उल्लेख नहीं है। अतः खाद् धातु **अविक्षितकर्मक** है। अतः यहाँ खाद् धातु से लकार भाव में विहित है।

12.2 वर्तमाने लट्॥ (३.२.१२३)

सूत्रार्थ - वर्तमान क्रियावृत्ति धातु से लट् हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। वर्तमाने यह सप्तम्यन्त पद है। लट् यह प्रथमान्त पद है।

टिप्पणियाँ

धातोः यह अधिकृत है। प्रत्ययः (३.१.१), परश्च (३.१.२) दोनों सूत्र यहाँ अधिकृत है।यह सूत्र प्रत्ययाधिकार में पठित है। उस कारण लट् यह प्रत्यय है। धातोः यह पञ्चम्यन्त पद है। तस्मादित्युत्तरस्य इस परिभाषा के प्रभाव से और परश्च इस सूत्र के बल से लट् धातु से अव्यवहित पर विधान होता है। इस प्रकार सूत्रार्थ होता है - वर्तमान अर्थ में विद्यमान धातु से अव्यवहित पर लट् प्रत्यय होता है।

यहाँ यह ध्यान रखने योग्य है - जो भूतकाल नहीं है, जो भविष्यत्काल नहीं है वह वर्तमानकाल है। कोई भी क्रिया बहुत लघुव्यापारों का समुदाय होती है। अर्थात् एक ही क्रिया के अनेक अवयव सम्भव होते हैं। जिस क्रिया का प्रथम अवयव कर लिया गया है परंतु अंतिम अवयव अवशिष्ट है वह क्रिया वर्तमानकालिक क्रिया कहलाती है। 'इनिर्गुण ब्रह्मति'। यथा पाकक्रिया के अनेक अवयव है। तण्डुल शुद्ध करना, पात्र की स्थापना करना, अग्नि जलाना इत्यादि उनमें जो प्रथम अवयव कल्पित है वह यदि कर लिया गया है, किन्तु अन्तिम अवयव यथा अग्निनिर्वाप अथवा पात्र का अवनाम यह यदि अब तक नहीं किया गया है तो पाकक्रिया वर्तमानकालिकी क्रिया है।

धातु का अर्थ व्यापार और फल है यह कहा ही गया है। जिस धातु का अर्थ व्यापार अर्थात क्रिया वर्तमान काल में है वह धातु वर्तमान क्रियावृत्ति कहलाती है। वर्तमाने (काले) क्रियायाः वृत्तिः यस्य स वर्तमानक्रियावृत्तिः धातुः। यदि वर्तमान काल में क्रिया है यह प्रकट करने की विवक्षा है तो धातु से लट् विधान किया जाता है।।

इस प्रकार सूत्र का अर्थ होता है - वर्तमानक्रियावृत्तित्व विवक्षा में धातु से लट् होता है।

लट् इसके टकार का हलन्त्यम् (१.३.३) इस सूत्र से और अकार की उपदेशेऽजनुनासिक इत् (1.3.2) इस सूत्र से इत्संज्ञा होती है। तस्य लोपः इस सूत्र से दोनों का लोप होता है। लशक्वतद्धिते (1.3.8) इस सूत्र से लकार की इत्-संज्ञा प्राप्त है। किन्तु लकार की भी यदि इत् संज्ञा हो तो तस्य लोपः इस सूत्र से लकार का लोप प्रवृत होगा। तब तो लट् इस समग्र का उच्चारण व्यर्थता को प्राप्त होगा। परन्तु पाणिनी मुनि का कोई भी उच्चारण व्यर्थ नहीं है। अतः उच्चारण सामर्थ्य से ल् की इत्संज्ञा नहीं होती है।

उदाहरणम् - पाणिनी मुनि प्रणीत धातुपाठ में भू यह आदि धातु है। उसका अर्थ सत्ता और उत्पत्ति है। सत्ता आत्मधारण और उसके अनुकूल व्यापार है। 'वर्षा भवति' यह उदाहरण है। जब वर्षा का अर्थात् वृष्टि का वर्षणरूप व्यापार वर्तमान काल में होता है, प्रवर्तित होता है, यह विवक्षा है तो भू धातु से लट् लकार विधान किया जाता है 'वर्तमाने लट्' इस सूत्र से। भूधातु अकर्मक है। अतः उससे परे को लकार कर्ता और भाव में होने के लिए योग्य है। तब किस अर्थ में लकार विधान करना चाहिए, यहाँ विवक्षा ही नियामक है। यहाँ दशगणी इस प्रकरण में सदा कर्ता में ही लकार विधान किया जाता है और प्रदर्शित किया जाता है। कर्म और भाव में विधान के लिए आगे भावकर्मप्रकरण है। अतः यहाँ भूधातु से लट् लकार कर्ता में विधान किया जाता है।

लट् इस लकार में अकार और टकार इत्संज्ञक है, यह कहा गया है। पाणिनी मुनि ने लट् यह सूत्र में उच्चारित किया है। अतः लट् उपदेश है। धातु से उत्तर लट् के योजनाकाल में ही अकार

और टकार का लोप करना चाहिए। उससे भू ल् यह स्थिति होती है। कभी भी भू लट् यह स्थिति प्रकट नहीं करना चाहिए।

कालादि विचार

काल के तीन विभाग होते हैं -वर्तमान काल, भविष्यत् काल और भूतकाल। भविष्यत्काल के अद्यतनभविष्यत्काल और अनद्यतनभविष्यत्काल ये दो प्रकार है। भूतकाल के भी अद्यतनभूतकाल और अनद्यतभूतकाल ये दो प्रकार है। सभी भविष्यत्कालिक क्रियाएं भूत अथवा वर्तमान में इन्द्रियगोचर नहीं होती हैं। अत: भविष्यत्कालिक क्रियाएं वर्तमान क्षण में परोक्ष ही होती है। भूतकालिक कुछ क्रियाएं वक्ता को इन्द्रियगोचर होती हैं। और कोई नहीं होती हैं। जिन क्रियाओं का वक्ता इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष होने से स्वयं अनुभव करता है, वे क्रियाएं प्रत्यक्ष होती हैं। जिनका नहीं करता है वे क्रियाएं परोक्ष होती है। अनद्यतनभूतकालिक परोक्ष क्रिया प्रकट करना हो तो उसकी वाचक धातु से लिट् लकार विधान किया जाता है। अनद्यतनभूतकालिक क्रिया प्रकट करने योग्य हो तो उसकी वाचक धातु से लङ् लकार प्रयोग किया जाता है। अतीत कालिक कोई भी क्रिया प्रकट करने योग्य हो तो उसकी वाचक धातु से लुङ् लकार विधान किया जाता है। यदि अद्यतनभविष्यत्कालिक क्रिया प्रकट करने योग्य हो तो लृट् लकार प्रयोग करना चाहिए। यदि अनद्यतनभविष्यत्कालिक क्रिया प्रकट करने योग्य हो तो उसकी वाचक धातु से लुट् लकार प्रयोग किया जाता है।

सभी लकारों के भी कालवाचक और प्रेरणादिवाचक ये दो भाग होते हैं। लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लङ्, लुङ् और लृङ् लकार कालवाचक हैं। लोट् और लिङ् ये दोनों लकारद प्रेरणादिवाचक है। वहाँ लट् वर्तमानकाल का वाचक है। लिट् लङ् और लुङ् भूतकाल के वाचक हैं। लुट् और लृट् ये भविष्यत्काल के वाचक है। लृङ् क्रिया की अनिष्पत्ति में प्रयोग किया जाता है भूत में और भविष्यत् काल में।

यह ही विभाग संक्षेप में नीचे तालिका में प्रदर्शित हैं-

<table>
<tr><th colspan="3">भूतकाल:</th><th>वर्तमान-काल:</th><th colspan="3">भविष्यत्-काल:</th></tr>
<tr><td>अनद्यतन-</td><td rowspan="3">गतरात्रि १२ बजे</td><td>अद्यतन-</td><td rowspan="3">लट्</td><td>अद्यतन-</td><td rowspan="3">आगामिरात्रि १२ बजे</td><td>अनद्यतन-</td></tr>
<tr><td>परोक्ष - लिट्</td><td>लुङ्</td><td>लृट्</td><td>लुट्</td></tr>
<tr><td>लङ्</td><td>सर्वभूते</td><td></td><td></td></tr>
</table>

लकारों का कब और किस अर्थ में प्रयोग हो यह इन दो उप् कारिकाओं में कहा गया है -

वर्तमाने परोक्षे श्वोभाविन्यर्थे भविष्यति।
विध्यादौ प्रार्थनादौ च क्रमाज्ज्ञेया लडादय:।।

टिप्पणियाँ

ह्योभूते प्रेरणादौ च भूतमात्रे लङादयः।
सत्यां क्रियातिपत्तौ च भूते भाविनि लृङ् स्मृतः॥

इस प्रकार भू धातु से कर्तृ विवक्षा में वर्तमाने लट् इस सूत्र से लट् में अनुबन्धलोप होने पर भू-ल् यह स्थिति होती है। तब - (अग्रिम सूत्र में द्रष्टव्य है।)

पाठगत प्रश्न 12.1

1. लः कर्मणि चेति सूत्र में वाक्यद्वय कौन से है?
2. सकर्मक धातु का लक्षण क्या है?
3. अकर्मकधातु का लक्षण क्या है?
4. कितने लकार होते हैं?
5. कितने टित् लकार हैं?
6. कितने ङित् लकार हैं?
7. कौनसा लकार वेद में ही प्रयुक्त होता है?
8. कौन सी धातु वर्तमान क्रियावृत्ति कहलाती है?
9. धातुपाठ में प्रथम धातु कौन सी है?
10. जिस धातु का अर्थ व्यापार वर्तमान काल में है इस को प्रकट करने के लिए उस धातु से परे कौन सा लकार विधान किया जाता है। और किस सूत्र से?

12.3 तिप्तस्झि-सिपथस्थ-मिब्वसमस्-तातञ्झ-थासाथांध्वमिड्वहिमहिङ्॥ (३.४.७८)

सूत्रार्थ - तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि और महिङ् ये अट्ठारह लकार के स्थान पर आदेश हो।

सूत्रव्याख्या - यह सूत्र विधिसूत्र है। इस सूत्र में एक ही पद है तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस्-त-आताम्-झ-थास्-आथाम्-ध्वम्-इट्-वहि-महिङ् यह प्रथमान्त पद है। इस पद में १८ शब्द स्वरूप हैं। यहाँ समाहारद्वन्द्वसमास है। अतः एकवचन है। लस्य यह षष्ठ्यन्त पद अधिकृत है। यह स्थान षष्ठी है। अतः लकार के स्थान पर यह अर्थ प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ होता है-तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि और महिङ् ये अठ्ठारह लकार के स्थान पर आदेश हो। यह सूत्र प्रत्ययाधिकार में पढ़ा गया है। इस

कारण ये शब्दस्वरूप प्रत्यय संज्ञक होते हैं। स्थान पर जो विधीयमान है वह आदेश कहलाता है। अतः ये १८ आदेश हैं। और ये लकार के स्थान पर विधान किए जाते हैं। अतः ये लादेश कहलाते हैं। महिङ् इस अन्तिमप्रत्यय ङ् इसके साथ तिप् इस प्रथमप्रत्यय का ति यह उच्चारित होकर तिङ् यह प्रत्याहार होता है। वह सभी १८ प्रत्ययों का बोधक होता है। यह ही तिङ् अन्त में है जिससे वह तत् तिङन्त पद होता है।

उदाहरण - भू ल् यह स्थिति पूर्व में वर्णित है। यहाँ ल के स्थान पर १८ आदेश प्रकृतसूत्र से विधान किए जाते हैं। और वे धातु से बिना व्यवधान के ही रखने चाहिए। भू धातु से परे लकार के स्थान पर एक बार में एक ही आदेश निवेश करने में समर्थ हैं। एक ही समय पर १८ प्रत्यय और अव्यवहितपर यह सम्भव नहीं है। अतः एकसाथ १८ प्रत्यय प्रयोग करने योग्य नहीं हैं, परन्तु एक,एक पर्याय से प्रयोग कर सकते हैं। तब कौनसा प्रत्यय किस प्रयोजन के लिए प्रयोग करना चाहिए इस विवेक के लिए अग्रिम सूत्र आते हैं।

12.4 लः परस्मैपदम्॥ (१.४.९८)

सूत्रार्थ - लादेश परस्मैपदसंज्ञक हो।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञासूत्र है। इसमें दो पद हैं। लः (६/१), परस्मैपदम् (१/१)। लः यह सम्बन्ध के अनुयोगिविरह होने से स्थान षष्ठी है।उससे लस्य स्थाने यह प्राप्त होता है। स्थान में आदेश होते हैं। अतः आदेशाः इस पद का अध्याहार किया जाता है। सूत्रार्थ होता है - 'लादेश परस्मैपदसंज्ञक' होते हैं। अर्थात् लकार के स्थान पर तिप्तस्झि-सिपथस्थ-मिब्वस्मस्-तातञ्झ-थासाथांध्वम्-इड्वहिमहिङ्। (३.४.७८) इस सूत्र से प्राप्त १८ आदेश परस्मैपदसंज्ञा को प्राप्त करते हैं।

12.5 तङानावात्मनेपदम्॥ (१.४.९९

सूत्रार्थ - तङ् प्रत्याहार, शानच् और कानच् आत्मनेपदसंज्ञक हो।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञासूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। तङानौ (१/२), आत्मनेपदम् (१/१)। लः परस्मैपदम् इस सूत्र से लः यह षष्ठ्येकवचनान्त पद अनुवर्तित होता है। लः यहाँ स्थान षष्ठी है। अतः लस्य स्थाने यह अर्थ प्राप्त होता है।

तङ् च आनः च तङानौ इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। तङ् इति प्रत्याहारः। तिप्तस्झि-सिप्थस्थ-मिब्वस्मस्-तातञ्झ-थासाथांध्वम्-इड्वहिमहिङ्। (३.४.७८) इस सूत्र में तातञ्झ यहाँ त, आताम्, झ यह विच्छेद है। यहाँ त यह प्रत्यय है। वह महिङ् इस अन्तिमप्रत्यय के अन्त इत् ङकार के साथ उच्चारित हो तो तङ् यह प्रत्याहार निष्पन्न होता है। उसका अर्थ है - त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि और महिङ् ये नौ प्रत्यय।

आनः इस पद में आन यह अंश है। तदात्मक जो प्रत्यय है वह आन इस शब्द से बोध्य है। व्याकरण में शानच्, कानच् और चानश् ये तीन प्रत्यय होते हैं। इनमें आन यह अंश है। वहाँ शानच्, कानच् ये दोनों ही धातु से विधान किए जाते हैं। चानश् तद्धितप्रत्यय है, अतः धातु से विधान नहीं किया

जाता है। वह ल के स्थान पर नहीं विधान किया जाता है। शानच् कानच् ये दोनों ही ल के स्थान पर विधान किए जाते हैं। अत: आन इससे शानच् और कानच् ये दोनों यहाँ ग्रहण किए जाते हैं। परन्तु सूत्र में आन यह कहा गया है। यहाँ प्रत्यय तो शानच् और कानच् है। आन इससे इन दोनों का ग्रहण कैसे हुआ। वहाँ कहा जाता है कि आन यह अनुबन्धरहित उच्चारण है। जब अनुबन्धरहित का उच्चारण किया जाता है तब अनुबन्धसहित का ग्रहण करना चाहिए। वैसे ही परिभाषा है - 'निरनुबन्धकग्रहणे सानुबन्धकस्य' इति।

सूत्रार्थ होता है - ल के स्थान पर होने वाला तङ् प्रत्याहार शानच् और कानचौ आत्मनेपदसंज्ञक हो। तिङ् प्रत्याहार में तङ् अन्तर्भूत है। तिङों की परस्मैपदसंज्ञा विहित ही है। उनमें से नौ तङों की इस प्रकृतसूत्र से आत्मनेपदसंज्ञा प्राप्त हुई। आकडारादेका संज्ञा इसके अधिकार में ये सूत्र हैं। अत: पूर्वसंज्ञा को बाधकर प्रकृत सूत्र से तङ् की आत्मनेपदसंज्ञा विधान होती है। और शेष होने से तिप्, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस् इन नौ की परस्मैपदसंज्ञा होती है। त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इट्, वहि, महिङ् इन नौ और शानच् और कानच् इन दोनों की आत्मनेपद संज्ञा होती है।

जो जो संज्ञा वह वह फलवती होती है। अत: की गई आत्मनेपद आदि संज्ञाओं का फल क्या है इस निर्णय के लिए अग्रिम तीन सूत्र आते हैं।

पाठगत प्रश्न 12.2

1. लादेश कितने और कौन से हैं?
2. किनकी परस्मैपद संज्ञा होती है?
3. किनकी आत्मनेपद संज्ञा होती है?
4. परस्मैपद संज्ञा विधायक सूत्र कौन सा है?
5. आत्मनेपद संज्ञा विधायक सूत्र कौन सा है?
6. निरनुबन्धकग्रहणे सानुबन्धकस्य इस परिभाषा का अर्थ क्या है?

12.6 अनुदात्तङित आत्मनेपदम्॥ (१.३.१२)

सूत्रार्थ - अनुदात्त इत् और ङित् धातु से आत्मनेपद हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। यह सूत्र आत्मनेपदसंज्ञक प्रत्ययों का धातु से विधान करता है। इस सूत्र में दो पद है। अनुदात्तङित: आत्मनेपदम् यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। अनुदात्तङित: (५/१), आत्मनेपदम् (१/१)। भूवादयो धातव: इस सूत्र से धातव: यह पद अनुवर्तित होता है।उसका पञ्चम्यन्त रूप से विपरिणाम होता है।उससे धातो: यह प्राप्त होता है। अनुदात्तश्च ङ् च इति

अनुदात्तङौ यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। अनुदात्तङौ इतौ यस्य सः अनुदात्तङित्। तस्य अनुदात्तङितः इति। **द्वन्द्वादौ द्वन्द्वमध्ये द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणं पदं प्रत्येकमभिसंबध्यते** यह नियम है। अर्थात् द्वन्द्वसमास के आदि में, मध्य में अथवा अन्त में विद्यमान द्वन्द्वसमास का प्रत्येक अनङ्गभूत पद द्वन्द्वसमास में विद्यमान पदों से अभिसम्बन्धित रहता है, अन्वित होता है। इत् यह पद द्वन्द्वसमास का अवयव नहीं है, किन्तु द्वन्द्वसमास के अन्त में है। अतः उसका अनुदात्त और ङ् इन दोनों शब्दों से अभिसम्बन्ध अर्थात् अन्वय होता है। और अनुदात्तेत् यह और ङित् यह निष्पन्न होते हैं। ल के स्थान पर तिङ् विधान किया जाता है। आत्मनेपद तिङ् ही है। अतः लस्य यह षष्ठ्येकवचनान्त पद आक्षिप्त होता है। तब पदयोजना है - अनुदात्तेतः ङितः च धातोः लस्य आत्मनेपदम् इति। सूत्र का अर्थ होता है - अनुदात्तेत् और ङित् धातु से लकार के स्थान पर आत्मनेपद विधान होता है। अर्थात् जिस धातु का अनुदात्त अच् इत् है वह अनुदात्तेत्, जिस धातु का ङकार इत् है वह ङित्। इस प्रकार अनुदात्तेत् ङित् यदि धातु हो तो उससे परे के ल के स्थान पर आत्मनेपद नामक प्रत्यय आदेश रूप से विधान किए जाने चाहिए।

उदाहरण - एधँ वृद्धौ। कमुँ कान्तौ। यतीँ प्रयत्ने इत्यादि अनुदात्तेत् धातुएं हैं। शीङ् स्वप्ने इत्यादि ङित् धातुएं हैं। अनुदात्तेत्त्वम् ङित्त्वम् यह इस प्रकार के आत्मनेपदविधान के धातु में विद्यमान निमित्त हैं। इस प्रकार की धातुओं से आत्मनेपदनामक प्रत्यय विधान किए जाने चाहिए।

12.7 स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले॥ (१.३.७२)

सूत्रार्थ - स्वरितेत् और ञित् धातु से आत्मनेपद हो, कर्तृगामी क्रियाफल होने पर।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से आत्मनेपद विधान किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद है। स्वरितञितः (५/१), कर्त्रभिप्राये और क्रियाफले ये दो पद सप्तम्यन्त है।

अनुदात्तङित आत्मनेपदम् इस सूत्र से आत्मनेपद यह पद अनुवर्तित होता है। भूवादयो धातवः इस सूत्र से धातवः यह पद अनुवर्तित होता है। उसका पञ्चम्यन्त रूप से विपरिणाम होता है। उससे धातोः यह प्राप्त होता है। स्वरितः च ञ् च इति स्वरितञौ यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। स्वरितञौ इतौ यस्य स स्वरितञित् इति बहुव्रीहिसमास है। तस्य स्वरितञितः इति। **द्वन्द्वादौ द्वन्द्वमध्ये द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणं पदं प्रत्येकमभिसंबध्यते** यह नियम है।अर्थात् द्वन्द्वसमास के आदि में, मध्य में अथवा अन्त में विद्यमान द्वन्द्वसमास का प्रत्येक अनङ्गभूत पद द्वन्द्वसमास में विद्यमान पदों से अभिसम्बन्धित रहता है, अन्वित होता है। इत् यह पद द्वन्द्वसमास का अवयव नहीं है, किन्तु द्वन्द्वसमास के अन्त में है। अतः उसका स्वरित और ञ् इन दोनों शब्दों से अभिसम्बन्ध अर्थात् अन्वय होता है। इस प्रकार स्वरितेत् यह और ञित् यह निष्पन्न होते हैं।

कर्तारं अभिप्रैति (गच्छति) इति कर्त्रभिप्रायम् (फलम्)। तस्मिन् कर्त्रभिप्राये। क्रियायाः फलं क्रियाफलम्। तस्मिन् क्रियाफले यह षष्ठीतत्पुरुष समास है। पदयोजना होती है - स्वरितेतः ञितः धातोः आत्मनेपदं भवति कर्त्रभिप्राये क्रियाफले। क्रिया के फल को कर्ता प्राप्त करता है तो इस प्रकार की धातु से आत्मनेपद विधान करना चाहिए। यहाँ क्रिया का व्यापार और फल ये दो अर्थ ही कह गये हैं। परन्तु यह फल यहाँ अभिप्रेत नहीं है। क्योकिं इस फल का आश्रय कर्म यह

टिप्पणियाँ

कहा जाता है। यदि यह फल कर्ता को जाता है तो कर्ता की कर्मसंज्ञापत्ति है। अत: जिस प्रयोजन को उद्देश्य कर क्रिया आरम्भ की जाती है, वह फल ही यहाँ फलपद से ग्रहण करना चाहिए। यथा 'स्वर्गादिलाभाय याग: आरभ्यते'। परन्तु पुरोहित तो दक्षिणा लाभ के लिए याग करता है। यजमान का स्वर्ग फल है। पुरोहित का दक्षिणा फल है। यहाँ स्वर्ग ही फल फलपद से ग्रहण करने योग्य है। यहाँ स्वर्ग फल यदि यज्ञकर्ता को ही प्राप्त होता है तो यह कर्त्रभिप्राय क्रियाफल है। इस प्रकार होने से यज् धातु से आत्मनेपद का विधान होता है।

ल के स्थान पर तिङ् विधान किया जाता है। आत्मनेपद तिङ् ही है। अत: लस्य यह षष्ठ्येकवचनान्त पद आक्षिप्त किया जाता है। सूत्र का अर्थ होता है - स्वरितेत् और ञित् धातु से ल के स्थान पर आत्मनेपद विधान किया जाता है, कर्तृगामी क्रियाफल होने पर अर्थात् जिस धातु का स्वरित अच् इत् है वह स्वरितेत्, जिस धातु का ञकार इत् है वह ञित्। इस प्रकार स्वरितेत् अथवा ञित् यदि धातु हो तो उससे परे ल के स्थान पर आत्मनेपद नामक प्रत्यय आदेश रूप से विधान करने चाहिए। यदि क्रिया का फल कर्ता प्राप्त करता है।

उदाहरण - डुपचँष्स् पाके, यजँ देवपूजासंगतिकरणदानेषु इत्यादि स्वरितेत् धातुएं हैं। डुकृञ् करणे णीञ् प्रापणे इत्यादि ञित् धातुएं हैं। यजँ यहाँ अँकार अनुनासिक है। अत: उपदेशेऽजनुनासिक इत् इस सूत्र से इत्संज्ञक होता है। और वह अँकार स्वरित भी है। अत: यज् धातु स्वरितेत् है। इस प्रकार ही अन्यत्र भी है।इस प्रकार के आत्मनेपदविधान के धातु में विद्यमान निमित्त हैं। इस प्रकार की धातुओं से आत्मनेपदनामक प्रत्यय विधान किए जाने चाहिए।

12.8 शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्॥ (१.३.७८)

सूत्रार्थ - आत्मनेपदनिमित्तहीन धातु से कर्ता में परस्मैपद हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से परस्मैपद की विधि की जाती है। इसमें तीन पद हैं। शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। शेषात् (५/१), कर्तरि (७/१), परस्मैपदम् (१/१)। कह गये से अन्य शेष है। क्या क्या कहा गया है। आत्मनेपदप्रत्यय के विधान के निमित्त कहे गये हैं। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् (१.३.१२) इस सूत्र से आरम्भ करके विभाषोपपदेन प्रतीयमाने (१.३.७७) इस सूत्र तक आत्मनेपद प्रत्ययविधान के बहुत निमित्त कहे गये हैं। वे निमित्त जिस धातु से नहीं हैं वह धातु आत्मनेपद निमित्त से हीन है। वह ही शेष है। इस प्रकार आत्मनेपद निमित्त हीन धातु से यहाँ परस्मैपदसंज्ञक तिङ् विधान किया जाता है। परस्मैपद तिङ् ही है। अत: लस्य यह षष्ठ्येकवचनान्त पद आक्षिप्त होता है। और इस प्रकार की आत्मनेपदनिमित्तहीन धातुओं से ल के स्थान पर कर्ता अर्थ में परस्मैपद का विधान प्रकृत सूत्र करता है। सूत्र का अर्थ होता है - आत्मनेपदनिमित्तहीन धातु से परे ल के स्थान पर कर्ता में परस्मैपद हो।

उदाहरण - भू इस धातु में आत्मनेपद का कोई भी निमित्त नहीं है। अत: भू धातु आत्मनेपद निमित्तहीन है। अत: शेष है। अतएव भू धातु से परे ल के स्थान पर परस्मैपद कर्ता अर्थ में विधान किया जाता है।

यहाँ धातु से परे ल के स्थान पर ९ परस्मैपदसंज्ञक आदेश प्रकृतसूत्र से विधान किए जाते हैं। और वे अव्यवहित परे ही रखने योग्य हैं। धातु से पर ल के स्थान पर एक बार में एक ही आदेश रख सकते है। एककाल में ९ प्रत्यय और अव्यवहितपर यह तो सम्भव नहीं है। अतः एकसाथ ९ प्रत्यय प्रयोग नहीं कर सकते हैं। परन्तु एक एक पर्याय से प्रयोग कर सकते है। तब कौन सा प्रत्यय किस प्रयोजन के लिए प्रयोग करना चाहिए इस विवेक के लिए अग्रिम सूत्र प्रस्तुत हैं।

12.9 तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः॥ (१.४.१००)

सूत्रार्थ - तिङ् के आत्मनेपद और परस्मैपद के तीन त्रिक् क्रम से प्रथम, मध्यम,उत्तम संज्ञक हो।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञासूत्र है। इस सूत्र से प्रथम, मध्यम, उत्तम यह तीन संज्ञाएं विधान की जाती हैं। यहाँ सूत्र में चार पद हैं। तिङः त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। तिङः (६/१), त्रीणि (१/३), त्रीणि (१/३), प्रथममध्यमोत्तमाः (१/३)। लः परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपदम् यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित है। और षष्ठ्यन्त रूप में विपरिणाम होता है। तङानावात्मनेपदम् इस सूत्र से आत्मनेपदम् यह पद अनुवर्तित होता है। और षष्ठ्यन्त रूप में विपरिणाम होता है। प्रथमः च मध्यमः च उत्तमः चेति प्रथममध्यमोत्तमाः यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। तब पदयोजना होती है - तिङः परस्मैपदस्य आत्मनेपदस्य त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः इति।

परस्मैपद के तीन प्रत्ययों का एक दल होता है, इस क्रम से तीन दल होते हैं। प्रथम, मध्यम, उत्तम ये तीन संज्ञाएं हैं। अतः जिनकी संज्ञा करने योग्य हैं, वे तीन हैं और संज्ञाएं भी तीन हैं। अतः 'यथासंख्यमनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से प्रथमदल की प्रथम संज्ञा। द्वितीयदल की मध्यम संज्ञा। तृतीयदल की उत्तम संज्ञा। और उसी प्रकार तिप्, तस्, झि इसकी प्रथम संज्ञा। सिप्, थस्, थ इसकी मध्यम संज्ञा। मिप् वस् मस् इस दल की उत्तम संज्ञा।

आत्मनेपद का भी तीन प्रत्ययों का एक दल होता है, इस क्रम से तीन दल होते हैं। प्रथम, मध्यम, उत्तम ये तीन संज्ञाएं हैं। अतः जिनकी संज्ञा करने योग्य है, वे तीन हैं, और संज्ञाएं भी तीन हैं। अतः यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से प्रथमदल की प्रथम संज्ञा। द्वितीयदल की मध्यम संज्ञा। तृतीयदल की उत्तम संज्ञा। और उसी प्रकार- आताम् झ इस दल की प्रथम संज्ञा। थास्, आथाम्, ध्वम्, इ दल की मध्यम संज्ञा। इट् वहि महिङ् इस दल की उत्तमः संज्ञा।

नीचे संज्ञाविभाग प्रदर्शित किया गया है।

दलम्	परस्मैपदम्		
प्रथमदलम्	तिप्	तस्	झि
द्वितीयदलम्	सिप्	थस्	थ
तृतीयदलम्	मिप्	वस्	मस्

आत्मनेपदम्			संज्ञा
त	आताम्	झ	प्रथमः
थास्	आथाम्	ध्वम्	मध्यमः
इट्	वहि	महिङ्	उत्तमः

12.10 तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः॥ (१.४.१०१)

सूत्रार्थ - प्रथम, मध्यम, उत्तमसंज्ञक तिङ् के तीन तीन वचन प्रत्येक एकवचन, द्विवचन,बहुवचन संज्ञक होते हैं।

सूत्रव्याख्या - षड्विध पाणिनीय सूत्रों में यह संज्ञासूत्र है। इस सूत्र से प्रथम, मध्यम, उत्तम प्रत्ययों की प्रत्येक एकवचन, द्विवचन, बहुवचन संज्ञाएं विधान की जाती है। इस सूत्र में तीन पद है। तानि (१/३), एकवचनद्विवचनबहुवचनानि (१/३) एकवचनम्, द्विवचनम्, बहुवचनञ्चेति एकवचन द्विवचन बहुवचनानि यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। और एकशः यह अव्यय है। एकशः इसका अर्थ है- प्रत्येक। तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः इस सूत्र से तिङः यह षष्ठ्येकवचनान्त पद और त्रीणि त्रीणि ये प्रथमाबहुवचनान्त दो पद अनुवर्तित है। सूत्रस्थ तानि इस शब्द से तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः इस पूर्वसूत्र में स्थित त्रीणि त्रीणि का अर्थ ग्रहण किया जाता है। उन तीन तीन दलों को मिलाकर छः दल हैं। प्रत्येक दल में विद्यमान तीनों घटकों में एक एक की क्रमशः एकवचनम्, द्विवचन और बहुवचन संज्ञाएं होती हैं।

इस प्रकार यह सार है -

परस्मैपद का प्रथम दल है तिप् तस् झि। इनमें तिप् इसकी एकवचन, तस् इसकी द्विवचनम् और झि इसकी बहुवचन संज्ञा होती है।

तिङः त्रीणि त्रीणि यहाँ त्रीणि इस पद के दो बार ग्रहण से परस्मैपद तथा आत्मनेपद तिङ् के दोनों पदों का ग्रहण होता है। इसी प्रकार आगे भी।

किसकी कौनसी संज्ञा होती है यह नीचे प्रदर्शित किया गया है।

	परस्मैपदम्			आत्मनेपदम्			संज्ञा
	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	
प्रथमदलम्	तिप्	तस्	झि	त	आताम्	झ	प्रथमः
द्वितीयदलम्	सिप्	थस्	थ	थास्	आथाम्	ध्वम्	मध्यमः
तृतीयदलम्	मिप्	वस्	मस्	इट्	वहि	महिङ्	उत्तमः

पाठगत प्रश्न 12.3

1. अनुदात्तेत् धातु से कौन सा तिङ् विधान किया जाता है?
2. ङित् धातु से कौन सा तिङ् विधान किया जाता है?
3. आत्मनेपदविधान के निमित्त भ्वादिप्रकरण में कौन से उल्लेखित है?

4. 'द्वन्द्वादौ द्वन्द्वमध्ये द्वन्द्वान्ते श्रूयमाणं पदं प्रत्येकमभिसंबध्यते' इसका अर्थ लिखिए।
5. आत्मनेपद किसके स्थान पर विधान किया जाता है?
6. आत्मनेपदविधान के निमित कौनसे है भ्वादिप्रकरण में?
7. ञित् धातु से आत्मनेपद कब विधान किया जाता है?
8. अनुदात्तेत् धातु का उदाहरण क्या है?
9. शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् यहाँ शेषपदार्थ क्या है?
10. प्रथम संज्ञा विधायक सूत्र कौन सा है?
11. तिङों की एकवचनादि संज्ञा किस सूत्र से होती है?

12.11 युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः॥ (१.४.१०४)

सूत्रार्थ - लकारवाच्यकारकवाची युष्मद् उपपद में रहते प्रयुज्यमान और अप्रयुज्यमान होने पर मध्यम हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से मध्यम विधान किया जाता है। इस सूत्र में छः पद हैं। युष्मदि (७/१), उपपदे (७/१), समानाधिकरणे (७/१) स्थानिनि (७/१), अपि (अव्ययम्), मध्यमः (१/१)। उप समीपे उच्चारितं पदम् उपपदम्। तस्मिन् उपपदे, समीप उच्चारित होने पर यह उसका अर्थ है। समानम् अधिकरणम् (वाच्यम्) यस्य तत् समानाधिकरणम्। तस्मिन् समानाधिकरणे। समानार्थक होने पर यह उसका अर्थ है। स्थान प्रसङ्ग है। सोऽस्ति अस्य इति स्थानी, तस्मिन् स्थानिनि। और इसका अप्रयुज्यमान होने पर यह अर्थ है। सूत्र में विद्यमान अपि पद से प्रयुज्यमान होने पर यह अर्थ प्राप्त होता है। लः परस्मैपदम् इस सूत्र से लः यह षष्ठ्यन्त पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है - लकारसमानार्थक समीपोच्चारित प्रयुज्यमान अथवा अप्रयुज्यमान युष्मद् पर में होने पर लकार के स्थान पर मध्यम होता है।

यहाँ यह स्पष्ट करने योग्य है -

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र से धातु से लकार विहित होता है। और क्रमशः वर्तमाने लट् इस सूत्र से लट् विहित होता है। तब भू ल् यह स्थिति उत्पन्न होती है। यहाँ लकार विवक्षा से कर्ता में विहित है यह भी शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इससे स्पष्ट है। लकार के स्थान पर जो तिङ् विधेय है वह भी लकार के समान कर्ता में ही होगा। अतः यह स्पष्ट है कि तिङ् कर्ता में विधान होगा। अतः लकार का (तिङ् का) वाच्य कारक कर्तृकारक है, यह स्पष्ट है। भू धातु का प्रयोग जिस वाक्य में होगा उसमें यदि युष्मद् इस सर्वनाम का प्रयोग कर्तृकारक में अर्थात् युष्मद् का वाच्य कर्ता हो तब भू धातु से मध्यमसंज्ञक तिङ् विधान करने योग्य है, यह अर्थ है।

इस प्रकार वाक्य में प्रयुक्त युष्मद् का वाच्य कारक,और धातु से पर विहित लकार का वाच्य कारक यदि समान हो तो धातु से पर मध्यमसंज्ञक प्रत्यय विधान करना चाहिए यह सूत्र का अर्थ है।

टिप्पणियाँ

युष्मदः वाच्यमेव लस्य वाच्यं इसका अर्थ युष्मद् का जो अधिकरण है (अर्थ, वाच्य) वह ही अधिकरण लकार का भी है। अर्थात् युष्मद् लकार का समानाधिकरण है। उन दोनों का सामानाधिकरण्य है। उन दोनों का वाच्य व कारक समान है। दोनों का अर्थ समान है। अतः युष्मद् व लकारसमानार्थक है। तब मध्यमसंज्ञक सिप्, थस्, थ ये परस्मैपद से, थास्, आथाम्, ध्वम् ये आत्मेनपद से विधान करना चाहिए यह अर्थ है। और यदि युष्मद् का साक्षात् उल्लेख वाक्यों में हो अथवा साक्षात् उल्लेख न हो, परन्तु उसका अर्थ प्रतीत होता है, तब भी मध्यम विधान किया जाता है।

उदाहरण - त्वं खादसि।

सूत्रार्थसमन्वय - यथा - त्वम् खाद् ल् यह वाक्य करने योग्य है। यहाँ लकार कर्ता में विवक्षित है। युष्मद् के रूप त्वम् इसका अर्थ भी कर्ता में ही विवक्षित है। युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य है। अतः लकार के स्थान पर मध्यमसंज्ञक प्रत्यय विधान करना चाहिए। तब त्वं खादसि यह वाक्य होगा।

और (युष्मद्) खाद् ल् यह वाक्य करने योग्य है। यहाँ लकार कर्म में विवक्षित है। युष्मद् का रूप प्रयोग करने योग्य है। उसका अर्थ भी कर्ता ही विवक्षित है। दोनों का अर्थ भिन्न है। इस प्रकार युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य नहीं है। अतः ल के स्थान पर मध्यमसंज्ञक प्रत्यय का विधान नहीं किया जा सकता।

12.12 अस्मद्युत्तमः॥ (१.४.१०६)

सूत्रार्थ - अस्मद् और लकार समानाधिकरण हो तो अस्मद् प्रयुज्यमान अथवा अप्रयुज्यमान होने पर उत्तम हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से उत्तम का विधान किया जाता है।इस सूत्र में दो पद है। अस्मदि (७/१), उत्तमः (१/१)। युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः इस सूत्र से उपपदे (७/१), समानाधिकरणे (७/१) स्थानिनि (७/१), अपि (अव्ययम्) ये सभी पद अनुवर्तित किए गए हैं। उप समीपे उच्चारितं पदम् उपपदम्। तस्मिन् उपपदे, समीप उच्चारित होने पर यह उसका अर्थ है। समानम् अधिकरणम् (वाच्यम्) यस्य तत् समानाधिकरणम्। तस्मिन् समानाधिकरणे। समानार्थक होने पर यह उसका अर्थ है। स्थान प्रसङ्ग है। सोऽस्ति अस्य इति स्थानी, तस्मिन् स्थानिनि। और इसका अप्रयुज्यमान होने पर यह अर्थ है। सूत्र में विद्यमान अपि पद से प्रयुज्यमान होने पर यह अर्थ प्राप्त होता है। लः परस्मैपदम् इस सूत्र से लः यह षष्ठ्यन्त पद अनुवर्तित होता है। अतः सूत्रार्थ होता है - लकारसमानार्थक समीपोच्चारित प्रयुज्यमान अथवा अप्रयुज्यमान होने पर अस्मद् में लकार के स्थान पर उत्तम होता है।

सूत्रार्थ का स्पष्टीकरण

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र से धातु से लकार विहित होता है। और क्रमशः वर्तमाने लट् इस सूत्र से लट् विहित होता है। तब भू ल् यह स्थिति उत्पन्न होती है। यहाँ लकार विवक्षा

से कर्ता में विहित है यह भी शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इससे स्पष्ट है। लकार के स्थान पर जो तिङ् विधेय है वह भी लकार के समान कर्ता में ही होगा। अतः यह स्पष्ट है कि तिङ् कर्ता में विधान होगा। अतः ल का (तिङ् का) वाच्य कारक कर्तृकारक है, यह स्पष्ट है। भू धातु का प्रयोग जिस वाक्य में होगा उसमें यदि अस्मद् इस सर्वनाम का प्रयोग कर्तृकारक में अर्थात् अस्मद् का वाच्य कर्ता हो। तब भू धातु से उत्तमसंज्ञक तिङ् विधान करना चाहिए।

इस प्रकार वाक्य में प्रयुक्त अस्मद् का वाच्य कारक, और धातु से परे विहित लकार का वाच्य कारक यदि समान हो तो धातु से परे उत्तमसंज्ञक प्रत्यय विधान करना चाहिए यह सूत्र का अर्थ है। अस्मदः वाच्यमेव लस्य वाच्यं इसका अर्थ अस्मद् का जो अधिकरण है (अर्थ, वाच्य) वह ही अधिकरण ल का भी है। अर्थात् अस्मद् ल का समानाधिकरण है। उन दोनों का सामानाधिकरण्य है। उन दोनों का वाच्य व कारक समान है। दोनों का अर्थ समान है। अतः अस्मद् व लकारसमानार्थक है। तब उत्तमसंज्ञक मिप्, वस्, मस् ये परस्मैपद से, इङ्, वहि महिङ् ये आत्मेनपद से विधान करना चाहिए यह अर्थ है। और यदि अस्मद् का साक्षात् उल्लेख वाक्यों में हो अथवा साक्षात् उल्लेख न हो, परन्तु उसका अर्थ प्रतीत होता है, तब भी उत्तम विधान किया जाता है।

उदाहरण - अहं खादामि।

सूत्रार्थसमन्वय - यथा - अहम् खाद् ल् यह वाक्य करने योग्य है। यहाँ लकार कर्ता में विवक्षित यह। अस्मद् के रूप अहम् इसका अर्थ भी कर्ता ही विवक्षित यह। अस्मद् का और ल का सामानाधिकरण्य है। अतः ल के स्थान पर उत्तमसंज्ञक प्रत्यय विधान करना चाहिए। तब अहं खादामि यह वाक्य होगा।

12.13 शेषे प्रथमः॥ (१.४.१०७)

सूत्रार्थ - मध्यम और उत्तम का अविषय होने पर धातु से प्रथम हो।

सूत्रव्याख्या - छः प्रकार के पाणिनीय सूत्रों में से यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। वहाँ शेषे यह सप्तम्येकवचनान्त पद है। और प्रथमः यह च प्रथमैकवचनान्त पद है। उक्त से अन्य शेष है। मध्यम और उत्तम का विषय उक्त है। अतः उक्त मध्यम और उत्तम के विषय से भिन्न शेष कहलाता है।

वस्तुतः क्या उक्त है। और क्या शेष है। युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य हो तो धातु से मध्यम विधान किए जाने योग्य है। अस्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य हो तो धातु से उत्तम विधान किए जाने योग्य है, यह हमने कहा। तत्पश्चात् अन्य इसका अर्थ इस प्रकार है कि उक्त दोनों सामानाधिकरण्य नहीं हो तो धातु से प्रथमसंज्ञक विधान किए जाने योग्य है। अतः सूत्रार्थ होता है - मध्यम और उत्तम का अविषय होने पर धातु से प्रथम हो।

जहाँ एक ही वाक्य में युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य और अस्मद् एवं लकार का सामानाधिकरण्य ये दोनों हो, तब विप्रतिषेधे परं कार्यम् इस परिभाषा से अस्मद्युत्तमः इस सूत्र से उत्तम ही विधान करने योग्य है। उदाहरण - अहं च त्वं च गच्छावः।

टिप्पणियाँ

जहाँ एक ही वाक्य में युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य तथा उस कारक में ही दूसरा भी पद प्रयुक्त हो तो भी 'युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः' इस सूत्र से मध्यम ही विधान किए जाने योग्य है। कहाँ, तो यह कहा जाता है - 'प्रथमः शेषे सति विधीयते'। इस वाक्य में तो युष्मद् का विषय है। अतः यद्यपि शेषे प्रथमः यह सूत्र परसूत्र है। फिर भी शेषत्व का अभाव होने से प्रवर्तित नहीं होता है। उदाहरण - त्वं च स च गच्छथः।

जहाँ एक ही वाक्य में अस्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य तथा उस कारक में ही दूसरा भी पद प्रयुक्त हो तो भी अस्मद्युत्तमः इस सूत्र से उत्तम ही विधान किए जाने योग्य है। कहा तो यह जाता है - प्रथमः शेषे सति विधीयते। इस वाक्य में तो अस्मद् का विषय है। अतः यद्यपि शेषे प्रथमः यह सूत्र परसूत्र है। फिर भी शेषत्व का अभाव होने से प्रवर्तित नहीं होता है। उदाहरण - अहं च स च गच्छावः।

यहाँ यह संग्रहित है

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र से धातु से परे तीनों अर्थों में लकार होता है। वहाँ विवक्षा ही नियामक है। तब विवक्षा होने से कर्ता में लकार विहित है। और उससे धातु का अर्थ व्यापार वर्तमान काल में है यह विवक्षित है। अतः वर्तमाने लट् इस सूत्र से धातु से लट् विहित होता है। तब भू ल् यह स्थिति प्राप्त हुई। लकार के स्थान पर तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस्-त-आताम्-झ-थास्-आथाम्-ध्वम्-इट्-वहि-महिङ् ये अठ्ठारह आदेश प्राप्त हैं। और वे अव्यवहितपर ही रखने चाहिए। भू धातु से परे लकार के स्थान पर एक बार में एक ही आदेश कर सकते है। एक काल १८ प्रत्यय और अव्यवहितपर यह सम्भव नहीं है। अतः एक साथ १८ प्रत्यय प्रयोग नहीं कर सकते हैं, परन्तु एक एक पर्याय से प्रयोग कर सकते है। तब कौनसा प्रत्यय किस प्रयोजन के लिए प्रयोग करना चाहिए इस विवेक के लिए लः परस्मैपदम् इस सूत्र से अठ्ठारह प्रत्ययों की परस्मैपदसंज्ञा की गई। तत्पश्चात् तङानावात्मनेपदम् इस सूत्र से तङ् प्रत्याहार, शानच् और कानच् की आत्मनेपदसंज्ञा की गई। इस प्रकार १८ प्रत्ययों में से आदि नौ की परस्मैपदसंज्ञा तथा अन्त्य नौ तङाम् की आत्मनेपदसंज्ञा की गई।

वहाँ भी परस्मैपदसंज्ञा और आत्मनेपदसंज्ञा का क्या फल है इस निर्णय के लिए अनुदात्तङित आत्मनेपदम् यह और स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले यह दो सूत्र रखे गए। उससे जिस धातु से आत्मनेपदनिमित्त है उस धातु से आत्मनेपदसंज्ञक नौ प्रत्यय युगपत् अथवा पर्याय से किए गए। और जिस धातु से आत्मनेपदनिमित्त नहीं है, उस प्रकार की धातु से शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से परस्मैपदसंज्ञक ९ प्रत्यय युगपत् अथवा पर्याय से प्राप्त किए गए।

धातु से परे लकार के स्थान पर ९ परस्मैसंज्ञक आदेश प्रसक्त हैं। और वे अव्यवहितपर ही रखने चाहिए। धातु से परे लकार के स्थान पर एक बार में एक ही आदेश कर सकते है। एक काल ९ प्रत्यय और अव्यवहितपर यह सम्भव नहीं है। अतः एक साथ ९ प्रत्यय प्रयोग नहीं कर सकते

हैं, परन्तु एक एक पर्याय से प्रयोग कर सकते है। तब कौनसा प्रत्यय किस प्रयोजन के लिए प्रयोग करना चाहिए इस विवेक के लिए यहाँ भी संज्ञा करी गई है।

'तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमा:' इस सूत्र से तिङ् के आत्मनेपद और परस्मैपद के तीनों त्रिकों की क्रम से प्रथम, मध्यम, उत्तम यह संज्ञा विहित है। इस प्रकार जिनकी प्रथमादिसंज्ञा हुई, उनमें प्रत्येक एक एक की 'तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकश:' इस सूत्र से एकवचन, द्विवचन, बहुवचन ये संज्ञाएं विहित की गई।

यहाँ तक प्रत्येक प्रत्यय कोई संज्ञा प्राप्त कर चुका है। जैसे तिप् इसकी परस्मैपदम, प्रथम, एकवचन ये तीन संज्ञाएं हुई। इस प्रकार अन्य प्रत्ययों की भी।

फिर भी किस प्रयोजन के लिए यह संज्ञाएं आई हैं और इनका उपयोग कैसे हैं इस विवेक के लिए सूत्रों की रचना की गई।

वहाँ यदि एक वाक्य में युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य है तो धातु से मध्यम विधान करना चाहिए, यह 'युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यम:' इस सूत्र के द्वारा व्यवस्था की गई।

वहाँ यदि एक वाक्य में अस्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य है तो धातु से उत्तम विधान करना चाहिए, यह अस्मद्युत्तम इस सूत्र के द्वारा व्यवस्था की गई।

यदि मध्यम और उत्तम का अविषय होता है तो धातु से शेषे प्रथम: इस सूत्र से प्रथम विहित होता है।

फिर भी मध्यमसंज्ञक सिप् थस् थ ये तीन हैं। अब यह स्पष्ट है कि कब मध्यम का प्रयोग करना चाहिए। परन्तु यह नहीं स्पष्ट है कि सिप्-थस्-थ इन तीनों में से किसका प्रयोग करना चाहिए। 'तद्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने' यह और 'बहुषु बहुवचनम्' यह दोनों सूत्रों से यह आता है कि लकार का अर्थ जो कारक है वह यदि एक हो तो एकवचनसंज्ञक सिप् प्रयोग करना चाहिए। यदि लकार का अर्थ जो कारक है उसका यदि द्वित्व हो अर्थात् कारकद्वय हो तो द्विवचनसंज्ञक थस् यह प्रत्यय प्रयोग करना चाहिए। यदि लकार का अर्थ जो कारक है उसका यदि बहुत्व हो अर्थात् दो से अधिक कारक हो तो बहुवचनसंज्ञक थ यह प्रत्यय प्रयोग करना चाहिए। इसी प्रकार अन्यत्र भी।

इस प्रकार कर्ता में लकार विवक्षित होने पर भू ल् इस स्थिति में लकार के स्थान पर तिबादि अष्टादश प्रत्ययों के प्राप्त होने पर लकार का वाच्य कर्ता एक और वह युष्मद् और अस्मद् का वाच्य नहीं हो तो यह विवक्षा होने पर लकार के स्थान पर एकवचनसंज्ञक प्रथम विधान करना चाहिए। तिपं में पकार की हलन्त्यम् इस सूत्र से इत्संज्ञा होने पर और तस्य लोप: इससे लोप होने पर भू ति यह स्थिति होती है। तब -

धातु से विहित प्रत्ययों की सार्वधातुक और आर्धधातुक ये दो संज्ञाएं होती है। अष्टाध्यायी में सार्वधातुकसंज्ञाविधायक और आर्धधातुकसंज्ञाविधायक सूत्र एक स्थान पर ही रखे गए हैं। उनका ज्ञान एक समय में हो इसलिए वे सूत्र भी यहाँ ही दिये गए हैं।

पाठगत प्रश्न 12.4

1. कब मध्यम विधान किया जाता है?
2. कब उत्तम विधान किया जाता है?
3. कब प्रथम विधान किया जाता है?
4. युष्मद्युपपदे इत्यादि सूत्र में समानाधिकरणपदार्थ क्या है?
5. शेषे प्रथमः यहाँ शेष क्या है?

ध्यान देने योग्य

भू धातु से लट् में भवति यह रूप होता है। उसकी सम्पूर्ण सिद्धि के लिए बहुत सूत्रों की आवश्यकता है। केवल भवति इस रूप की सिद्धि के लिए ही दो पाठ है। अतः यहाँ पाठ विभक्त है। परन्तु विषय क्रमशः आगे चलता है। अतः यहाँ पाठसार नहीं है, पाठान्त प्रश्न नहीं हैं और उत्तर नहीं हैं। वह सभी अग्रिम पाठ के अन्त में द्रष्टव्य है।

॥ इति द्वादशोः पाठः॥

13

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लट् लकार में रूपसिद्धि-२

भू धातु से भवति यह रूप साधन ही अनुवर्तित है। अतः पृथक् प्रस्तावना अथवा उद्देश्य नहीं दिए गए हैं।

13.1 तिङ्शित् सार्वधातुकम्॥ (३.४.११३)

सूत्रार्थ - धातु के अधिकार में कह गये तिङ् और शित् सार्वधातुकसंज्ञक हो।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञा विधान की जाती है। इसमें तीन पद हैं। तिङ् (१/१), शकारः इत् यस्य स शित् (१/१), सार्वधातुकम् (१/१) यह संज्ञापरक पद है। तिङ् यह प्रत्याहार है। उसमें तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस्-त-आताम्-झ-थास्-आथाम्-ध्वम्-इट्-वहि-महिङ् ये अट्ठारह प्रत्यय हैं। धातोः यह पञ्चम्यन्त पद अधिकृत है। पदयोजना - धातोः तिङ् शित् सार्वधातुकम्। सूत्रार्थ होता है - धातोः इसके अधिकार में विहित तिङ् और शित् सार्वधातुकसंज्ञक होता है। अर्थात् धात्वधिकरोक्त तिङ् और शित् सार्वधातुकसंज्ञक होता है।

उदाहरण - तिप् तस् झि इत्यादि तिङ् हैं। शप् श्यन् इत्यादि शित् हैं।

13.2 आर्धधातुकं शेषः॥ (३.४.११४)

सूत्रार्थ - धातोः इससे विहित तिङ्शित् से भिन्न प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञक होते हैं।

सूत्रव्याख्या - यह सूत्र संज्ञासूत्र है। इस सूत्र से आर्धधातुक संज्ञा विधान की जाती है। इस सूत्र में दो पद हैं। आर्धधातुकम् शेषः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। धातोः यह पञ्चम्येकवचनान्त पद अधिकृत है। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् इस सूत्र से धातोः यह पञ्चम्यन्त पद अनुवर्तित है। पदयोजना होती है - धातोः धातोः शेषः आर्धधातुकम्। शेषः इसका तिङ्-शित्भ्यः

टिप्पणियाँ

अन्यः यह अर्थ है। और उससे सूत्रार्थ होता है - धातोः इससे धातु से विहित तिङ्शित् से भिन्न अन्य प्रत्यय आर्धधातुकसंज्ञक हो। अर्थात् धातोः इस को अधिकृत करके धातु से विहित जो तिङ्भिन्न और शिद्भिन्न प्रत्यय है उसकी आर्धधातुकसंज्ञा इस सूत्र से होती है।

गुप्तिज्किद्भ्यः सन् इस सूत्र से धातु से सन् प्रत्यय विहित है। किन्तु धातोः यह कहकर अर्थात् धात्वधिकार में विहित नहीं है। अतः इसकी आर्धधातुकसंज्ञा नहीं होती है।

उदाहरण - च्लि, सिच्, स्य, तास्, क्त, क्तवतु इत्यादि।

13.3 लिट् च॥ (३.४.११५)

सूत्रार्थ - लिट् के स्थान में तिङ् आदेश आर्धधातुकसंज्ञक होते हैं।

सूत्रव्याख्या - शक्तिग्राहक होने से यह सूत्र संज्ञा श्रेणी में आता है। दो पदों वाले इस सूत्र में लिट् यह लुप्त षष्ठी पद है। अतः लिटः यह प्राप्त होता है। च यह अव्ययपद है। तिङ् शित् सार्वधातुकम् इस सूत्र से तिङ् यह प्रथमैकवचनान्त संज्ञा बोधक पद अनुवर्तित होता है। तथा आर्धधातुकं शेषः इस सूत्र से संज्ञा सम्पर्क आर्धधातुकम् यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित होता है। लङः शाकटायनस्यैव इस सूत्र से ही यह अव्ययपद अनुवर्तित होता है। इस प्रकार लिटः तिङ् आर्धधातुकम् एव यह सूत्रगतपदों का अन्वय है। उससे सूत्रार्थ होता है- लिट् के स्थान पर विहित तिङ् आर्धधातुकसंज्ञक ही हो। यहाँ इस कारण से ही सार्वधातुकसंज्ञा की व्यावृति हो जाती है।अतः लिट् के स्थान पर विहित तिङ् की सार्वधातुकसंज्ञा नहीं होती है।

13.4 लिङाशिषि॥ (३.४.११६)

सूत्रार्थ - आशीर्वाद अर्थ में जो 'लिङ्' उसके स्थान में 'तिङ्' आदेश उनकी आर्धधातुक संज्ञा होती है।

सूत्रव्याख्या - यह संज्ञासूत्र है। इससे आर्धधातुकसंज्ञा विधान की जाती है। इसमें दो पद हैं। लिङ् यह लुप्तषष्ठी पद है। लिङः यह प्राप्त होता है। आशिषि (७/१)। तिङ् शित् सार्वधातुकम् इस सूत्र से तिङ् यह प्रथमान्त संज्ञिपरं पद अनुवर्तित होता है। आर्धधातुकं शेषः इस सूत्र से संज्ञा सम्पर्क आर्धधातुकम् यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित होता है। 'लङः शाकटायनस्यैव' इस सूत्र से ही यह अव्ययपद अनुवर्तित होता है। पदयोजना - आशिषि लिङः तिङ् आर्धधातुकम् एव। सूत्रार्थ होता है - आशीर्वादार्थ में विहित लिङ् के स्थान पर जो तिङ् है, उसकी आर्धधातुकसंज्ञा होती है। यहाँ एव के प्रयोग से सार्वधातुकसंज्ञा की व्यावृति हो जाती है। अतः लिङ् के स्थान पर विहित तिङ् की सार्वधातुकसंज्ञा नहीं होती है।

यहाँ सार यह है

धातु से लकार विधान होते हैं। कोई भी लकार तिङ् अथवा शित् नहीं है। अतः सभी लकार आर्धधातुकसंज्ञक हैं। लकारों के स्थान पर तिङ् विधान किया जाता है। यह तिङ् सार्वधातुकसंज्ञक

होता है। परन्तु लिट् के स्थान पर विहित तिङ् और आशीर्वाद अर्थ में विहित लिङ् के स्थान पर विहित तिङ् आर्धधातुकसंज्ञक होता है। जिसके लकार का आदेश तिङ् सार्वधातुकसंज्ञक होता है,वह लकार सार्वधातुक लकार कुछ लोग कहते हैं। परन्तु लकार कभी भी सार्वधातुकसंज्ञक नहीं हैं।

लुट्, लृट्, लुङ् और लृङ् में धातु और लकार के मध्य में तास्, स्य, च्लि, स्य ये विधान होते हैं। वे धातु से विहित तिङ्भिन्न और शित्भिन्न होते हैं। अतः आर्धधातुकसंज्ञक हैं। परन्तु उन लकारों के स्थान पर विहित तिङ् सार्वधातुकसंज्ञक हैं। फिर भी लुट्, लृट्, लुङ् और लृङ् आर्धधातुक लकार यह प्रचार है।

भू ति इस स्थिति में तिप् तिङ् है, धातु से विहित है। अतः तिङ्शित् सार्वधातुकम् इस सूत्र से तिप् की सार्वधातुकसंज्ञा होती है। मूलतः वर्तमाने लट् यहाँ स्पष्ट किया गया है कि लट् कर्तरि अर्थात् कर्ता अर्थ में विहित है। तब - (अग्रिमसूत्र में द्रष्टव्य है-)

पाठगत प्रश्न 13.1

1. सार्वधातुक संज्ञा किसकी होती है?
2. आर्धधातुक संज्ञा किनकी होती है?
3. आर्धधातुकं शेषः यहाँ शेष क्या है?
4. कौनसे लकार सार्वधातुक संज्ञक हैं? उत्तर दीजिए।
5. किन लकारों का आदेश तिङ् आर्धधातुक संज्ञक है?
6. लिङ्देश तिङ् सार्वधातुक है अथवा आर्धधातुक है?
7. किन लकारों का विकरण आर्धधातुक है और वे कौन से हैं?

13.5 कर्तरि शप्॥ (३.१.६८)

सूत्रार्थ - कर्ता अर्थ में सार्वधातुक परे रहते धातु से शप् होता है।

सूत्रव्याख्या - षड्विध पाणिनीय सूत्रों में 'कर्तरि शप्' यह विधिसूत्र है, इससे शप् का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद है। वहाँ कर्तरि यह सप्तम्येकवचनान्त पद है, और शप् यह प्रथमैकवचनान्त पद है। 'सार्वधातुके यक्' इस सूत्र से सार्वधातुके यह पद अनुवृत्त हुआ है। 'धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिव्याहारे यङ्' इस सूत्र से धातोः यह पद अनुवर्तित होता है। 'प्रत्ययः' यह 'परश्च' यह दोनों सूत्र यहाँ अधिकृत है। पदयोजना - कर्तरि सार्वधातुके धातोः शप् प्रत्ययः परः। सूत्र का अर्थ होता है - कर्ता अर्थ में सार्वधातुक प्रत्यय परे में धातु से परे शप् प्रत्यय हो। तिङ्प्रत्यय

टिप्पणियाँ

परे में होने पर धातु से जो शपादि प्रत्यय विधान किए जाते हैं उनकी विकरण संज्ञा होती है,यह प्राचीन आचार्यों का मत है। अतः शप् यह विकरण है।

उदाहरण - भवति।

सूत्रार्थसमन्वय - भू धातु की विवक्षा से कर्ता अर्थ में लट् है। लट् के स्थान पर तिप् विहित है। तब भू ति यह स्थिति हुई। यहाँ भू धातु से परे तिप् तिङ्शित्सार्वधातुकम् इस सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञक है। भू धातु से परे कर्ता अर्थ में सार्वधातुक है। अतः कर्तरि शप् इस सूत्र से धातु से शप् प्रत्यय होने पर, शप् प्रत्यय स्थित शकार का 'लशक्वतद्धिते' इस सूत्र से तथा पकार की 'हलन्त्यम्' इस सूत्र से इत्संज्ञा होती है। इत्संज्ञा होने पर 'तस्य लोपः' इस सूत्र से दोनों शकार और पकार का लोप होता है। तब भू अ ति यह स्थिति होती है। तब -

13.6 सार्वधातुकार्धधातुकयोः।। (७.३.८४)

सूत्रार्थ - सार्वधातुक और आर्धधातुक के परे इगन्तअङ्ग को गुण हो।

सूत्रव्याख्या - यह सूत्र विधिसूत्र है। इस सूत्र से गुण विधान किया जाता है। इस सूत्र में सार्वधातुकार्धधातुकयोः यह सप्तमी द्विवचनान्त पद है। मिदेर्गुणः इस सूत्र से गुणः यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित होता है। अङ्गस्य यह अधिकृत है। इस सूत्र में किसके स्थान पर गुण होगा यह स्थानी साक्षात् नहीं कही गई है। किन्तु गुणः यह विधेय पर गुणपद को उच्चारित करके गुण विधान किया जाता है। अतः इको गुणवृद्धी इस परिभाषा से इकः इस षष्ठ्यन्त पद को यहाँ उपस्थापित किया जाता है है। यह सूत्र अङ्ग अधिकार में पढा हुआ है। अङ्गसंज्ञक प्रत्यय परे में होने पर ही फलति। अतः प्रत्यय यह पद आक्षिप्त होता है। वहाँ भी सार्वधातुकार्धधातुकयोः यह सप्तमीद्विवचन है। ये दोनों भी प्रत्यय ही हैं। अतः प्रत्यय इसका प्रत्ययोः यह सप्तमीद्विवचन ग्रहण किया जाता है। तब पदयोजना होती है - ''इकः अङ्गस्य गुणः सार्वधातुकार्धधातुकयोः प्रत्ययोः'' यह।

यहाँ इकः और अङ्गस्य ये समान विभक्ति दो पद है। अङ्गस्य यह पद विशेष्य है, इकः यह पद उसका विशेषण है। अतः ''येन विधिस्तदन्तस्य'' इस से तदन्तविधि से इगन्ताङ्ग का यह अर्थ प्राप्त होता है। इगन्ताङ्गस्य यहाँ अल्समुदाय बोधक से स्थानषष्ठी सुना जाता है।और आदेश गुण एकाल् है। अतः अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से इगन्ताङ्ग के अन्त्य इक् का गुण होता है। तत्पश्चात् सूत्रार्थ होता है- सार्वधातुक और आर्धधातुक प्रत्यय परे में रहते इगन्ताङ्ग के अन्त्य अल् के स्थान पर गुण हो। इगन्ताङ्ग का अन्त्य अल् इक् ही है। अतः इक् के स्थान पर ही गुण होता है।

उदाहरण - भू धातु से लट्, तिप्, शप् होने पर भू अ ति यह स्थिति पूर्वसूत्रों में निरूपित की गई हैं। शप् धातोः में विहित होने से शित् प्रत्यय है। अतः तिङ्शित्सार्वधातुकम् इस सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञा होती है। यह परे में रहते भू इसकी अङ्गसंज्ञा होती है। भू यह इगन्त अङ्ग है। अतः सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस प्रकृतसूत्र से इगन्ताङ्ग भू इसके अन्त्य इक् ऊकार का गुण प्रसक्त है। ऊकार के स्थान पर स्थानेऽन्तरतमः इस परिभाषा बल से स्थान के आन्तर्य से ओकार भो

अति यह स्थिति होती है। यहाँ ओकार से अच् परे में रहते एचोऽयवायावः इस सूत्र से ओकार के स्थान पर अवादेश होने पर भ् अव् अ ति इस स्थिति में सभी वर्णों का मेल होने से भवति यह रूप सिद्ध होता है।

भवतः - भू धातु से वर्तमानक्रिया वृत्तित्वविवक्षा में वर्तमाने लट् इस सूत्र से कर्ता अर्थ में लट् का विधान होता है। लट् में अनुबन्धलोप होने पर भू ल् यह होने पर लकार के स्थान पर प्रथमपुरुषद्विवचन विवक्षा में प्रत्यय होने पर भू तस् यह होता है। तत्पश्चात् तिङ्शित्सार्वधातुकम् इस सूत्र से तस् की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर कर्तरि शप् इस सूत्र से धातु से शप् और अनुबन्धलोप होने पर भू अ तस् यह होता है। शप् प्रत्यय और शित् धातु के अधिकार में कह गये हैं। अतः तिङ्शित् सार्वधातुकम् से उसकी सार्वधातुकसंज्ञा होती है। अतः सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र से इगन्ताङ्ग भू के ऊकार का गुण होने पर स्थान के आन्तर्य से ओकार होने पर भो अ तस् यह होता है। यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से परिष्कृतेन एचोऽयवायावः इस सूत्र से अच् परे में होने से ओकार का अवादेश होने पर भव् अ तस् यह होता है। तत्पश्चात् भवतस् इस समुदाय की ''सुप्तिङन्तं पदम्'' इस सूत्र से तिङन्त होने से पदसंज्ञा होने पर, ''अलोऽन्त्यस्य'' इस परिभाषा से परिष्कृत होकर ''ससजुषो रुः'' इससे पदान्तसकार का रुत्व अनुबन्धलोप होने पर भवत र् यह होता है। यहाँ रेफ के उच्चारण से बाद में दूसरे वर्ण का उच्चारण का नहीं है, उसके अभाव होने से ''विरामोऽवसानम्'' इस सूत्र से अवसानसंज्ञा होने पर, अवसान परे में होने से ''अलोऽन्त्यस्य'' इस परिभाषा की सहायता से ''खरवसानयोर्विसर्जनीयः'' इससे पदान्त के रेफ का विसर्ग होने तथा वर्णसम्मेलन होने पर भवतः यह रूप सिद्ध होता है।

भवन्ति - भू धातु से वर्तमाने लट् इस सूत्र से कर्ता में लट्, अनुबन्धलोप होने पर भू लइस स्थिति में लकार के स्थान पर प्रथमपुरुषबहुवचन विवक्षा में झि प्रत्यय होने पर भू झि यह स्थिति होती है। तब -

13.7 झोऽन्तः॥ (७.१.३)

सूत्रार्थ - प्रत्यय के अवयव 'झकार' के स्थान पर 'अन्त्' यह आदेश हो।

सूत्रव्याख्या - साक्षाल्लक्ष्य संस्कारानुरोधक होने से यह विधिसूत्र है। सूत्र में दो पद हैं। झः अन्तः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। झः यह षष्ठ्येकवचनान्त उद्देश्यबोधक पदम है। और यह स्थानषष्ठी है। अन्तः यह प्रथमैकवचनान्त विधेयबोधक पद है। ''आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्ययादीनाम्'' (७.१.२) इस पूर्वसूत्र से प्रत्ययादिपद का एकदेश प्रत्ययः यह अनुवर्तित होता है, और षष्ठ्यन्त रूप से विपरिणमित होता है। प्रत्ययस्य यह होता है। और ये अवयव अवयवी भावसम्बन्ध में षष्ठी है। उससे प्रत्यय के अवयव झकार के स्थान पर यह अर्थ आता है। प्रत्ययस्य झस्य अन्तः यह सूत्रगत पदों का अन्वय है। अतः प्रत्यय के अवयव झकार के स्थान पर अन्तादेश होता है, यह सूत्र का अर्थ होता है। यहाँ अन्त् यह आदेश तकारान्त है, न कि अकारान्त। यहाँ अकार उच्चारणार्थ है।

उदाहरण - भवन्ति।

टिप्पणियाँ

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वसूत्रोक्त प्रकार से भू झि इस अवस्था में प्रकृतसूत्र से प्रत्यय के अवयव झि इसके झकार के स्थान पर अन्त् यह आदेश होता है।

अत: प्रकृतसूत्र से अन्त् यह आदेश होने पर भू अन्त् इ यह होता है। वहाँ ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इस सूत्र से अन्ति इस समुदाय की सार्वधातुकसंज्ञा होती है। झिप्रत्यय कर्ता में विहित है। अत: कर्तरि शप् इस सूत्र से धातु से शप् व अनुबन्धलोप होने पर भू अ अन्ति यह होता है। शप् की भी ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञा होती है। तत्पश्चात् ''सार्वधातुकार्धधातुकयो:'' इस सूत्र से इगन्ताङ्ग भू के ऊकार के स्थान पर स्थान आन्तर्य से गुण ओकार होने पर भो अ अन्ति इस स्थिति में ''एचोऽयवायाव:'' इस सूत्र से ओकार का अवादेश होने पर भव् अ अन्ति यह स्थिति होती है। और वहाँ अकार से पर गुण अकार है। अत: 'अतो गुणे' इस सूत्र से अकार और अकार का पररूपैकादेश होने पर भव् अन्ति होकर वर्णसम्मेलन होने पर **भवन्ति** यह रूप सिद्ध होता है।

भवसि - भू धातु से ''वर्तमाने लट्'' इस सूत्र से कर्ता में लट्, मध्यमपुरुष एकवचन विवक्षा में सिप्, अनुबन्धलोप होने पर भू सि यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् 'तिङ्शित्सार्वधातुकम्' इस सूत्र से सिप् की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर और कर्ता में विहित होने पर कर्तरि शप् इस सूत्र से धातु से शप्, अनुबन्धलोप होने पर भू अ सि यह होता है। शप् होने से भी ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इससे सार्वधातुकत होने से ''सार्वधातुकार्धधातुकयो:'' इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण होने पर स्थान के आन्तर्य से ओकार होने पर भो अ सि यह स्थिति होने पर ''एचोऽयवायाव:'' इस सूत्र से अच्परे में होने से ओकार के स्थान पर अवादेश होने पर भव् अ सि होकर वर्णसम्मेलन होने पर **भवसि** यह रूप सिद्ध होता है

भवथ: - भू धातु से वर्तमाने लट् इस सूत्र से कर्ता में लट्, मध्यमपुरुष द्विवचन विवक्षा में थस् होने पर भू थस् यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इस सूत्र से थस् की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर और कर्ता में विहित होने पर 'कर्तरि शप्' इस सूत्र से धातु से शप्, अनुबन्धलोप होने पर भू अ थस् यह होता है। शप् होने से भी ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इससे सार्वधातुक होने से ''सार्वधातुकार्धधातुकयो:'' इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण होने पर स्थान के आन्तर्य से ओकार होने पर भो अ थस् यह स्थिति होने पर ''एचोऽयवायाव:'' इस सूत्र से अच्पर में होने से ओकार के स्थान पर अवादेश होने पर भव् अ थस् होकर रुत्व और विसर्ग करने पर भव् अ थ: इस स्थिति में वर्णसम्मेलन होने पर **भवथ:** यह रूप सिद्ध होता है

भवथ - भू धातु से वर्तमाने लट् इस सूत्र से कर्ता में लट्, मध्यमपुरुष बहुवचन विवक्षा में थ होने पर भू थ यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इस सूत्र से थ की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर और कर्ता में विहित होने पर कर्तरि शप् इस सूत्र से धातु से शप्, अनुबन्धलोप होने पर भू अ थ यह होता है। शप् होने से ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इससे सार्वधातुक होने से ''सार्वधातुकार्धधातुकयो:'' इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण होने पर स्थान के आन्तर्य से ओकार होने पर भो अ थ यह स्थिति होने पर ''एचोऽयवायाव:'' इस सूत्र से अच्परे में होने से ओकार

के स्थान पर अवादेश होने पर भव् अ थ होकर भव् अ थ इस स्थिति में वर्णसम्मेलन होने पर **भवथ** यह रूप सिद्ध होता है।

भवामि - भू धातु से 'वर्तमाने लट्' इस सूत्र से कर्ता में लट्,अनुबन्धलोप होने पर भू ल् इस स्थिति में जाते लकार के स्थान पर उत्तमपुरुष एकवचन विवक्षा में मिप्, अनुबन्धलोप होने पर भू मि यह स्थिति होती है। ''तिङ्शत्सार्वधातुकम्'' इस सूत्र से मिप् की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर ''कर्तरि शप्'' इस सूत्र से धातु से शप्, अनुबन्धलोप होने पर भू अ मि यह हुआ, शप् भी शित्त्व होने से सार्वधातुक होने पर ''सार्वधातुकार्धधातुकयो:'' इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण ओकार होने पर भो अ मि इस स्थिति में ''एचोऽयवायाव:'' इस सूत्र से अवादेश होने पर भव् अ मि यह होता है। तब -

13.8 अतो दीर्घो यञि॥ (७.३.१०१)

सूत्रार्थ - अदन्त अङ्ग के स्थान पर दीर्घ हो यञादि सार्वधातुक पर में रहते।

सूत्रव्याख्या - छ: प्रकार के पाणिनीय सूत्रों में से साक्षाल्लक्ष्यसंस्कारक होने से विधिकोटि में सह सूत्र आता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। अत: दीर्घ: यञि यह सूत्रस्थ पदों का विच्छेद है। उनमें अत: यह षष्ठ्येकवचनान्त पद है। दीर्घ: यह प्रथमान्त विधेयबोधक पद है। यञि यह सप्तम्यन्त पद है। यह सूत्र अङ्गस्य इसके अधिकार में है। अत: यह पद अङ्गस्य इस षष्ठ्यन्तपद का विशेषण है। अत: येन विधिस्तदन्तस्य इस तदन्तविधि से अदन्त के अङ्ग का यह अर्थ होता है। ''तुरुस्तुशम्यम: सार्वधातुके'' इस सूत्र से सार्वधातुके यह सप्तम्यन्त पद अनुवर्तित है। और यह विशेष्यबोधक पद है। यञि यह सप्तम्यन्त अल्बोधक विशेषण है। तत्पश्चात् यस्मिन्विधिस्तदादावल्ग्रहणे इस परिभाषा से तदादिविधि से यञादि सार्वधातुक पर में यह अर्थ होता है। इस प्रकार मिलाकर अदन्ताङ्गस्य दीर्घ: यञि सार्वधातुके यह सूत्रस्थ पदों का अन्वय है। अदन्ताङ्गस्य यहाँ अल्समुदायबोधक से स्थानषष्ठी सुना जाता है। अत: अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अदन्ताङ्ग के अन्त्य अल् का ही आदेश हो। उससे सूत्रार्थ होता है - अदन्ताङ्ग के अन्त्य अल् के स्थान पर दीर्घ होता है यञादि सार्वधातुक पर में रहते।

उदाहरण - भवामि।

सूत्रार्थसमन्वय - भव् अ मि इस अवस्था में मिप् प्रत्यय परे में रहते पूर्व के भव् अ इस समुदाय की अङ्गसंज्ञा है। मिप् प्रत्यय सार्वधातुकसंज्ञक और यञादि है। और यह अङ्ग अदन्त है। अत: यहाँ प्रकृतसूत्र से अन्त्याकार के स्थान पर दीर्घ होता है। तब भवा मि यह होने पर वर्णसम्मेलन करने पर **भवामि** यह रूप सिद्ध होता है।

भवाव: - भू धातु से वर्तमाने लट् इस सूत्र से कर्ता में लट्,अनुबन्धलोप होने पर भू ल् इस स्थिति में लकार के स्थान पर उत्तमपुरुष द्विवचनविवक्षा में वस् होने पर भू वस् यह स्थिति होती है। ''तिङ्शत्सार्वधातुकम्'' इस सूत्र से वस् की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर ''कर्तरि शप्'' इस सूत्र से धातु से शप्, अनुबन्धलोप होने पर भू अ वस् यह हुआ, शप् भी शित्त्व होने से सार्वधातुक होने

पर ''सार्वधातुकार्धधातुकयोः'' इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण ओकार होने पर भो अ वस् इस स्थिति में ''एचोऽयवायावः'' इस सूत्र से अवादेश होने पर भव् अ वस् यह होता है। वहाँ वस् पर में रहते विकरणविशिष्ट भव इसकी अङ्गसंज्ञा होती है। वस् यञादि और सार्वधातुक है। अतः ''अतो दीर्घो यञि'' इस सूत्र से अदन्ताङ्ग भव इसके वकारोत्तप अकार का दीर्घ होता है। तब भवा वस् यह होत है। भवावस् यह समुदाय तिङन्त है। अतः तस्य 'सुप्तिङन्तं पदम्' इस सूत्र से पदसंज्ञा होती है। उससे 'ससजुषो रुः' इस सूत्र से पदान्त सकार का रुत्व, अनुबन्धलोप होने पर ''खरवसानयोर्विसर्जनीयः'' इस सूत्र से रेफ के विसर्ग होकर वर्णसम्मेलन होने पर भवावः यह रूप सिद्ध होता है।

भवामः – भू धातु से वर्तमाने लट् इस सूत्र से कर्ता अर्थ में लट्, लकार के स्थान पर उत्तमपुरुषद्विवचन की विवक्षा होने पर मस्, ''तिङ्शित्सार्वधातुकम्'' इस सूत्र से मस् की सार्वधातुकसंज्ञा होने पर उससे परे ''कर्तरि शप्'' इस सूत्र से धातु से शप्, शप् भी सार्वधातुक होने से उसके बाद ''सार्वधातुकार्धधातुकयोः'' इस सूत्र से इगन्ताङ्ग भू के ऊकार को गुण ओकार होने पर, ''एचोऽयवायावः'' इस सूत्र से अच् पर में होने से ओकार का अवादेश होने पर भव् अ मस् यह होने पर मस् के यञादि और सार्वधातुक होने के बाद में विकरण विशिष्ट भव इसका अङ्गत्व विज्ञान होने से अतो दीर्घो यञि इस सूत्र से अदन्त अङ्ग भव इसके मकारोत्तर अकार का दीर्घ होने पर भवा मस् यह होने पर समुदाय की तिङन्तत्व होने से पदसंज्ञा होने पर, ससजुषो रुः इस सूत्र से पदान्त सकार का रुत्व अनुबन्धलोप होने पर ''खरवसानयोर्विसर्जनीयः'' इस सूत्र से रेफ का विसर्ग और वर्णसम्मेलन होने पर भवावः यह रूप सिद्ध होता है।

भू धातु के लट् लकार में रूप –

लट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यमपुरुषः	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तमपुरुषः	भवामि	भवावः	भवामः

पाठगत प्रश्न 13.2

1. शप् कब विधान किया जाता है?
2. भू अ ति इस स्थिति में भू के ऊकार का गुण किस सूत्र से होता है?
3. झोऽन्तः इस सूत्र का अर्थ लिखो?
4. भू धातु से लट्, सिप्, होने पर क्या रूप होता है?

13.9 धात्वादेः षः सः॥ (६.१.६२)

सूत्रार्थ - धातु के आदि षकार को सकार हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से सकार विधान किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। धात्वादेः (६/१), षः (६/१), सः (१/१)। धातोः आदिः धात्वादिः तस्य धात्वादेः यह षष्ठीतत्पुरुष समास है। सूत्रार्थ होता है - धातु के आदि षकार के स्थान पर सकारादेश होता है। धातुपाठ में जिन धातुओं के आदिवर्ण षकार है,वे षोपदेश धातुएँ कहलाती है।

उदाहरण - षिध गत्याम्।

सूत्रार्थसमन्वय - षिध् यह धातुपाठ पठित धातु है। अतः उपदेश अवस्था में उसका आदि षकार है। अतः वह षोपदेश है। धात्वादेः षः सः इस प्रकृतसूत्र से उसके आर्दो षकार के स्थान पर सकारादेश होता है। उससे सिध् यह होता है।

13.10 णो नः॥ (६.१.६३)

सूत्रार्थ - धातु के आदि णकार को नकार होता है।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से नकार विधान किया जाता है। इस सूत्र में दो पद हैं। णः (६/१), नः (१/१)। धात्वादेः षः सः इस सूत्र से धात्वादेः (६/१) यह पद अनुवर्तित होता है। धातोः आदिः धात्वादिः तस्य धात्वादेः यह षष्ठीतत्पुरुष समास है। सूत्रार्थ होता है - धातु के आदि णकार के स्थान पर नकारादेश होता है। धातुपाठ में जिन धातुओं के आदिवर्ण णकार है वे णोपदेश धातुएं कहलाती है।

उदाहरण - णम् - नम्, णीञ् - नी, णद, नद।

सूत्रार्थसमन्वय - णम् यह धातुपाठ में पठित धातु है। उपदेशावस्था में उसका आदि णकार है। अतः णोपदेश है। णो नः इस प्रकृतसूत्र से उसके आदि णकार के स्थान पर नकारादेश होता है। अतः नम् यह होता है। तत्पश्चात् लट्, तिप्, शप् होने पर नमति इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं।

णद अव्यक्ते शब्दे यह भ्वादिगणीय धातु है। और वह णोपदेश है। उसके लट् में रूप सिद्ध करने योग्य हैं। वे रूप इस प्रकार हैं - **नदति नदतः नदन्ति। नदसि नदथः नदथ। नदामि नदावः नदामः।**

सिध् धातु से वर्तमाने लट् इस से लट्, तिप्, शप् होने पर सिध् अ ति यह स्थिति होती है। तब - (पुगन्तलघूपधस्य च इस सूत्र में द्रष्टव्य है।)

13.11 इदितो नुम् धातोः (७.१.५८)

सूत्रार्थ - इदित धातु से नुमागम होता है।

टिप्पणियाँ

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से नुम् विधान किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। इदितः नुम् धातोः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। इदितः (६/१), नुम् (१/१), धातोः (१/१)। इत् यस्य सः इदित्, तस्य इदितः यह बहुव्रीहिसमास है। अर्थात् जिस धातु का ह्रस्व इकार इत्संज्ञक है वह धातु इदित् है। सूत्रार्थ होता है - इदित धातु से नुमागम होता है। नुम् मित् है। अतः मिदचोऽन्त्यात् परेः इस परिभाषा से अन्त्य अच् से परे होता है।

उदाहरण - टु नदिँ समृद्धौ।

सूत्रार्थसमन्वय - टु नदिँ यह धातु धातुपाठ में पठित है। उसकी टु इसकी ''आदिर्ञिटुडवः'' इस सूत्र से इत्संज्ञा होती है। इकार अनुनासिक है। अतः ''उपदेशेऽजनुनासिक इत्'' इस सूत्र से इत् इत्संज्ञक होता है। अतः यह धातु इदित् है। ''इदितो नुम् धातोः'' इस सूत्र से उसको नुम् होता है। मित्त्व होने से ''नुम् मिदचोऽन्त्यात् परः'' इस परिभाषा से मित् नकार पर जो अकार है उससे परे होता है। उससे नन् द् यह स्थिति होती है। ''नश्चापदान्तस्य झलि'' इस सूत्र से इसके नकार का अनुस्वार होता है। तत्पश्चात् ''अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः'' इस सूत्र से परसवर्ण करने पर नन्द् यह प्राप्त होता है। तब ''वर्तमाने लट्'' इस से लट्, तिप्, शप् होने पर नन्द् अ ति इस स्थिति में वर्णमेलन होने पर नन्दति यह रूप सिद्ध होता है।

णद् धातु के अन्य रूपों में कोई भी विशेष नहीं है। वे रूप हैं - **नन्दति नन्दतः नन्दन्ति। नन्दसि नन्दथः नन्दथ। नन्दामि नन्दावः नन्दामः।**

13.12 पुगन्तलघूपधस्य च।। (७.३.८६)

सूत्रार्थ - पुगन्त लघूपध चाङ्गस्यको गुणः सार्वधातुकार्धधातुकयोः प्रत्ययोः परयोः।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से गुण का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद हैं।पुगन्तलघूपधस्य (६/१), च अव्यय। मिदेर्गुणः इस सूत्र से गुणः इति यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित है। अङ्गस्य (६/१) यह अधिकृत है।''सार्वधातुकार्धधातुकयोः'' (७/२) यह सूत्र आता है''अर्ति-ह्री-व्ली-री-क्नूयी-क्ष्माय्यातां पुग्णौ'' इस सूत्र से पुगागम का विधान होता है। अयं पुक् अन्ते यस्य तत् पुगन्तम् अङ्गम् यह बहुव्रीहिसमास है। लघुः उपधा यस्य तद् लघूपधम् अङ्गम् यह बहुव्रीहिसमास है। पुगन्तं च लघूपधं चेति पुगन्तलघूपधम्, तस्य पुगन्तलघूपधस्य यह समाहारद्वन्द्वसमास है।

इस सूत्र में किस के स्थान पर गुण होगा यह स्थान साक्षात् नहीं कहा गया है। किन्तु गुणः यह विधेयपर गुणपद उच्चारित करके गुण विधान किया जाता है। अतः 'इको गुणवृद्धी' इस परिभाषा से इकः यह षष्ठ्यन्त पद यहां उपस्थित होता है। यह सूत्र अङ्गाधिकार में पढ़ा गया है। अङ्गसंज्ञक प्रत्यय पर में होने पर ही फल प्राप्त होता है। अतः प्रत्यये यह पद आक्षिप्त होता है। वहाँ भी सार्वधातुकार्धधातुकयोः यह सप्तमीद्विवचन है। ये दोनों भी प्रत्यय ही है। अतः प्रत्यये इसका प्रत्ययोः यह सप्तमीद्विवचन ग्रहण किया जाता है। तब पद योजना होती है - पुगन्तलघूपधस्य च अङ्गस्य इकः गुणः सार्वधातुकार्धधातुकयोः प्रत्ययोः इति।

और तब सूत्र का अर्थ होता है - सार्वधातुक और आर्धधातुक प्रत्यय परे में रहते पुगन्त लघूपध अङ्ग के इक् के स्थान पर गुण हो।

उदाहरण - सेधति।

सूत्रार्थसमन्वय - ''धात्वादेः षः सः'' इस पूर्वसूत्रोक्तप्रकार से सिध् धातु से ''वर्तमाने लट्'' इस से लट्, तिप्, शप् होने पर सिध् अ ति यह स्थिति होती है। शप् सार्वधातुकम् परे में है तब सिध् यह अङ्ग है।उसका इकार लघुसंज्ञक और उपधासंज्ञक है। अतः ''पुगन्तलघूपधस्य च'' इस प्रकृतसूत्र से इक् के इकार के स्थान पर गुण स्थान आन्तर्य से एकार होने पर सेधति यह रूप सिद्ध होता है।

षिध गत्याम् यह भ्वादिगणीय धातु है। इसके रूप यहाँ तक आए सूत्रों से सिद्ध होते हैं। अतः उन रूपों को छात्र के द्वारा सिद्ध करना चाहिए। सिद्ध रूप नीचे आगे दिए गए हैं - **सेधति सेधतः सेधन्ति। सेधसि सेधथः सेधथ। सेधामि सेधावः सेधामः।**

नीचे कुछ धातुएं दी गई है। यहां तक आए हुए कुछ सूत्रों का प्रयोग करके उनके रूप सिद्ध करने में समर्थ हैं। उन रूपों को अभ्यास के लिए छात्रों के द्वारा सिद्ध करना चाहिए।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - पठति, पठतः, पठन्ति। पठसि, पठथः, पठथ। पठामि, पठावः, पठामः।
2. **गद व्यक्तायां वाचि** - गदति, गदतः, गदन्ति। गदसि, गदथः, गदथ। गदामि, गदावः, गदामः।
3. **अर्च पूजायाम्** - अर्चति, अर्चतः, अर्चन्ति। अर्चसि, अर्चथः, अर्चथ। अर्चामि, अर्चावः, अर्चामः।
4. **व्रज गतौ** - व्रजति, व्रजतः, व्रजन्ति। व्रजसि, व्रजथः, व्रजथ। व्रजामि, व्रजावः, व्रजामः।
5. **कटैं वर्षावरणयोः** - कटति, कटतः, कटन्ति। कटसि, कटथः, कटथ। कटामि, कटावः, कटामः।
6. **क्षि क्षये** - क्षयति, क्षयतः, क्षयन्ति। क्षयसि, क्षयथः, क्षयथ। क्षयामि, क्षयावः, क्षयामः।
7. **चितीं संज्ञाने** - चेतति, चेततः, चेतन्ति। चेतसि, चेतथः, चेतथ। चेतामि, चेतावः, चेतामः।
8. **तप सन्तापे** - तपति, तपतः, तपन्ति। तपसि, तपथः, तपथ। तपामि, तपावः, तपामः।
9. **शुच शोके** - शोचति, शोचतः, शोचन्ति। शोचसि, शोचथः, शोचथ। शोचामि, शोचावः, शोचामः।

पाठगत प्रश्न 13.3

ऊपर में पढ़े गए पाठ को अवलंबित करके कुछ लघुत्तरीय प्रश्न दिए गए हैं इनके उत्तर लिखकर अंत में दिए गए उत्तरों से मिलान कीजिए।

1. षोपदेशधातु कौन सी है। उदारहण दीजिए।

2. णोपदेशधातु कौन सी है। उदारहण दीजिए।
3. उपदेश में धात्वादि के षकार का क्या होता है और किस सूत्र से?
4. उपदेश में धात्वादि के णकार का क्या होता है और किस सूत्र से?
5. उपदेश में यदि धातु इदित् है तो क्या होता है और किस सूत्र से?
6. सेधति इस रूप में सिध् धातु के इकार का एकार किस सूत्र से होता है?
7. सार्वधातुक परे में रहते लघूपध अङ्ग के इक् का गुण किस सूत्र से होता है?
8. नन्दति यहाँ नद् धातु उपदेश में किस प्रकार की है?
9. क्या परे में रहते लघूपध अङ्ग के इक् का गुण होता है?

    1. सार्वधातुक
    2. आर्धधातुक
    3. सार्वधातुक और आर्धधातुक
    4. इडागम

10. पुगन्तलघूपधस्य च इसका उदाहरण क्या है।

    1. भवति
    2. सेधति
    3. क्षयति
    4. अक्षैषीत्

11. नन्दति यहाँ नद् धातु का अर्थ क्या है।

    1. वृद्धि
    2. समृद्धि
    3. सत्ता
    4. अव्यक्त शब्द

पाठ का सार

'भूवादयो धातव' इस सूत्र से धातुपाठ में पठित शब्द स्वरूपों की धातुसंज्ञा होती है। धातुएं क्रियावाचक होती हैं। धातु का अर्थ फल और व्यापार होता है। धातु का व्यापार विभिन्न कालों में होता है यह दर्शाने के लिए धातु से परे विभिन्न लकार प्रयोग किए जाते हैं। ये लकार प्रधान रूप से 'लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः' इति इस सूत्र से विधान किए जाते हैं। उन लकारों का वर्तमान काल आदि अर्थ हैं तथा कर्ता, कर्म, भाव ये भी अर्थ हैं। यहां भाव शब्द का अर्थ क्रिया ही है। सकर्मक धातु से परे कर्ता और कर्म में लकार होता है। अकर्मक धातु से पर भाव में लकार होता है। कौन सी धातु से लकार कब कर्ता और कब कर्म में होता है यह विवक्षा के अधीन है।

धातु का अर्थ व्यापार वर्तमान काल में है यह द्योतित करने के लिए 'वर्तमाने लट्' इस सूत्र से लट् का विधान होता है। लकार के स्थान पर 'तिप्तस्झि-सिप्थस्थ-मिब्वस्मस्- तातञ्झ-थासाथांध्वम्-

इड्वहिमहिङ्' इस सूत्र से अट्ठारह आदेश विधान किए जाते हैं। ये लादेश कहलाते हैं। उसके बाद 'लः परस्मैपदम्' और 'तङानावात्मनेपदम्' इन दोनों सूत्रों की पर्यालोचना से यह प्राप्त होता है कि 'तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस् परस्मैपदसंज्ञक' हैं। तङ् प्रत्याहार शानच् और कानच् आत्मनेपदसंज्ञक होते हैं।

उपदेश में जिस धातु का अनुदात्ताच् इत् है, जिस धातु का ङकारः इत् है, उस प्रकार की धातुओं से 'अनुदात्तङित आत्मनेपदम्' इस सूत्र से आत्मनेपदसंज्ञक प्रत्यय विधान किए जाते हैं। उपदेश में जिस धातु का स्वरित अच् इत् है, जिस धातु का ञकार इत् है, और भी उस धातु का क्रियाफल कर्ता को जाता है इस प्रकार की धातुओं से आत्मनेपदविधान 'स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले' इस सूत्र से किया जाता है।

वाक्य में प्रयुक्त अथवा अप्रयुक्त युष्मद् का वाच्य कारक, और धातु से परे विहित लकार का वाच्य कारक यदि समान हो तो धातु से परे मध्यम संज्ञक प्रत्यय होता है ''युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः'' इस सूत्र से। अस्मद् लकार का समानाधिकरण है तो धातु से पर उत्तमसंज्ञक प्रत्यय अस्मद्युत्तम इस सूत्र से विधान होता है। जहाँ एक ही वाक्य में युष्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य तथा अस्मद् और लकार का सामानाधिकरण्य ये दोनों नहीं है, तो धातु से परे प्रथमसंज्ञक प्रत्यय शेषे प्रथमः इस सूत्र से विधान होता है।

धात्वधिकारोक्त तिङ् और शित् सार्वधातुकसंज्ञक 'तिङ्शित्सार्वधातुकम्' इस सूत्र से होता है। तिङ्शद्भ से भिन्न धातोः इससे विहित प्रत्यय 'आर्धधातुकं शेषः' इस सूत्र से आर्धधातुकसंज्ञा को प्राप्त करते हैं। किन्तु लिट् के स्थान पर विहित तिङ् लिट् च इस सूत्र से आर्धधातुकसंज्ञकक होता है। इस प्रकार आशीर्वाद अर्थ में विहित लिङ् के स्थान पर विहित तिङ् लिङाशिषि इस सूत्र से आर्धधातुकसंज्ञक होता है।

धातु से कर्तऽर्थ और सार्वधातुक पर है तो कर्तरि शप् इस सूत्र से धातु से परे शप् विधान किया जाता है। यदि सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक पर में इगन्त अङ्ग यदि हो तो 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' इस सूत्र से इक् को गुण विधान किया जाता है। इस प्रकार भू अ ति इस स्थिति में भू इसके ऊकार का ओकार होता है। ओकार का भी अवादेश होने पर भवति यह रूप सिद्ध होता है।

झि यह प्रथमबहुचन का प्रत्यय है। उस झकार के स्थान पर अन्त् आदेश झोऽन्तः इस सूत्र से होता है। उससे भवन्ति यह रूप सिद्ध होता है। यञादि सार्वधातुक पर में अदन्त अङ्ग के स्थान पर दीर्घः अतो दीर्घो यञि इस सूत्र से विधान होता है।

पाणिनि द्वारा धातुपाठ में कुछ धातुएं णादित्व षादित्व रूप से उपदिष्ट की गई हैं। उनके णकार का नत्व और षकार का सत्व धात्वादेः षः सः, णो नः इन सूत्रों से होता है।

जैसे सार्वधातुक अथवा आर्धधातुक पर में रहते इगन्ताङ्ग का गुण होता है, उसके समान ही जिस अङ्ग की उपधा लघ्वी है, वहाँ इग्लक्षण गुण विधान के लिए 'पुगन्तलघूपदस्य च' इस सूत्र में पाणिनि ने विधान किया है।

इस प्रकार ये विषय यहाँ उपन्यस्त हैं।

टिप्पणियाँ

पाठांत प्रश्न

1. लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. धातु के सकर्मकत्व और अकर्मकत्व का सोदाहरण प्रतिपादन कीजिए।
3. लकारों का परिचय दीजिए।
4. वर्तमाने लट् इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
5. काल को आश्रित करके लघुनिबन्ध लिखिए।
6. लः परस्मैपदम् इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. तङानावात्मनेपदम् इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
8. तङानावात्मनेपदम् इस सूत्रस्थ आन इससे चानश् का ग्रहण कहाँ नहीं होता है?
9. अनुदात्तङित आत्मनेपदम् इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
10. स्वरितञितः कर्तभिप्राये क्रियाफले इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
11. युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
12. अस्मद्युत्तमः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
13. शेषे प्रथमः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
14. प्रथममध्यमोत्तम के प्रयोग का अवलम्बन करके प्रबन्ध लिखिए।
15. धातु से लकार के स्थान पर तिप् के विधान तक कैसे सूत्र व्यस्थापित करते हैं, यह विशद् वर्णन कीजिए।
16. तिङ् शित् सार्वधातुकम् इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
17. आर्धधातुकं शेषः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
18. किसकी सार्वधातुकसंज्ञा अथवा किसकी आर्धधातुकसंज्ञा यह सार संग्रहित कीजिए?
19. सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र की व्याख्या कीजिए?
20. अतो दीर्घो यञि इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
21. पुगन्तलघूपधस्य च इस सूत्र की व्याख्या कीजिए।
22. इन रूपों को ससूत्र सिद्ध कीजिए। - भवति, भवन्ति, भवामि, भवामः।
23. ससूत्र रूपों को सिद्ध कीजिए। - नन्दति, सेधति, नन्दन्ति, सेधामि।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

12.1

1. लादेशाः सकर्मकधातुभ्यः कर्मणि कर्तरि च भवन्तीति प्रथमवाक्यम्। लादेशाः अकर्मकेभ्यः धातुभ्यः भावे कर्तरि च विधीयन्ते द्वितीयं वाक्यम्।
2. यस्य धातोः अर्थः फलम् एकस्मिन् कारके वर्तते, व्यापारः अपरस्मिन् कारके वर्तते स धातुः सकर्मकः कथ्यते।
3. यस्य धातोः फलम् यस्मिन् कारके वर्तते, व्यापारः अपि तस्मिन्नेव कारके वर्तते स धातुः अकर्मकः कथ्यते।
4. दश।
5. षट्।
6. चत्वारः।
7. लेट्।
8. यस्य धातोः अर्थः व्यापारः अर्थात् क्रिया वर्तमानकाले वर्तते स धातुः वर्तमानक्रियावृत्तिः कथ्यते। वर्तमाने (काले) क्रियायाः वृत्तिः यस्य स वर्तमानक्रियावृत्तिः धातुः।
9. भू।
10. लट्। वर्तमाने लट्।

12.2

1. तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस्-त-आताम्-झ-थास्-आथाम्-ध्वम्-इट्-वहि-महिङ् इति एते अष्टादश लादेशाः।
2. तिप् तस् झि सिप् थस् थ मिप् वस् मस् इति एतेषां परस्मैपदसंज्ञा।
3. त आताम् झ थास् आथाम् ध्वम् इट् वहि महिङ् इति एवञ्च शानच् कानच् इति एतेषाम् आत्मनेपदसंज्ञा।
4. लः परस्मैपदम्।
5. तङानावात्मनेपदम्।
6. यदा अनुबन्धरहितस्य उच्चारणं क्रियते तदा तेन अनुबन्धसहितस्य ग्रहणं कर्तव्यमिति निरनुबन्धकग्रहणे सानुबन्धकस्य इति परिभाषार्थः।

टिप्पणियाँ

12.3

1. आत्मनेपदसंज्ञक।
2. आत्मनेपदसंज्ञक।
3. धातुनिष्ठानि।
4. द्वन्द्वसमासस्य आदौ मध्ये अन्ते वा विद्यमानम् द्वन्द्वसमासस्य अनङ्गभूतम् पदम् द्वन्द्वसमासे विद्यमानैः पदैः प्रत्येकम् अभिसम्बध्यते, अन्वेति इति।
5. लस्य।
6. भ्वादिप्रकरणे आलोचितानि आत्मनेपदविधानस्य कानिचन निमित्तानि - उपदेशे यस्य धातोः अनुदात्ताच् इत् अस्ति, यस्य धातोः ङकारः इत् अस्ति द्वे निमित्ते। एवञ्च उपदेशे यस्य धातोः स्वरिताच् इत् अस्ति, यस्य धातोः ञकारः इत् अस्ति, अपि च तद्धातोः क्रियाफलं कर्तारम् गच्छति इत्यपि द्वे निमित्ते आत्मनेपदविधानस्य।
7. ञितो धातोः कर्तृगामिनि क्रियाफले आत्मनेपदं विधीयते।
8. एधँ वृद्धौ। कमुँ कान्तौ।
9. आत्मनेपदनिमित्तहीनः धातुः हि शेषपदार्थः।
10. तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः।
11. तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः।

12.4

1. वाक्ये युष्मद् लस्य समानाधिकरणः अस्ति चेत् मध्यमः विधीयते।
2. वाक्ये अस्मद् लस्य समानाधिकरणः अस्ति चेत् उत्तमः विधीयते।
3. वाक्ये मध्यमोत्तमयोः अविषये प्रथमः विधीयते।
4. वाच्यम्, अर्थः, अभिधेयः।
5. युष्मद्-लकारयोः सामानाधिकरण्यं चेत् धातोः मध्यमो विधेयः। अस्मद्-लकारयोः सामानाधिकरण्यं चेत् धातोः उत्तमो विधेयः इति उक्ताद् एतद्वयाद् अन्यः शेषः। सामानाधिकरण्यद्वयं वाक्ये नास्ति चेत् शेषः अस्ति। एवञ्च तदा धातोः प्रथमसंज्ञकः विधेयः।

13.1

1. धात्वधिकारोक्तः तिङ् शित् च सार्वधातुकसंज्ञः।
2. तिङ्शद्भ्योऽन्यो धातोरिति विहितः प्रत्ययः, लिडादेशः तिङ्, आशिषि लिङादेशः तिङ् च आर्धधातुकसंज्ञकाः भवन्ति।

3. तिङ्शद्भ्योऽन्यो धातोरिति विहितः प्रत्ययः शेषः।
4. कोऽपि लकारः सार्वधातुकसंज्ञकः नास्ति, तिङ्भिन्नत्वात् शिद्भिन्नत्वाच्च।
5. लिडादेशः तिङ्, आशिषि लिङादेशः तिङ् च आर्धधातुकसंज्ञकः भवतः।
6. आर्धधातुकम्।
7. लुटि लृटि लुङि लृङि च धातु-लकारयोः मध्ये तास् स्य च्लि स्य एते विधीयन्ते। ते धातोः विहिताः तिङ्भिन्नाः, शिद्भिन्नाः च सन्ति। अतः आर्धधातुकसंज्ञकाः सन्ति।

13.2

1. कर्तर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप् भवति।
2. सार्वधातुकार्धधातुकयोः इति सूत्रेण।
3. प्रत्ययावयवस्य झकारस्य स्थाने अन्त् इत्यादेशः स्यादिति झोऽन्तः इति सूत्रस्यार्थः।
4. भवसि।

13.3

1. उपदेशे यस्य धातोः आदिः षकारः भवति स षोपदेशधातुः। यथा षिध।
2. उपदेशे यस्य धातोः आदिः णकारः भवति स णोपदेशधातुः। यथा णीञ्।
3. उपदेशे धात्वादेः षस्य सकारः भवति, धात्वादेः षः सः इति सूत्रेण।
4. उपदेशे धात्वादेः णस्य नकारः भवति, णो नः इति सूत्रेण।
5. उपदेशे यदि धातुः इदित् अस्ति तर्हि इदितो नुम् धातोः इति सूत्रेण तस्य नुमागमः भवति।
6. पुगन्तलघूपधस्य च।
7. पुगन्तलघूपधस्य च।
8. नन्दति यहाँ नद् धातु उपदेश में टुनदि यह है।
9. ३
10. २
11. २

॥ इति त्रयोदशः पाठः॥

14

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिट् और लुट् लकार में रूपसिद्धि

व्याकरण का अध्ययन सोपान क्रम से होता है। अर्थात् दसवीं कक्षा की व्याकरण की पुस्तक को जो जानता है वह ही यहाँ पढ़ने और रूपों को समझने एवं सिद्ध करने में समर्थ हो सकता है।भूवादयो धातवः इस सूत्र से धातुपाठ में पठित धातुओं की धातुसंज्ञा होती हैं, यह दसवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तक में विषय था। इस समय भी तिङन्तप्रकरण में लट्-लकार में बहुत सूत्र आए हैं,जिनका यहाँ लिट् लकार में प्रयोग होता है। अतः लट् लकार का सम्यक् ज्ञान उपार्जित करके यहाँ प्रवर्तित होना चाहिए। और भी रूपसिद्धि में यद्यपि पूर्वसूत्रों और परिभाषाओं की बहुत आवश्यकता है फिर भी उन सबको सभी रूपों में नहीं कहा गया है। कुछ रूपों को नायक की भाँति प्रदर्शित किया गया है। अन्य रूपों में छात्र स्वयं उन स्थलों को समझेगें यह अपेक्षा है।

यहाँ सम्यक् धातुरूप की सिद्धि प्रधान लक्ष्य है। प्रथम धातुसंज्ञा। तत्पश्चात् लकारविधान। तत्पश्चात् लादेशविधान। तत्पश्चात् प्रसङ्ग होने पर शबादिविकरण विधान। लिट्-लकार में अभ्यासकार्य। तत्पश्चात् धातु और प्रत्यय के सन्धिकार्य। इस प्रकार क्रम से सामान्यतः रहे। सिद्ध होता है। यहाँ तक धातुसंज्ञा, लकारविधान, ल के स्थान पर तिङ् का विधान, कहीं धातु और प्रत्ययों की सन्धि,ये सब कार्य पूर्व पाठ में आ चुके हैं। यहाँ से बाद में लिट्-लकार में इनका उपयोग और अभ्यासादि कार्य नूतन विषय आता है।

इस पाठ में ही लिट् लकारोत्तर लुट् लकार प्रस्तुत है। क्योंकि लकारों का क्रम माहेश्वर सूत्र के क्रम के अनुसार है। यद्यपि स्वयं पाणिनी ने अष्टाध्यायी में भिन्न ही क्रम से सूत्रों को रखा है,तथापि सभी के द्वारा आदृत क्रम ही यहाँ भी आदरित है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप -

- लिट् लकार के सूत्र जानेंगे;
- लिट् लकार में धातु रूप सिद्ध करने में सक्षम होंगे;
- लिट् लकार को प्रयोग करने में समर्थ होंगे;
- संस्कृत व्याकरण में परोक्षकाल को जानेंगे;
- अभ्यास कार्य को करने में सक्षम होगें;
- भूधातु के लुट् लकार में रूप कैसे होते हैं जानेगें;
- लुट् लकार के सूत्रों की व्याख्या करने के लिए समर्थ होगें;
- अनद्यतन भविष्यत् काल की क्रिया के प्रकटन के लिए लुट् का प्रयोग करने में समर्थ होंगे;
- अनुवृत्ति,अधिकार, आक्षेप, तदादिविधि, तदन्तविधि, इनका और इनसे भी अधिक प्रयोगस्थलों को जानेगें।

भूधातु के लिट्-लकार के रूप

14.1 परोक्षे लिट्॥ (३.२.११५)

सूत्रार्थ - भूताऽनद्यतनपरोक्षार्थवृत्ति की धातु से लिट् हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र के द्वारा लिट् लकार का विधान किया जाता है। यह सूत्र द्विपदात्मक है। परोक्षे यह सप्तम्येकवचनान्त समस्तपद है। अक्ष्णोः परम् परोक्षम् यह अव्ययीभावसमास है। यहाँ अक्षि शब्द इन्द्रिय सामान्यवाची है। इन्द्रिय अगोचरत्व परोक्षत्व है। लिट् यह प्रथमा एकवचनान्त पद है। अनद्यतने लङ् इस सूत्र से अनद्यतने यह सप्तम्यन्त पद अनुवर्तित होता है। अद्य भवः अद्यतनः, अविद्यमानः अद्यतनः यस्मिन् सः अनद्यतनः कालः यह बहुव्रीहिसमास है। अतीत रात्रि के अन्त्य से लेकर आगामी रात्रि के प्रारम्भ तक सहित काल अद्यतन है। तद्भिन्न अनद्यतन है। भूते यह सूत्र अधिकार में पठित सूत्र है। भूतत्व नाम अतीतकाल का है। धातोः यह अधिकृत है। 'प्रत्ययः' (३.१.१) और 'परश्च' (३.१.२) ये सूत्रद्वय यहाँ अधिकृत है। यह सूत्र प्रत्ययाधिकार में पढा गया है।इस कारण से लिट् यह प्रत्यय है। धातोः यह पञ्चम्यन्त पद है। तस्मादित्युत्तरस्य इस परिभाषा के प्रभाव से और परश्च इस सूत्र के बल से लिट् धातु से अव्यवहित पर विधान किया जाता है। इससे भूत अनद्यतन परोक्ष में धातु से परे लिट् प्रत्यय होता है यह सूत्रगत पदों का अन्वय है। लिड् यह प्रथमान्त विधेय बोधक पद है। भूते अनद्यतने परोक्षे ये तीनों ही सप्तम्यन्त पदों में विषय सप्तमी है। इस प्रकार क्रिया के भूत, अनद्यतन और परोक्षत्व विवक्षा में धातु से लिट् हो यह सूत्रार्थ होता है।

टिप्पणियाँ

धातु का अर्थ व्यापार और फल है,यह कहा गया है। जिस धातु का अर्थ व्यापार अर्थात् क्रिया अनद्यतन भूत और परोक्ष में है, वह धातु भूताऽनद्यतनपरोक्षार्थवृत्ति कहलाता है। तस्मिन् काले क्रियायाः वृत्तिः यस्य स भूताऽनद्यतनपरोक्षक्रियावृत्तिः धातुः। यदि उस काल में क्रिया के प्रकटन की विवक्षा है तो धातु से लिट् विधान किया जाता है।

उदाहरण - रामः अयोध्याया राजा बभूव।

सूत्रार्थसमन्वय - अयोध्या में राजा राम थे। परन्तु उस अवस्था भूत राम को वक्ता ने प्रत्यक्ष नहीं किया। अतः यहाँ लिट् प्रयुक्त हुआ है।

बभूव - भू धातु से भूतानद्यतनपरोक्षार्थ वृत्तित्व विवक्षा में परोक्षे लिट् इस सूत्र से कर्ता में लिट्लकार विधान किया जाता है। लिट् के इकार और टकार की इत्संज्ञा और लोप करने पर भू ल् इस स्थिति में ल के स्थान पर प्रथमपुरुषैकवचन की विवक्षा में तिपि भू ति यह होता है। तब -

14.2 परस्मैपदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः॥ (३.४.८२)

सूत्रार्थ - लिट् के स्थान पर विधीयमान परस्मैपदसंज्ञक तिप् आदि नौ के स्थान पर णलादि नौ प्रत्यय हो।

सूत्रव्याख्या - पाणिनी के छः प्रकार के सूत्रों में यह साक्षात् लक्ष्यसंस्कारत्व होने से विधिसूत्र है। यह द्विपदात्मक सूत्र है। परस्मैपदानाम् यह षष्ठीबहुवचनान्त पद है। और यह स्थान षष्ठी है। उससे परस्मैपदसंज्ञक प्रत्ययों के स्थान पर यह अर्थ आता है। तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस् ये नौ परस्मैपदसंज्ञक प्रत्यय हैं। णल्-अतुस्-उस्-थल्-अथुस्-अ-णल्-व-मः यह प्रथमाबहुवचनान्त समस्तपद है। णल् च अतुस् च उस् च थल् च अथुस् च अः च णल् च वः च मः च णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः, यह इतरेतरद्वन्द्वसमास है। 'लिटस्तझयोरेशिरेच्' इस सूत्र से लिटः यह षष्ठ्यन्त पद अनुवर्तित होता है। धातोः (३.१.९१) इसका अधिकार है। धातोः लिटः परस्मैपदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः यह सूत्रगतपदों का अन्वय है। अतः लिट्स्थानी परस्मैदसंज्ञक नौ प्रत्ययों के स्न पर णलादि नौ प्रत्यय क्रम से हो यह अर्थ है।

णलादि नौ प्रत्यय हैं। परस्मैपदसंज्ञक भी नौ ही है। अतः स्थानी और आदेश की समान संख्या होने से यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से तिप् आदि के स्थान पर णलादि क्रम से होते हैं। वे हैं -

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
	स्थानी - आदेशः	स्थानी - आदेशः	स्थानी - आदेशः
प्रथमपुरुषः	तिप् - णल् (अ)	तस् - अतुस्	झि - उस्
मध्यमपुरुषः	सिप् - थल् (थ)	थस् - अथुस्	थ - अ
उत्तमपुरुषः	मिप् - णल् (अ)	वस् - व	मस् - म

तिप् आदि के स्थान पर णलादि विधान किए जाते हैं। जब तक णलादि तिप् आदि का स्थानग्रहण करते हैं तब तक तिप् आदि के धर्म णलादि पर आरोपित नहीं किए जाते हैं। अतएव णलादि की प्रत्ययसंज्ञा भी णलादि प्रयोग के बाद ही है। अत: जब तक णल् तिप् की निवृत्ति नहीं करता है तब तक णल् प्रत्यय नहीं है। प्रत्यय नहीं है तो 'चुटू' इस सूत्र से उसके आदि णकार की इत्संज्ञा नहीं होती है। अत: प्रयोग से पूर्व णल् अनेकाल्त्व है। अत: 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' इस सूत्र में सम्पूर्ण तिप् के स्थान पर ही आदेश होता है न कि 'अलोऽन्त्यस्य' इस परिभाषा से अन्त्य के स्थान पर। इस प्रकार उन उन प्रत्ययों में जानना चाहिए। और भी अ यह आदेश यद्यपि एकाल् है फिर भी यह (अ+अ) दोनों अकार के प्रश्लेष होने से संहिता से सिद्ध आदेश है। अतो गुणे यह पररूप यहाँ होता है, अत: यहाँ सवर्णदीर्घ नहीं होता है। उससे यह सर्वादेश का निर्बाध सम्भव होता है।

उदाहरण -

स्थानी	आदेश:	उदाहरणम्
तिप्	णल् (अ)	बभूव
तस्	अतुस्	बभूवतु:
झि	उस्	बभूवु:
सिप्	थल् (थ)	बभूविथ
थस्	अथुस्	बभूवथु:
थ	अ	बभूव
मिप्	णल्	बभूव
वस्	व	बभूविव
मस्	म	बभूविम

सूत्रार्थसमन्वय - भू ति इस अवस्था में परस्मैपदसंज्ञक तिप् के स्थान पर प्रकृतसूत्र से णलादेश, ल की हलन्त्यम् इस सूत्र से इत्संज्ञा होने पर और तस्य लोप: इस सूत्र से ल का लोप होने पर ण इसका अनेकाल्त्व होने से 'अनेकाल्शित् सर्वस्य' इस सूत्र से तिप् के सर्वस्व के स्थान पर णादेश होने पर भू ण यह होता है। यहाँ ण इसकी स्थानिवद्भाव से प्रत्ययसंज्ञा होती है। चुटू इस सूत्र से प्रत्यय के आदि णकार की इत्संज्ञा होती है, और तस्य लोप: इस सूत्र से ण का लोप होता है। तब भू अ यह स्थिति होती है। तब -

14.3 भुवो वुग् लुङ्-लिटो:॥ (६.४.८८)

सूत्रार्थ - लुङ् और लिट्लकार सम्बन्धी अच् वर्ण परे रहते भू धातु से वुक् आगम होता है।

सूत्रव्याख्या - यह सूत्र साक्षात् लक्ष्यसंस्कार रूप होने से विधि सूत्र की कोटि में आता है। इस त्रिपदात्मक सूत्र में भुव:, वुक्, लुङ्लिटो: यह पदच्छेद है। यहाँ भुव: यह भू शब्द का षष्ठ्यन्त

टिप्पणियाँ

रूप है। लुङ्लिटोः यह सप्तमीद्विवचनान्त समस्तपद है। दोनों पद ही उद्देश्यबोधक पद है। लुङ् च लिट् च लुङ्लिटौ यह इतरेतरयोगद्वन्दसमास है, तयोः लुङ्लिटोरिति। वुक् यह प्रथमान्त विधेयसम्पर्क पद है। अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ इस सूत्र से अचि यह सप्तम्यन्त पद यहाँ अनुवर्तित किया गया है। लुङ्लिटोः और अचि यह दोनों पद समविभक्ति के होने से अभेद अर्थबोध को उत्पन्न करता है। किन्तु अचि यह पद लुङ और लिट् दोनों में पृथक रूप से अन्वित होता है। अतः लुङ् सम्बन्धी अच् परे रहते तथा लिट् सम्बन्धी अच् परे रहते यह अर्थ आता है। अङ्गस्य इसका अधिकार है। पदयोजना - लुङ्लिटोः अचि अङ्गस्य भुवः वुक्। अङ्गस्य भुवः ये दोनों पद षष्ठ्यन्त समानविभक्ति वाले हैं। परन्तु यहाँ तदन्तविधि नहीं है। अभेदान्वय होता है। अङ्ग है जो भू उसका यह अर्थ होता है। सूत्रार्थ होता है - लुङ् और लिट्सम्बन्धी अच् परे रहते अङ्गसंज्ञक भू को वुगागम होता है।

वुक् का ककार उच्चारण के लिए है किंतु उकार उच्चारणार्थ है। किन्तु ककार औपदेशिक होने से 'हलन्त्यम्' इस सूत्र से इत्संज्ञक है। अतः वुक् यह आगम 'आद्यन्तौ टकितौ' इस परिभाषा से होने से कित्त्वात् होने से भू शब्द का अंतिम अवयव होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भू अ इस स्थिति में लिट्सम्बन्धी अकाररूप में अच् वर्ण परे रहते प्रकृतसूत्र से भू इसको वुक् यह आगम होता है। और वह आगम कित्त्व होने से भूशब्द के अन्त्य ऊकार से परे होता है, और उसका ही अन्त्य अवयव होता है। तब भूव् अ यह होता है। तब -

पाठगत प्रश्न 14.1

1. क्या लट् लकार में परोक्षत्व है?
2. लिट् कब प्रयोग करना चाहिए?
3. तिप् के स्थान पर णल् कैसे सर्वादेश है?
4. भू को वुक् किन लकारों में है?
5. भुवो वुग् लुङ्-लिटोः इस सूत्र से विहित वुक् क्या है-

   1. आगमः 2. आदेशः 3. प्रत्ययः 4. स्थानी

14.4 लिटि धातोरनभ्यासस्य॥ (६.१.८)

सूत्रार्थ - लिट् परे रहते अनभ्यासधात्ववयवस्य एकाचः प्रथमस्य द्वे स्तः, आदिभूतादचः परस्य तु द्वितीयस्य।

सूत्रव्याख्या - छह प्रकार के सूत्रों में यह विधि सूत्र है। त्रिपदात्मक इस सूत्र में लिटि धातोः अनभ्यासस्य यह पदच्छेद है। वहाँ लिटि यह सप्तम्येकवचनान्त पद है। और औपश्लेष अधिकरण

सप्तम्यर्थ है। धातोः यह षष्ठ्येकवचनान्त पद है। अवयव अवयवी भावसम्बन्ध से यहाँ षष्ठी विहित है। अतः धातु का अवयव का यह अर्थ है। अनभ्यासस्य यह षष्ठ्येकवचनान्त समस्तपद है। न अभ्यासः अनभ्यासः, तस्य अनभ्यासस्य यह नञ्समास है। अभ्यास संज्ञा से रहित यह उसका अर्थ है। और यह धातोः इसका विशेषण है सप्तमी विभक्ति होने से। एकाचो द्वे प्रथमस्य और अजादेर्द्वितीयस्य यह दोनों सूत्र यहां अधिकार करते हैं। वहां एकाचः यह षष्ठी एकवचनान्त समस्तपद है। एकः अच् यस्य यस्मिन् वा स एकाच्, तस्य एकाचः यह बहुव्रीहिसमास है। और यह धातोः इससे संबंधित है अतः धातु के अवयव एकाच् का यह उसका अर्थ है। प्रथमस्य यह भी षष्ठी एकवचनान्त है, एकाचः इसका विशेषण है। द्वे यह प्रथमान्त विधेयबोधक पद है। अजादेः यह पञ्चम्येकवचनान्त समस्तपद है। अच् चासौ आदिश्च अजादिः यह कर्मधारयसमास है। तस्माद् अजादेः इति। द्वितीयस्य यह षष्ठ्येकवचनान्त पद है। सूत्रगत पदों का अन्वय इस प्रकार है - लिटि अनभ्यासस्य धातोः प्रथमस्य एकाचः द्वे, अजादेः द्वितीयस्य इति। द्वे इससे द्वि का उच्चारण अथवा द्वि का प्रयोग विधान किया जाता है।

सूत्र में दो वाक्य हैं। वह है - प्रथम वाक्य - लिट् परे रहते अभ्यास संज्ञारहित धातु के अवयवभूत के प्रथम एकाच् भाग का द्वित्व होता है।

द्वितीय वाक्य - धातु अनेकाच् तथा अजादि हो तो लिट् परे रहते उस ही धातु के द्वितीय एकाच् भाग का द्वित्व होता है।

यहाँ उत्तर वाक्य में अजादेर्द्वितीयस्य यहाँ द्वितीयस्य इस वचन से धातु में अनेकाच्त्व विशिष्ट होता है। अन्यथा एकाच् धातु में द्वितीय अच् भाग के अभाव होने से द्वितीय का यह वचन व्यर्थ होता।

अतः सूत्रार्थ इस प्रकार होता है - लिट् परे रहते अभ्यास संज्ञारहित धातु के अवयव प्रथम एकाच् का दो बार प्रयोग होता है, आदिभूत अच् के परे का द्वितीय एकाच् भाग का दो बार प्रयोग होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय- भू धातु से लिट्, तिप्, णल् और वुक् आगम करने पर भूव् अ यह स्थिति हुई। धातु की अभ्यास संज्ञा नहीं है। अतः प्रकृतसूत्र से लिट् परे रहते प्रथम अच् भाग का दो बार प्रयोग होता है। उससे भूव् भूव् अ यह होता है। तब -

[**विमर्श** - एकाचः यहाँ बहुव्रीहि ही ग्रहण करने योग्य है। एकश्चासौ अच्च एकाच्, तस्य एकाचः यह कर्मधारय स्वीकार करने पर तो इणादि एकाच् धातुओं का द्वित्व सिद्ध होता है, किन्तु पचादि धातुओं का द्वित्व नहीं होता है। उससे पपाच इत्यादि सिद्ध नहीं होता है। बहुव्रीहि स्वीकार करने में तो इयाय इत्यादि स्थल पर इणादि का द्वित्व व्यपदेशिवद्भाव से सिद्ध होता है, दोष नहीं है। किन्तु अजादेः यहाँ कर्मधारयसमास ही ग्राह्य है। अन्यथा अच् आदिर्यस्य अजादिः, तस्य अजादेः यह बहुव्रीहि स्वीकार करने पर तो इन्द्रीय इस क्यजन्त से सन् परे होकर इन्द्रिद्रीयिषति यह इष्ट रूप सिद्ध नहीं होता।]

टिप्पणियाँ

14.5 पूर्वोऽभ्यासः।। (६.१.४)

सूत्रार्थ - षाष्ठद्वित्व प्रकरण में जो द्वित्व विहित है, उनमें पूर्व की अभ्यास संज्ञा होती है।

सूत्रव्याख्या - शक्तिग्राहक होने से छः प्रकार के पाणिनीय सूत्रों में यह संज्ञासूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। पूर्वः अभ्यासः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। दोनों ही पद प्रथमैकवचनान्त भी है। इस सूत्र से अभ्यास संज्ञा का विधान होता है। किसकी यह संज्ञा होती है यह आकाङ्क्षा होने पर एकाचो द्वे प्रथमस्य (६.१.१) इस सूत्र से द्वे यह पद अनुवर्तित होता है। और वह द्वयोः इस षष्ठीद्विवचन के रूप में विपरिणमित होता है। यह सूत्र एकाचो द्वे प्रथमस्य इस सूत्र के अधिकार में पढा गया है। अतः इससे दो बार कह गए में पूर्वभाग की अभ्यास संज्ञा विधान की जाती है। द्वयोः पूर्वः अभ्यासः यह अन्वय है। सूत्रार्थ होता है - षाष्ठद्वित्व प्रकरण में जो दो विहित हैं, उनका पूर्वभाग अभ्यास संज्ञक होता है।

अभ्यास संज्ञा का फल अभ्यासे चर्च (८.४.५४), ह्रस्वः (७.४.४९) इत्यादि सूत्रों में स्पष्ट है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भू धातु से लिटि धातोरनभ्यासस्य (६.१.८) से द्वित्व करने पर भूव् भूव् अ यह स्थिति उत्पन्न हुई। यहाँ द्वित्वविधायकसूत्र षाष्ठद्वित्वप्रकरण में विद्यमान है। अतः प्रकृतसूत्र से पूर्वभाग की अभ्यास संज्ञा होती है। तब -

14.6 हलादिः शेषः। ७.४.६०।।

सूत्रार्थ - अभ्यास का आदि हल् ही शेष रहता है, अन्य हल् का लोप होता है।

सूत्रव्याख्या - छः प्रकार के पाणिनीय सूत्रों में यह विधिसूत्र है। यह त्रिपदात्मक सूत्र है। हल् आदिः शेषः यह पदच्छेद है। तीनों ही पद प्रथमैकवचनान्त हैं। शिष्यते यह शेषः है। इतरनिवृत्तिपूर्वक अवस्थित अर्थ में विद्यमान शिष् धातु से कर्म में घञ् करने से यह शब्द निष्पन्न है। यहाँ लोपोऽभ्यासस्य इस सूत्र से अभ्यासस्य यह षष्ठ्यन्त पद अनुवर्तित होता है। इस प्रकार अभ्यासस्य आदिः हल् शेषः यह पदयोजना है। अतः सूत्रार्थ होता है- अभ्यास का आदि हल् ही शेष रहता है, अन्य हल् लुप्त होते हैं। शिष् धातु के इतरनिवृत्तिरूप व्यापार से अन्य हलों का अदर्शन होता है यह फलितार्थ कथन है।

सूत्र में हलादिः यहाँ समास नहीं है। इस सूत्र से अभ्यास में विद्यमान हलों में आदि हल् शेष रहता है, अवशेष रहता है, लुप्त नहीं होता है। अन्य में हल् लुप्त होते हैं, अदर्शनतां व्यवहाराभावं गच्छन्ति यह अर्थ है।इस प्रकार इस सूत्र से अभ्यास में विद्यामान अचों के विषय में कुछ भी नहीं कहा गया है। अतः आदि अच् हो अथवा अनादि अच् हो वह लुप्त नहीं होता है, इस सूत्र से। हल् ही इसका विषय है न कि अच्।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भूव् भूव् अ इस अवस्था में पूर्वोऽभ्यासः (६.१.४) इस सूत्र से भूव् इस पूर्व की अभ्यास संज्ञा हुई। और तत्पश्चात् प्रकृतसूत्र से अभ्यास संज्ञक भूव् इसके हलों में आदि भकार शेष रहता है, अन्य हल् अर्थात् वकार लुप्त हो जाता है। अभ्यास में जो ऊकार है वह लुप्त नहीं होता है। उससे भू भूव् अ यह होता है। तब -

14.7 ह्रस्वः॥ (७.४.५९)

सूत्रार्थ - अभ्यास के अच् को ह्रस्व हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है और एकपदात्मक है। ह्रस्वः यह प्रथमान्त विधेयबोधक पद है। सूत्र में उद्देश्य बोधक पद नहीं है। यहाँ लोपोऽभ्यासस्य इस सूत्र से उद्देश्य सम्पर्क अभ्यासस्य यह षष्ठ्यन्त पद अनुवर्तित होता है। इस सूत्र में स्थानी साक्षात् उल्लिखित नहीं है। इस प्रकार ह्रस्वः इस विधेयपरे शब्द को उच्चारित करके अच् विधान किया जाता है। अतः अचश्च इस परिभाषा से यहाँ अचः यह षष्ठ्यन्त पद उपस्थापित होता है। अभ्यासस्य अचः ह्रस्वः यह पदयोजना है। सूत्रार्थ होता है - अभ्यास के अच् को ह्रस्व हो।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भू भूव् अ इस अवस्था में प्रकृतसूत्र से अभ्यास संज्ञक भू इसके ऊकार का ह्रस्व उकार करने पर भु भूव् अ यह स्थिति होती है। तब -

14.8 भवतेरः॥ (७.४.७३)

सूत्रार्थ - भू धातु के अभ्यास के उकार का अकार हो,लिट् परे रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। भवतेः अः यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। इस द्विपदात्मक सूत्र में भवतेः यह षष्ठ्यन्त पद है। भवति इसका षष्ठ्येकवचन में यह रूप है। भू धातु यह उसका अर्थ है। इक्शितपौ धातुनिर्देशे इस शास्त्र से धातु के निर्देश के लिए शितप् का प्रत्यय योग होने पर भू धातु का भवतिः यह सुबन्त रूप होता है। उसका ही षष्ठी में यह रूप है। यह स्थान षष्ठी है। अः यह प्रथमान्त विधेय सम्पर्क पद है। व्यथो लिटि इस सूत्र से लिटि यह सप्तम्यन्त पदम अनुवर्तित होता है। यहाँ लोपोऽभ्यासस्य इस सूत्र से अभ्यासस्य यह षष्ठ्यन्त पद अनुवर्तित हुआ है, इस प्रकार लिटि भवतेः अभ्यासस्य अः ये सूत्रगत पदों का अन्वय है। यहाँ अभ्यासस्य यह अल् समुदाय बोधक होने से स्थान षष्ठी सुना जाता है। अतः अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से भू धातु के अभ्यास के अन्त्य अल् के स्थान पर ही अकार होता है। यहाँ अन्त्य अल् उकार ही है।इस प्रकार अर्थ प्राप्त होता है - लिट् संज्ञक प्रत्यय परे हो तो भू धातु के अभ्यास उवर्ण का अकार होता है, यह सूत्रार्थ है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भू धातु से लिट्, तिप्, णल्, वुकागम, आदि अवयव का द्वित्व, अभ्यास संज्ञा और अभ्यास कार्य होने पर भु भूव् अ यह स्थिति हुई। यहाँ णल् यह लिट् संज्ञक प्रत्यय पर में है। अतः प्रकृतसूत्र से भू धातु के अभ्यास उकार के स्थान पर अकारादेश होता है। अतः भ भूव् अ यह स्थिति होती है। तब -

14.9 अभ्यासे चर्च॥ (८.४.५३)

सूत्रार्थ - अभ्यास में झलों को चर् और जश् हो। झशों को जश् और खयों को चर् हो यह विवेक है।

टिप्पणियाँ

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। अभ्यासे चर् च यह सूत्रगत पदच्छेद है। अभ्यासे यह सप्तम्यन्त पद है। चर् यह प्रथमान्त पद है। चर् यह प्रत्याहार है। वर्ग के प्रथम वर्ण और श् ष् स् ये उसके वाच्य हैं। च यह अव्ययपद है। झलां जश् झशि इस सूत्र से झलाम् यह षष्ठ्यन्त पद और जश् यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित है। झल् यह प्रत्याहार है। अतः अभ्यासे झलां जश् चर् च यह सूत्रगत पदान्वय है। अतः सूत्र का अर्थ होता है अभ्यास में झलों के स्थान पर चर् और जश् होते हैं।

विशेष - यहाँ झल् प्रत्याहारस्थ वर्णों के स्थान पर चर् प्रत्याहारस्थ वर्ण और जश् प्रत्याहारस्थ वर्ण विधान किए जाते हैं। झल् प्रत्याहार में चौबीस वर्ण हैं, तथा जश् प्रत्याहार में और चर् प्रत्याहार में मिलाकर दश वर्ण हैं। इस प्रकार स्थानी चौबीस और आदेश दस ही हैं। वहाँ झश् प्रत्याहारस्थ वर्णों के स्थान पर जश् प्रत्याहारस्थ वर्ण हो।और खय् प्रत्याहारस्थ वर्णों के स्थान पर चर् प्रत्याहारस्थ वर्ण हो।और यह स्थानेऽन्तरतमः इस परिभाषा से यत्नों का आन्तरतम्य परीक्षण करके ही निर्णय लिया गया है। तत्र खय् प्रत्याहारस्थ वर्णों का बाह्यप्रयत्न हैं - विवार, श्वास और अघोष। चर् प्रत्याहारस्थ वर्णों के भी उसी प्रकार प्रयत्न किए गये हैं। इस प्रकार झश् प्रत्याहारस्थ वर्णों के स्थान पर जश् प्रत्याहारस्थ वर्ण विधान किए जाते हैं, बाह्यप्रयत्न के आन्तरतम्य के अनुसार।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भू धातु से लिट्, तिप्, णल्, द्वित्व, अभ्यास संज्ञा और ह्रस्वादि कार्य होने पर भ भूव् अ इस स्थिति में अभ्यास झल् के स्थान पर चर् और जश् आदेश होता है। यहाँ प्रकृतसूत्र से झश् के भकार के स्थान पर स्थानेऽन्तरतमः इस परिभाषा बल से स्थानों आन्तर्य से जश् बकार आदेश होता है। और बभूव यह रूप सिद्ध होता है।

भू धातु से लिट् के विधान से आरम्भ करके बभूव इस रूप निष्पत्ति तक बहुत विधिसूत्र, संज्ञासूत्र और परिभाषासूत्र प्रवर्तित हुए हैं। उनमें बहुत से सूत्र यहाँ से पूर्व में उपन्यस्त हैं। कुछ पूर्वप्रकरणों में हैं। और कुछ दसवीं कक्षा की पाठ्यपुस्तक में हैं। अतः सभी सूत्रों का समावेश होने पर समग्र रूप कैसे सिद्ध होता है, यह एकत्रित करके प्रदर्शित किया गया है। इस प्रकार रूप से अन्य रूपों में जिन सूत्रों की आवश्यकता हो, उनको स्थल देखकर छात्र के द्वारा स्वयं प्रयोग करना चाहिए। जिस क्रम से बभूव इस रूप को सिद्ध करने के लिए सूत्रों की आवश्यकता हुई, उसी क्रम से अन्यत्र भी सूत्र प्रवर्तित हो, ऐसा तो नहीं होता है। सभी जगह क्रम भिन्न हो सकता है। अतः सकल रूपों की सिद्धि छात्र के द्वारा स्वयं समझकर करनी चाहिए।

यहाँ बभूव इसकी प्रक्रिया नीचे प्रदर्शित करते हैं -

तिङन्त में रूपसाधन में कुछ विभाग हैं। यथा -

१) धातुपरिचय, २) लकारविधान, लकार के स्थान पर तिङ आदि विधान, ३) तिङ आदेशविधान, विकरणविधान, ४) सन्धि, अभ्यासादि कार्य, लोपादि इस प्रकार के कार्य, ५) विसर्गादिविधान। इस प्रकार क्रम से नीचे रूप प्रदर्शित करते हैं।

बभूव

१. **धातुपरिचय** - सत्ता अर्थ में वर्तमान भ्वादिगण में पठित होने से भूवादयो धातव इस सूत्र से धातुसंज्ञक अकर्मक सेट् भू यह धातु है।

२. **लकारविधान, लकार के स्थान पर तिप् आदि विधान** - भूधात्वर्थ सत्ता क्रिया की भूतानद्यतनपरोक्ष में वृत्तित्वविवक्षा होने पर परोक्षे लिट् इस सूत्र से भू धातु से विवक्षा होने पर कर्ता में लिट्, अनुबन्धलोप होने पर भू ल् यह होने पर, ल के स्थान पर तिप्तस्झि-सिप्थस्थ-मिब्वस्मस्-तातांझ-थासाथांध्वम्-इड्वहिमहिङ् इस सूत्र से अष्टादश लादेशों में भू धातु से आत्मनेपद निमित्तहीन होने से शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से तिप् आदि नौ प्रत्ययों में से मध्यम और उत्तम का अविषय होने से और कर्ता के एकत्व होने से प्रथमपुरुषैकवचन की विवक्षा में तिप्, अनुबन्धलोप होने पर भू ति यह स्थिति होती है।

३. **तिप् आदेशविधान, विकरणविधान** - प्रत्ययाधिकार में विहित तिप् प्रत्ययसंज्ञक होता है। परस्मैपदानां णलतुसुस्-थलथुस-णल्वामाः इस सूत्र से तिप् के स्थान पर सर्वादेश णल् होकर अनुबन्धलोप होने परे भू ण इस स्थिति में तिप् के प्रत्यय होने के कारण ण का भी स्थानिवद्भाव से प्रत्ययत्व होने से चुटू इस सूत्र से प्रत्यय के आद्य णकार की इत्संज्ञा होने पर और तस्य लोपः इससे लोप करने पर भू अ यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् अजादि लिडादेश अप्रत्यय प्रत्यय पर में होने से भुवो वुग् लुङ्लिटोः इस सूत्र से वुगागम, अनुबन्धलोप, कित्त्व होने से आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा से अन्त्यावयव होकर भूव् अ यह स्थिति होती है।

४. **सन्धि, अभ्यासादिकार्य, लोपादि इस प्रकार के कार्य** - लिटि धातोरनभ्यासस्य इस सूत्र से अनभ्यास धातु के अवयव एकाच् के आगम सहित भूव् इस समुदाय का द्वित्व होने पर भूव् भूव् अ यह होने पर द्विरुक्त के पूर्वभाग भूव् इसकी पूर्वोऽभ्यासः इस सूत्र से अभ्यास संज्ञा होती है। तब हलादिः शेषः इस सूत्र से अभ्यास के आदि हल् के शेष रहने पर भू भूव् अ यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् ह्रस्वः इस सूत्र से अभ्यास के अच् ऊकार के ह्रस्व होने पर भु भूव् अ इस स्थिति में भवतेरः इस सूत्र से अभ्यास उकार का अकार होने पर भ भूव् अ यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् अभ्यासे चर्च इस सूत्र से अभ्यास भकार के स्थान पर आन्तर्य से बकार होने पर बभूव् अ होने पर वर्णसम्मेलन होकर बभूव यह रूप सिद्ध होता है।

बभूवतुः - (सभी रूपसिद्धियों में कुछ सामान्य विषय होते हैं। जैसे धातुपरिचय आदि। अतः वह पुनः पुनः नहीं प्रदर्शित किया जा रहा है। परीक्षादि में छात्र के द्वारा वह स्वयं समझकर लिखने योग्य है यह आशा है।)

(१+२+३) - भू धातु से परोक्षे लिट् इस सूत्र से लिट्, ल के स्थान पर प्रथमपुरुषद्विवचन विवक्षा में तस, भू तस् इस स्थिति में परस्मैपदानां णलतुसुस्-थलथुस-णल्वामाः इस सूत्र से तस् के स्थान पर सर्वादेश अतुस् होने पर भू अतुस् यह स्थिति होती है। तत्पश्चात् अजादि लिडादेश अतुस् प्रत्यय पर में रहते भुवो वुग् लुङ्लिटोः इस सूत्र से वुगागम्, कित्त्व होने से अन्तावयव होने पर अनुबन्धलोप

टिप्पणियाँ

होकर भूव् अतुस् यह स्थिति होती है।

४. तत्पश्चात् लिटि धातोरनभ्यासस्य इस सूत्र से अनभ्यास धातु के अवयव एकाच् आगम सहित भूव् इस समुदाय का द्वित्व होने पर भूव् भूव् अतुस् यह होने पर द्विरुक्त के पूर्वभाग भूव् इसका पूर्वोऽभ्यासः इस सूत्र से अभ्यास संज्ञा होने पर हलादिः शेषः इस सूत्र से अभ्यास का आदि हल् शेष रहने पर भू भूव् अतुस् यह होने पर ह्रस्वः इस सूत्र से अभ्यास के अच् ऊकार के ह्रस्वत्व होने से भु भूव् अतुस् इस स्थिति में भवतेरः इस सूत्र से अभ्यास के उकार का अकार होने पर भ भूव् अतुस् यह स्थिति होती है। तब अभ्यासे चर्च इस सूत्र से अभ्यास के भकार के स्थान पर आन्तर्य से बकार होने पर बभूव् अतुस् यह स्थिति होती है।

५. **विसर्गादि का विधान** - बभूव् अतुस् इस समुदाय की तिङन्ततव होने से सुप्तिङन्तं पदम् इस सूत्र से पदसंज्ञा होने पर ससजुषो रुः इससे पदान्त सकार के रुत्व,अनुबन्धलोप होने पर ब भूव् अतुस् यह होने पर, अवसान पर में रहते खरवसानयोर्विसर्जनीयः इस सूत्र से पदान्त रेफ के विसर्ग होने पर ब भूव् अतुः यह होने पर वर्णसम्मेलन करने पर बभूवतुः यह रूप सिद्ध होता है।

सभी स्थलों पर सभी सूत्रों का प्रयोग करके सभी रूपों की सिद्धि विस्तार भय से विस्तारपूर्वक प्रदर्शित नहीं की गई हैं।

बभूवुः - भू धातु से परोक्षे लिट् इस से कर्ता में लिट्, प्रथमपुरुषबहुवचन विवक्षा में झि प्रत्यय, भू झि यह होने पर परस्मैपदानां णलतुसुस्-थलथुस-णल्वामाः इस सूत्र से झि के स्थान पर सर्वादेश उस् करने पर भू उस् यह स्थिति होती है। तब अजादि लिडादेश उस् प्रत्यय पर में रहते भुवो वुग् लुङ्लिटोः इस सूत्र से वुगागम होने पर कित्त्व होने से अन्तावयव होकर अनुबन्धलोप होने पर भूव् उस् यह स्थिति होती है।

तत्पश्चात् लिटि धातोरनभ्यासस्य इस सूत्र से भूव् इस समुदाय के द्वित्व होने पर भूव् भूव् उस् इस स्थिति में द्विरुक्त के पूर्वभाग भूव् इसकी पूर्वोऽभ्यासः इस सूत्र से अभ्यास संज्ञा होने पर हलादिः शेषः इस सूत्र से अभ्यास के आदि हल् शेष रहते भू भूव् उस् यह होता है। उसके बाद ह्रस्वः इस सूत्र से अभ्यास के अच् ऊकार का ह्रस्वत्व होने पर भु भूव् उस् इस स्थिति में भवतेरः इस सूत्र से अभ्यास उकार के स्थान पर अकार होकर भ भूव् उस् इस स्थिति में अभ्यासे चर्च इस सूत्र से अभ्यास भकार के बकार होने पर बभूव् उस् यह होता है। पदान्तसकार के रुत्व,अनुबन्धलोप होने पर और रेफ का विसर्ग करने पर वर्णसम्मेलन होकर बभूवुः यह रूप सिद्ध होता है।

बभूविथ - भू धातु से परोक्षे लिट् इस सूत्र से कर्ता में लिट्, भू ल् यह होने पर ल के स्थान पर मध्यमपुरुषैकवचन विवक्षा में सिप्, अनुबन्धलोप होने पर भू सि इस स्थिति में परस्मैपदानां णलतुसुस्-थलथुस-णल्वामाः इस सूत्र से सिप् के स्थान पर सर्वादेशे थल् होने पर, अनुबन्धलोप होने पर भू थ यह होता है। तब -

14.10 आर्धधातुकस्येड् वलादेः॥ (७.२.३५)

सूत्रार्थ - वलादि आर्धधातुक को इडागम हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। आर्धधातुकस्य इट् वलादेःयह सूत्रगत पदच्छेद हैं। आर्धधातुकस्य और वलादेः ये दोनों पद षष्ठ्येकवचनान्तं पद है। इट् यह प्रथमान्त पद है। वलादेः आर्धधातुकस्य इट् यह सूत्रगत पदों का अन्वय है। अतः वलादि आर्धधातुक को इडागम होता है यह सूत्रार्थ है। इट् के टकार की हलन्त्यम् इस सूत्र से इत्संज्ञां प्राप्त होती है। तत्पश्चात् तस्य लोपः इस सूत्र से उसका लोप होता है। अतः यह इडागम टित् है। उससे आद्यन्तौ टकितौ इस परिभाषा से यह (इट्) आगमी का आद्य अवयव होता है।

उदाहरण - बभूविथ।

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व में आए सूत्रों के अनुसार भू धातु से लिट्, सिप्, थल्, अनुबन्धलोप होने पर भू थ यह स्थिति हुई। वहाँ थल् लिडादेश सिप् के स्थान पर विहित हुआ है। और लिट् च इस सूत्र से सिप् की आर्धधातुक संज्ञा होती है। उसके स्थान पर विहित थल् की भी तिङ्भिन्न और शिद्भिन्न होने से आर्धधातुकं संज्ञा होती है। थल् का आदिवर्ण वल है। अतः थल् वलादि है। इस प्रकार थल् के आर्धधातुक और वलादि होने से प्रकृत सूत्र से इडागम होता है। वह इडागम आर्धधातुकस्य इस षष्ठी से आर्धधातुक को उद्देश्य कर विहित है। अतः वह थल् का आद्यावय होता है।। तत्पश्चात् भू इथ यह स्थिति होती है। उसके बाद भुवो वुग् लुङ्लिटोः इस सूत्र से वुगागम, अन्त्यावयव होने पर भूव् इथ यह होने पर लिटि धातोरनभ्यासस्य इस सूत्र से द्विरुक्त के पूर्वभाग भूव् इसका पूर्वोऽभ्यासः इस सूत्र से अभ्यास संज्ञा होने पर हलादिः शेषः इस सूत्र से अभ्यास के आदि हल् के शेष रहने पर भू भूव् इ थ इस स्थिति में ह्रस्वः इस सूत्र से अभ्यास के अच् ऊकार का ह्रस्वत्व होने पर भु भूव् इ थ यह होने पर भवतेरः इस सूत्र से अभ्यास के उकार का अकार होने परभ भूव् इ थ इस स्थिति में अभ्यासे चर्च इस सूत्र से अभ्यास भकार के स्थान पर बकार होने पर बभूव् इ थ में वर्णसम्मेलन होने पर बभूविथ यह रूप सिद्ध होता है।

बभूवथुः - भू धातु से लिट्, मध्यमपुरुषद्विवचन की विवक्षा में थस्, उसको अथुस् आदेश होने पर अभ्यासकार्य, रुत्व, और विसर्ग होने पर बभूवथुः यह रूप सिद्ध होता है।

बभूव - भू धातु से लिट् मध्यमपुरुषबहुवचन विवक्षा में थ प्रत्यय होने पर, उसके स्थान पर अ आदेश होने पर अभ्यास कार्य में बभूव यह रूप सिद्ध होता है।

बभूव - भू धातु से लिट् लकार में उत्तमपुरुषैकवचन विवक्षा होने पर मिप्, उसको णलादेश व अभ्यास कार्य होने पर बभूव यह रूप सिद्ध होता है।

बभूविव - भू धातु से लिट् उत्तमपुरुष द्विवचन की विवक्षा होने पर वस् प्रत्यय, उसके स्थान परे व यह आदेश, अभ्यासकार्य, वप्रत्यय को आर्धधातुक होने से और वलादित्व होने से इडागम होने पर बभूविव यह रूप सिद्ध होता है।

बभूविम - भू धातु से लिट्, उत्तमपुरुषद्विवचन की विवक्षा में मस्, उसके स्थान पर म यह आदेश, अभ्यासकार्य, में प्रत्यय का आर्धधातुक और वलादि होने से इडागम होने पर बभूविम यह रूप सिद्ध होता है।

भू धातु के लिट् लकार में रूप -

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	बभूव	बभूवतु:	बभूवु:
मध्यमपुरुष:	बभूविथ	बभूवथु:	बभूव
उत्तमपुरुष:	बभूव	बभूविव	बभूविम

पाठगत प्रश्न 14.2

1. धातु के द्वित्व विधायक सूत्र को लिखिए।
2. किसकी अभ्यास संज्ञा होती है?
3. हलादि शेष किसका होता है?
4. ह्रस्व: इस सूत्र से किसका ह्रस्व होता है?
5. लिट् परे होने पर भू धातु के अभ्यास के ऊकार का ह्रस्व किस सूत्र से होता है?
6. भवतेर: किसका होता है?
7. भवतेर: किस लकार में होता है?
8. अभ्यासे चर्च, अन्यच्च क्या है और किसका है?
9. वलादि आर्धधातुक को इट् किस सूत्र से होता है?

भू धातु के लुट् में लकार रूप

14.11 अनद्यतने लुट्॥ (३.३.१५)

सूत्रार्थ - भविष्यत् अनद्यतन अर्थ में धातु से लुट् हो

सूत्रव्याख्या - यह सूत्र विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद है। अनद्यतने (७/१), लुट् (१/१)। अविद्यमानो अद्यतन: काल: स: अनद्यतन:। तस्मिन् यह बहुव्रीहिसमास है। प्रत्यय: परश्च इन दोनों सूत्रों का यहाँ अधिकार है। प्रत्ययाधिकार में पठित होने से लुट् यह प्रत्यय है। धातो: यह पञ्चम्यन्त पद अधिकृत है। भविष्यति गम्यादय: इस सूत्र से भविष्यति यह पद अनुवर्तित होता है। अनद्यतने भविष्यति धातो: लुट् प्रत्यय: पर: यह वाक्य योजना है। अत: सूत्रार्थ होता है- अनद्यतन भविष्यत् अर्थ वाली धातु से लुट् प्रत्यय परे हो। अर्थात् जिस धातु का अर्थ व्यापार अनद्यतन भविष्यत्काल में हो ऐसी विवक्षा होने पर धातु से लुट् विधान किया जाता है।

उदाहरण - भू धातु का अर्थ सत्ता है। और उससे अनद्यतन भविष्यत्काल यह विवक्षा हो तो भू धातु से अनद्यतने लुट् इस आलोच्यमान सूत्र से लुट् विवक्षा से कर्ता में विधान होता है। तत्पश्चात् उकार और टकार की इत्संज्ञा होने, लोप होने पर भू ल् इस स्थिति में ल के स्थान पर अट्ठारह आदेशों में से भू धातु से आत्मनेपद निमित्तहीन होने से प्रथमपुरुषैकवचन विवक्षा होने से तिप्, अनुबन्धलोप होने पर भू ति यह स्थिति होती है। तब-

14.12 स्यतासी लृलुटोः॥ (३.१.३३)

सूत्रार्थ - धातु से स्य और तासि ये दोनों प्रत्यय हो, लृ और लुट् पर में रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से स्य तासि ये दोनों विधान किए जाते हैं। इस सूत्र में दो पद हैं। स्यतासि (१/२), लृ-लुटोः (७/२)। स्यः च तासिश्च स्यतासी यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। तासि यहाँ इकार उच्चारण सौकर्य के लिए है। ला च लुट् च लृलुटौ, तयोः लृलुटोः यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। निरनुबन्धकग्रहणे सानुबन्धकस्य इस परिभाषा से लृ इससे लृट् लृङ् इन दोनों का भी ग्रहण होता है। प्रत्ययः परश्च ये दोनों सूत्र अधिकार करते हैं। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् इस सूत्र से धातोः यह पञ्चम्यन्त पद आता है, द्विवचनान्त रूप से विपरिणाम होता है। तब पद योजना होती है - धातोः स्यतासी प्रत्ययौ परौ लृटि लृङि लुटि। स्य तास् चेति द्वौ, लृ-लुटौ इति निमित्ते द्वे। अतः यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से लृ पर में रहते स्यप्रत्यय होता है, लुट् पर में रहते तास् प्रत्यय होता है। यहाँ स्थानी तथा आदेश में यथासंख्य नहीं है। सदा स्थानी और आदेश में ही यथासंख्य नहीं होता है यह यहाँ गम्य होता है। सूत्रार्थ होता है - धातु से स्य प्रत्यय हो लृट् और लृङ् पर में रहते। धातु से तास् प्रत्यय हो लुट् परे रहते।

धातु से परे कर्ता अर्थ में लुट् का विधान होता है। वहाँ उसके स्थान पर तिङ् विधान किया जाता है। तिङ् तिङ्शित् सार्वधातुकम् इस सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञक है। अतः धातु से कर्ता अर्थ में सार्वधातुक परे में रहते कर्तरि शप् इस सूत्र से शप् प्रसक्त होता है। इस प्रकार अन्य गणों में श्यन् श, श्नु, श्नम्, उ, श्ना इत्यादि भी प्रसक्त होते हैं। परन्तु प्रकृतसूत्र से विहित स्य और तासि इनके अपवाद हैं। और स्य और तासि ही होते हैं।

उदाहरण - भविता।

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व में सूत्र में कहे गए रूप से भू ति यह स्थिति हुई। उसके बाद भू धातु से लुट् के स्थान पर तिप् परे में रहते तिप् तिङशित् सार्वधातुकम् इस सूत्र से सार्वधातुकसंज्ञक है। अतः भू धातु से कर्ता अर्थ में सार्वधातुक परे में रहते कर्तरि शप् इस सूत्र से शप् प्रसक्त होता है। परन्तु प्रकृतसूत्र से विहित तास् शप् का अपवाद है। अतः शप् को बांधकर तासि प्रत्यय होने पर भू तासि ति यह स्थिति होती है। तासि तिङ नहीं है, शित् नहीं है, धातोः यह विहित है। अतः आर्धधातुकं शेषः इस सूत्र से उसकी आर्धधातुकसंज्ञा होती ह। और तासि वलादि है। अतः आर्धधातुकस्येड् वलादेः इस सूत्र से इडागम होने पर टित्त्व होने से तासि का आद्यावयव होने पर भू इतास् स्थिति हुई। यदागमपरिभाषा से इतास् यह आगमसहित समुदाय ही प्रत्यय है। और वह आर्धधातुकसंज्ञक है। आर्धधातुक पर में रहते सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र से इगन्ताङ्ग भू के

टिप्पणियाँ

ऊकार के स्थान पर स्थान आन्तर्य से गुण ओकार होने पर भो इतास् ति यह स्थिति होती है। तब इतास् इसके अच् इकार पर में रहते एचोऽयवायावः इस सूत्र से अवादेश होने पर भव् इतास् ति अवस्था उत्पन्न हुई। तब -

14.13 लुटः प्रथमस्य डारौरसः॥ (२.४.८५)

सूत्रार्थ - लुट् के प्रथम के स्थान पर डा रौ रस् ये क्रम से हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से डा, रौ, रस् का विधान होता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। यहाँ लुटः (६/१), प्रथमस्य (६/१), डारौरसः (१/३)। तब वाक्य योजना होती है - लुटः प्रथमस्य डारौरसः इति। उसके बाद सूत्र का अर्थ होता है- लुट् के स्थान पर विहित प्रथमपुरुषसंज्ञक प्रत्ययों के स्थान पर डा रौ रस् ये क्रम से होते हैं।

तिप् तस्-झि ये परस्मैपदसंज्ञक तीन हैं, त-आताम्-झ ये आत्मनेपदसंज्ञक तीन हैं। इस प्रकार मिलाकर छः प्रत्यय होते हैं। डा-रौ-रसः यह प्रथमाबहुवचनान्त पद है। डा-रौ-रसः च डा-रौ-रसः च यहाँ एकशेष होने पर डा-रौ-रसः यह पद निष्पन्न होता है। अतः उसमें छः प्रत्यय हैं। अतः यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा के बल से तिप्-तस्-झि इनके स्थान पर क्रमशः डा-रौ-रस् यह होते हैं इस प्रकार त-आताम्-झ इनके स्थान पर डा-रौ-रस् ये क्रमशः होते हैं।

तिप्-तस्-झि इनके स्थान पर डा-रौ-रस् यह विधान किए जाते हैं। जब तक डा-रौ-रस् ये तिप् आदि का स्थानग्रहण करते हैं तब तक तिप् आदि के धर्म डा-रौ-रस् इन पर आरोपित नहीं होते हैं। अत एव डा-रौ-रस् इनकी प्रत्ययसंज्ञा भी उनके प्रयोग से उत्तर ही है। अतः जब तक डा तिप् की निवृत्ति नहीं करता है तब तक डा प्रत्यय नहीं है। प्रत्यय नहीं है तो चुटू इस सूत्र से उसके आदि डकार की इत्संज्ञा नहीं होती है। अतः प्रयोग से पूर्व डा इसका अनेकाल्त्व है। अतः अनेकाल्शित् सर्वस्य इस सूत्र से सम्पूर्ण तिप् के स्थान पर ही आदेश डा होता है न कि अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अन्त्य का। इस प्रकार उन उन प्रत्ययों में जानने योग्य है।

उदाहरण - पूर्वसूत्रोक्त प्रकार से भव् इतास् ति यह होता है। वहाँ लुट् के स्थान पर विहित तिप् प्रथमसंज्ञक है। तिप् के स्थान पर यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से प्रकृतसूत्र से डा-आदेश होने पर अनेकाल्शित् सर्वस्य इस सूत्र से सर्वादेश होने पर भव् इतास् डा इस स्थिति में चुटू इस सूत्र से प्रत्यय के आदि डकार की इत्संज्ञा होने पर और तस्य लोपः से लोप करने पर भव् इतास् आ यह स्थिति होती है।

तिप् प्रत्यय है। उसके स्थान पर विहित डा भी स्थानिवद्भाव से प्रत्ययसंज्ञक है। स्वादि में, कप्-प्रत्ययावधि में से ही पर पूर्व की भसंज्ञा होती है। डा स्वादि में नहीं है। अतः डा-प्रत्यय पर में रहते भसंज्ञा नहीं होती है। फिर भी पाणिनीमुनि ने डा इसका डित्त्व किया है। उससे यह ज्ञात होता है कि जो भ संज्ञक नहीं है,उसका भसंज्ञक टि का लोप होता है। उसको कहा जाता है डित्त्वसामर्थ्य से अभसंज्ञक की टि का लोप। डि-प्रत्यय पर में रहते इतास् इसकी आस् टि है। उसका लोप होने पर भव् इत् आ यह स्थिति होती है। तब वर्ण मेलन करने से **भविता यह रूप सिद्ध होता है।**

भवितारौ - पूर्व के समान भू धातु से कर्ता में लुट् होने पर प्रथमपुरुषद्विवचन की विवक्षा में तस् प्रत्यय होने पर भू तस् इस स्थिति में कर्तरि शप् इससे शप् प्रसक्त होने पर स्यतासी लृलुटो: इस सूत्र से शप् को बाधकर तास् प्रत्यय होने पर भू तास् तस् यह स्थिति होती है, तत्पश्चात् तास् के आर्धधातुक होने से और वलादि होने से आर्धधातुकस्येड् वलादे: इस सूत्र से इडागम आद्यावयव होने पर भू इतास् तस् इस स्थिति में सार्वधातुकार्धधातुकयो: इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण ओकार होने पर भो इतास् तस् इस स्थिति में एचोऽयवायाव: सूत्र से अवादेश होने पर भवितास् तस् यह हुआ।तब लुट: प्रथमस्य डा-रौ-रस: इस सूत्र से तस् के स्थान पर रौ यह सर्वादेश होकर भवितास् रौ यह अवस्था हुई।। तब- (रि च इस सूत्र से देखना चाहिए)

14.14 तासस्त्योर्लोप: (७.४.५०)

सूत्रार्थ - तास् और अस्ति के स का लोप स हो सादि प्रत्यय परे में रहते।

सूत्रव्याख्या - **यह विधि सूत्र है।** इसमें दो पद हैं। तासस्त्यो: लोप: यह सूत्रगत पदों का विच्छेद है। तासस्त्यो: (६/२), लोप: (१/१)। तास् च अस्तिश्च तासस्ती। तयो: तासस्त्यो: यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। अङ्गस्य इसका अधिकार है। प्रत्यय परे में होने पर ही अङ्गसंज्ञा उपपन्न होती है। अत: प्रत्यये यह सप्तम्यन्त पद आक्षिप्त होता है। यह अङ्गाक्षिप्तम् यह कहा जाता है। स: स्यार्धधातुके इस सूत्र से सि यह सप्तम्यन्त पद अनुवर्तित होता है। तब तासस्त्यो: लोप: सि प्रत्यये यह वाक्ययोजना है। इस सूत्र में तदादिविधि होती है। सि यह अल्बोधक पद प्रत्यये इसका विशेषण है। अत: तदादिविधि से 'सादौ प्रत्यये' यह अर्थ प्राप्त होता है। तास्त्यो: यहाँ षष्ठ्यर्थ सम्बन्ध की अनुयोगिविरह से स्थानषष्ठी है। और वह अल्समुदायबोधक से सुना जाता है। और आदेश लोपात्मक है। अत: अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा के बल से तास् इसके अस् और इसके अन्त्य अल् सकार का लोप होता है यह अर्थ प्राप्त होता है। इस प्रकार सूत्र का अर्थ होता है - सकारादि प्रत्यय परे में होने पर तास् और अस्ति के सकारस्य का लोप होता है।

उदाहरण - इसका उदाहरण भवितासि है। परन्तु प्रकृत में भवितारौ यह रूपसाधन प्रचलित है। और इसके बाद में भवितार: यह रूप होता है। यहाँ दो रूप होने पर भी यह सूत्र प्रवर्तित नहीं होता है। फिर भी रि च यह सूत्र अष्टाध्यायी में इस सूत्र से बाद में है। इस प्रकार यदि रूप का क्रम से ही इसका उपस्थापन करना चाहिए तो रि च इस सूत्र से अव्यवहित पर में ही इसका उपस्थापन हो। अत: अष्टाध्यायी क्रम का आदर करके पूर्व में रखा गया है।

14.15 रि च।। (७.४.५१)

सूत्रार्थ - तास् और अस्ति के सकार का लोप हो रादि प्रत्यय पर में रहते।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से सकार के लोप का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद है। रि (७/१), च यह अव्ययपद है। तासस्त्योर्लोप: इस सूत्र से तासस्त्यो: यह षष्ठीद्विवचनान्त पद अनुवर्तित है। और लोप: यह प्रथमान्त पद अनुवर्तित है। तास् च अस्तिश्च तासस्ती। तयो: तासस्त्यो: यह इतरेतरयोगद्वन्द्वसमास है। अङ्गस्य इससे अधिकार किया गया है। प्रत्यय पर में ही

टिप्पणियाँ

अङ्गसंज्ञा उपपन्न हुई है। अतः प्रत्यये यह सप्तम्यन्त पद आक्षिप्त होता है। यह अङ्गाक्षिप्त यह कहलाता है। तब पदयोजना होती है - तासस्त्योः रि प्रत्यये च लोपः। रि यह अल्बोधक पद प्रत्यये इसका विशेषण है। अतः तदादिविधि से श्रादौ प्रत्ययेश यह अर्थ प्राप्त होता है। तास्त्योः यहाँ षष्ठ्यर्थ सम्बन्ध का अनुयोगिविरह से स्थानषष्ठी है। और वह अल्समुदायबोधक से सुना जाता है। और आदेश लोपात्मक है। अतः अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा बल से तास् इसके अस् इसका और अन्त्य अल् सकार का लोप होता है यह अर्थ प्राप्त होता है। अतः सूत्रार्थ होता है - रेफादि प्रत्यय पर में रहते तास् और अस्ति के सकार का लोप होता है।

उदाहरण - भवितारौ।

सूत्रार्थसमन्वय - लुटः प्रथमस्य डा-रौ-रसः इस सूत्रोक्त रूप से भवितास् रौ यह स्थिति होने पर रौ यह रादिप्रत्यय पर में है। अतः तास् इसका अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अन्त्य स का लोप रि च इस प्रकृतसूत्र से होता है। तब भवितारौ यह रूप निष्पन्न होता है।

भवितारः - पूर्ववत् भू धातु से लुट्, प्रथमपुरुषबहुवचन विवक्षा में झि प्रत्यय होने पर भू झि यह होने पर कर्तरि शप् इस सूत्र से शप् प्रसक्त होने पर स्यतासी लृलुटोः इस सूत्र से शप् को बाधकर तास् प्रत्यय होने पर भू तास् झि इस स्थिति में आर्धधातुकस्येड् वलादेः इस सूत्र से इडागम होने पर भू इतास् झि इस स्थिति में सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र से भू के ऊकार का गुण ओकार होने पर भो इतास् झि इस स्थिति सें एचोऽयवायावः इस सूत्र से अवादेश होने पर भवितास् झि यह होने पर लुटः प्रथमस्य डा-रौ-रसः इस सूत्र से झि के स्थान पर रस् यह सर्वादेश होने पर भवितास् रस् यह अवस्था हुई। यहाँ रादिप्रत्यय पर में है। अतः तास् इसके अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अन्त्य स का लोप रि च इस प्रकृतसूत्र से होता है। तब भवितारस् इस स्थिति में पदान्तत होने से रूत्व, विसर्ग होने पर भवितारः यह रूप निष्पन्न होता है।

भवितासि - पूर्ववत् भू धातु से लुट्, मध्यमपुरुषैकवचन विवक्षा में सिप् प्रत्यय, अनुबन्धलोप होने पर भू सि यह होने पर प्राप्त शप् को बाधकर स्यतासी लृलुटोः इस सूत्र से तासि प्रत्यय होने पर भू तास् सि इस स्थिति में इडागम होने पर भू के ऊकार का गुण ओकार होने पर भो इतास् सि इस स्थिति में अवादेश होने पर भवितास् सि यह होता है। यहाँ सादिप्रत्यय पर में है। अतः तास् इसके अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अन्त्य स का लोप तासस्त्योर्लोप इस सूत्र से होता है। तब भवितासि यह रूप निष्पन्न होता है।

भवितास्थः - (यहाँ प्रक्रिया के अनेक अंश पूर्व के समान करने योग्य है।) भू धातु से लुट्, थास्, तास् प्रत्यय, इडागम, ऊकार का गुण ओकार, ओकार को अवादेश होने पर भवितास् थस् इस स्थिति में समुदाय के पदान्त होने से रूत्व और विसर्ग करने पर भवितास्थः यह रूप सिद्ध होता है।

भवितास्थ - (यहाँ प्रक्रिया के अनेक अंश पूर्व के समान करने योग्य है।) भू धातु से लुट्, थ, तास् प्रत्यय, इडागम, ऊकार का गुण ओकार, ओकार को अवादेश होने पर भवितास् थ होक भवितास्थ यह रूप सिद्ध होता है।

भवितास्मि, भवितास्वः भवितास्मः - (यहाँ प्रक्रिया पूर्व के समान कहनी चाहिए।)

भू धातु के लुट् लकार में रूप नीचे पट्टिका में प्रदर्शित किए गये हैं -

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	भविता	भवितारौ	भवितारः
मध्यमपुरुषः	भवितासि	भवितास्थः	भवितास्थ
उत्तमपुरुषः	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितास्मः

रूपसाधन

भविता -

(भविता यह रूप बहुत सूत्रों में व्याप्त है। उसकी खण्डशः प्रक्रिया कुछ-कुछ आगे आती है। अतः सभी सूत्रों का परिशीलन करके सभी खण्डों को एकत्रित करके समग्र रूप को साधनीय है यह जानना चाहिए। भविता का यह एक रूप यहाँ प्रदर्शित किया जाता है। अन्य रूप छात्र के द्वारा स्वयं करने योग्य है।)

1. **धातुपरिचय** - सत्तार्थ में वर्तमान भ्वादिगण में पठित भूवादयो धातवः इस से धातुसंज्ञक अकर्मक सेट् भू यह धातु है।

2. **लकारविधान, लकार के स्थान पर तिप् आदिविधान** - भूधात्वर्थ सत्ताक्रिया का भविष्यत् अनद्यतन काल में वृत्तित्व विवक्षा में अनद्यतने लुट् इस सूत्र से भू धातु से विवक्षा होने से कर्ता में लुट्, अनुबन्धलोप होने पर भू ल् यह होने पर लस्य इसको अधिकृत करके तिप्तस्झि-सिप्थस्थ-मिब्वस्मस्-तातांझ-थासाथांध्वम्-इड्वहिमहिङ् इस सूत्र से अष्टादश लादेश प्रसक्त होने पर भू धातु से आत्मनेपद निमित्तहीन होने से शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् इस सूत्र से तिप् आदि नौ प्रत्यय प्रसक्त होने पर मध्यमोत्तम का अविषय होने से और कर्ता के एकत्व होने से प्रथमपुरुषैकवचन विवक्षा में तिप्, अनुबन्धलोप होने पर भू ति यह स्थिति होती है।

3. **तिबादेशविधान, विकरणविधान** - भू ति इस स्थिति में वहाँ भू धातु से लुट् स्थानिक तिप् पर में होने पर तिङ् शित् सार्वधातुकम् इस सूत्र से तिप् के सार्वधातुक होने से और कर्ता में विहित होने से कर्त्रर्थ में सार्वधातुक परे में रहते कर्तरि शप् इस सूत्र से शप् प्रसक्त होने पर प्रकृतसूत्र से शप् को अपवाद रूप से बाधकर तास् प्रत्यय होने पर भू तास् ति यह स्थिति हुई। तास् इसके तिङ् भिन्न होने से और शित् भिन्न होने से, धातोः यह विहित होने से आर्धधातुकं शेषः इस सूत्र से आर्धधातुकसंज्ञा होती है। और तास् वलादि है। अतः आर्धधातुकस्येड् वलादेः इस सूत्र से इडागम होने पर टित्त्व होने से तास् के आद्यावयव होने पर भू इतास् ति यह स्थिति हुई। इतास् यह समुदाय प्रत्यय, और आर्धधातुकसंज्ञक है।

टिप्पणियाँ

आर्धधातुक पर में रहते सार्वधातुकार्धधातुकयोः इस सूत्र से इगन्ताङ्ग भू के ऊकार के स्थान पर स्थान के आन्तर्य से गुण ओकार होने पर भो इतास् ति यह स्थिति र होती है। तब इतास् इसके अच् इकार पर में रहते एचोऽयवायावः इस सूत्र से अवादेश होने पर भव् इतास् ति अवस्था हुई। वहाँ लुट् के स्थान पर विहित तिप् प्रथमसंज्ञक है। तिप् के स्थान पर यथासंख्यमनुदेशः समानाम् इस परिभाषा से प्रकृतसूत्र से अनेकाल्शित् सर्वस्य इस सूत्र से डा यह सर्वादेश होने पर भव् इतास् डा इस स्थिति में डा इसके स्थानिवद्भाव होने से और प्रत्ययत्वविज्ञान होने से चुटू इस सूत्र से प्रत्ययाद के आदि डकार की इत्संज्ञा होने पर और तस्य लोपःसे लोप करने पर भव् इतास् आ यह स्थिति होती है।

तिप् प्रत्यय के स्थान पर विहित डा भी स्थानिवद्भाव होने से प्रत्ययसंज्ञक है। इस प्रकार डित्त्वसामर्थ्य से अभसंज्ञक होने पर भी टि इतास् इसके आस् इसका लोप होने पर भव् इत् आ इस स्थिति में वर्णमेलन होने से भविता यह रूप सिद्ध होता है।

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं। उनके रूप यहाँ तक अतिक्रान्त कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं। उन रूपों को अभ्यास के लिए छात्र द्वारा सिद्ध करना चाहिए।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - पठिता, पठितारा, पठितारः। पठितासि, पठितास्थः, पठितास्थ। पठितास्मि, पठितास्वः, पठितास्मः।

2. **गद व्यक्तायां वाचि** - गदिता, गदितारौ, गदितारः। गदितासि, गदितास्थः, गदितास्थ। गदितास्मि, गदितास्वः, गदितास्मः।

3. **अर्च पूजायाम्** - अर्चिता, अर्चितारौ, अर्चितारः। अर्चितासि, अर्चितास्थः, अर्चितास्थ। अर्चितास्मि, अर्चितास्वः, अर्चितास्मः।

4. **व्रज गतौ** - व्रजिता, व्रजितारौ, व्रजितारः। व्रजितासि, व्रजितास्थः, व्रजितास्थ। व्रजितास्मि, व्रजितास्वः, व्रजितास्मः।

5. **कटँ वर्षावरणयोः** - कटिता, कटितारौ, कटितारः। कटितासि, कटितास्थः, कटितास्थ। कटितास्मि, कटितास्वः, कटितास्मः।

6. **क्षि क्षये** - क्षयिता, क्षयितारौ, क्षयितारः। क्षयितासि, क्षयितास्थः, क्षयितास्थ। क्षयितास्मि, क्षयितास्वः, क्षयितास्मः।

7. **चितीं संज्ञाने** - चेतिता, चेतितारौ, चेतितारः। चेतितासि, चेतितास्थः, चेतितास्थ। चेतितास्मि, चेतितास्वः, चेतितास्मः।

8. **शुच शोके** - शोचिता, शोचितारौ, शोचितारः। शोचितासि, शोचितास्थः, शोचितास्थ। शोचितास्मि, शोचितास्वः, शोचितास्मः।

पाठगत प्रश्न 14.3

1. लुट् किस अर्थ में विधान किया जाता है?
2. धात्वर्थव्यापार के अनद्यतन भविष्यत् वृत्तित्व विवक्षा होने पर कौनसा लकार विधान करने योग्य है?
3. भवितास्मि यह किस लकार में रूप है?
4. भवितास्मि यहाँ विकरणं क्या है। किस सूत्र से विहित है?
5. तास् किसका अपवाद है?
6. लुटः प्रथमस्य डारौरसः यहाँ प्रथमान्त कौन से हैं?
7. डा-रौ-रसः किसके स्थान पर और किस लकार में विधान किए जाते हैं?
8. तास् और अस्ति के सकार का लोप सादि प्रत्यय पर में रहते किस सूत्र से होता है?
9. भवितारौ यहाँ रूप में तास् के सकार का लोप किस सूत्र से होता है?

पाठ का सार

इस पाठ में लिट् और लुट् यह दो लकार रखे गए हैं। धातु का अर्थ व्यापार यदि अनद्यतन भूतकालीन हो और वक्ता को अप्रत्यक्ष हो तब उस धातु से परोक्षे लिट् इस सूत्र से लिट् लकार प्रयोग किया जाता है। लिट् के आर्धधातुक होने से यहाँ शबादिक नहीं होता है। लिट् लकार में तिङों के स्थान पर परस्मैदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः इस सूत्र से णलादि आदेश होते हैं, इस लकार का एक विशेष है। लिट् परे में रहते अनभ्यास धातु के अवयव का द्वित्व लिटि धातोरनभ्यासस्य इस सूत्र से होता है यह दूसरा विशेष है। द्वित्व में जो पूर्व है उसकी अभ्यास संज्ञा पूर्वोऽभ्यासः इस सूत्र से होती है। और उस अभ्यास का हलादिः शेषः इस सूत्र से आदि हल् शेष रहता है और अन्य हलों का लोप होता हैं। इस प्रकार अचों का लोप नहीं होता है। अभ्यास के अच् का ह्रस्वः इस सूत्र से ह्रस्वत्व होता है। भू धातु के भवतेरः इस सूत्र से उकार का अकारो होता है। अभ्यासे चर्च इस सूत्र से अभ्यास के झशों को जश् और खयों को चर् विधान होता है। वलादि आर्धधातुक हो तो उसका आर्धधातुकस्येड् वलादेः इस सूत्र से इडागम विधान होता है। इस प्रकार कुछ मुख्य सूत्र और उनके कार्य लिट् लकार में हैं। यहाँ से भी अन्य सूत्र और कार्य हैं उनको अग्रिम प्रकरणों में देखेगें। लिट् के सम्यक् ज्ञान के लिए लिट् के पठनानन्तर आगे लिट् के प्रकरण को पढना चाहिए।

धातु का अर्थ व्यापार हो अनद्यतन भविष्यत्काल हो तो उस धातु से अनद्यतने लुट् इस सूत्र से लिट् लकार प्रयोग किया जाता है। स्यतासी. इस सूत्र से लुट् पर में रहते धातु से तास् होता है।

इस प्रकार लुटः प्रथमस्य डारौरसः इस सूत्र से प्रथम के स्थान पर डा रौ रस् ये विधान होते हैं। उसके बाद सादि प्रत्यय परे होने पर तास् के स का लोप तासस्त्योर्लोपः इस सूत्र से होता है, और रादि प्रत्यय परे रहते रि च इस सूत्र से तास् के स का लोप होता है।

इस प्रकार संक्षेप में यह जानना चाहिए कि लिट् पर में रहते णलादि, द्वित्व,हलादिशेषत्व, ह्रस्वत्व, चर्त्व, जश्त्व ये सब मुख्य कार्य हैं। और लुट् परे तास्, डा, रौ, रस्, तास् के स का लोप ये मुख्य कार्य हैं।

पाठांत प्रश्न

1. परोक्षे लिट् इस सूत्र की व्याख्या कीजिए?
2. णलादि सर्वादेश कैसे है, यह लिखिए?
3. लिटि धातोरनभ्यासस्य इस सूत्र की व्याख्या कीजिए?
4. अभ्यासे चर्च इस सूत्र क की व्याख्या कीजिए?
5. अभ्यास कार्यों को आश्रित करके प्रबन्ध का वर्णन कीजिए?
6. आर्धधातुकस्येड् वलादेः इति सूत्रं व्याख्येयम्।
7. बभूव बभूविथ बभूवुः इति एतानि रूपाणि ससूत्रं साधयत।
8. अनद्यतने लुट् इति सूत्रं व्याख्यात।
9. स्यतासी लृलुटोः इति सूत्रं व्याख्यात।
10. तासस्त्योर्लोपः इति सूत्रं व्याख्यात।
11. ससूत्रं रूपाणि साधयत भविता, भवितारौ, भवितासि, भवितास्मः।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

14.1

1. इन्द्रिय अगोचरत्व परोक्षत्व है।
2. धातोः अर्थः व्यापारः अर्थात् क्रिया अनद्यतने भूते परोक्षे च वर्तते इति विवक्षितं चेत् तस्माद् धातोः लिट् विधीयते।
3. तिपं निवर्त्य णल् यावत् तिपः स्थानम् अधिकरोति तावत् णल् न प्रत्ययः। स्थानिवद्भावेन तस्य यदा प्रत्ययत्वम् अतिदिश्यते तदा चुटू इति सूत्रेण प्रत्ययाद्यस्य णकारस्य इत्संज्ञा भवति।

तत: तस्य लोप: इति लोपोऽभवति। अत एव विधानात् पूर्व णस्य इत्संज्ञालोपयो: अभावे णल: अलेकाल्त्वमस्ति। अत: अनेकाल्शित् सर्वस्य इति सूत्रेण णल् सर्वस्य तिप: स्थाने भवति।

4. भुव: वुक् लुङि लिटि च।
5. १

14.2

1. लिटि धातोरनभ्यासस्य।।
2. षाष्ठद्वित्वप्रकरणे ये द्वे विहिते, तयो: पूर्वस्य अभ्यास संज्ञा भवति।
3. अभ्यासस्य आदे: हल: शेष:।
4. अभ्यासस्याचो ह्रस्व:।
5. ह्रस्व:।
6. भूधातो: अभ्यासस्य उकारस्य अकार: लिटि परे।
7. भूधातो: अभ्यासस्य उकारस्य अकार: लिटि परे।
8. अभ्यासे झलां चर् जश् च। झशां जश: खयां चर: इति विवेक:।
9. आर्धधातुकस्येड् वलादे:ध

14.3

1. धात्वर्थव्यापारस्य अनद्यतने भविष्यति वृत्तित्वविक्षायां लुट् लकार: विधेय:।
2. लुट्
3. लुटि मिपि रूपम्।
4. तास्। स्यतासी लृलुटो: इति सूत्रेण विहितम्।
5. शप् श्यन् श: श्नु: श्नम्, उ, श्ना इत्यादीनाम् लुटि परत: प्राप्तानां विकरणानाम्।
6. लुट: प्रथमस्य डारौरस: इत्यत्र प्रथमा: - तिप् तस्-झि इति परस्मैपदसंज्ञका: त्रय:, त-आताम्-झ इति आत्मनेपदसंज्ञका: त्रय: सन्ति। एवम् आहत्य षट् प्रथमसंज्ञका: प्रत्यया: सन्ति।
7. डा-रौ-रस: प्रथमसंज्ञकानाम् तिप् तस्-झि इति परस्मैपदसंज्ञकानां, त-आताम्-झ इति आत्मनेपदसंज्ञकानां च स्थाने लुटि लकारे विधीयन्ते।
8. तासेरस्तेश्च सस्य लोप: सादौ प्रत्यये परे तासस्त्योर्लोप: इति सूत्रेण।
9. भवितारौ इत्यत्र रूपे तास: सस्य लोप: रि च इति सूत्रेण।

।। इति चतुर्दश: पाठ:।।

15

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लृट् और लोट् लकार में रूप सिद्धियाँ

पूर्व पाठों में लट्, लिट्, लुट्, लकार पढ़ चुके। इन लकारों में भू धातु के रूप सिद्ध किये गये, उनकी सिद्धि के लिए अपेक्षित सूत्रों को प्रस्तुत करके व्याख्या की गई। इससे आगे लृट्, लोट् और लङ् लकार यहाँ प्रस्तुत हैं। भू धातु के इन लकारों में सभी रूपों को सिद्ध करने के लिए जो सूत्र अपेक्षित हैं, उनको यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। उन रूपों की सिद्धि के लिए जो सूत्र दसवीं कक्षा की व्याकरण की पुस्तक में पढ़ चुके हैं और छात्रों को उन सूत्रों का ज्ञान है ऐसा मानकर यहाँ पुनः व्याख्या नहीं की जा रही है। अतः व्याकरण में आगे के पाठ के अध्ययन के लिए पूर्व में पढ़े हुए सूत्रों की अपेक्षा होती है। अतः दसवीं कक्षा के पाठों और बारहवीं कक्षा के इस पाठ से पूर्व के पाठों को अच्छी प्रकार से पढ़ना चाहिए।

प्रथम व द्वितीय पाठ में जो सूत्र तिङन्त प्रकरण के हैं। यद्यपि वे आवश्यक है। फिर भी सभी का सदैव उल्लेख नहीं करेंगे। प्रत्येक रूप के सभी शब्दों व सूत्रों को बार-बार उल्लेख करेंगे तो यह ग्रन्थ या प्रकरण बहुत विस्तृत हो जायेगा।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप -

- तिङन्त प्रकरण के सूत्रों को जानेंगे;
- लृट्, लोट् व लङ् लकार में भू धातु के रूपों को जानेंगे;
- लृट्, लोट् व लङ् लकार में भू धातु के समान अन्य धातुओं के रूप सिद्ध करने में समर्थ होंगे;

- लृट्, लोट् व लङ् लकारों का प्रयोग कब और कहाँ करना चाहिए यह जानेंगे;
- शप् आदि विकरण के अपवाद को जानेंगे;
- लृट्, लोट् व लङ् लकारों के सूत्रों की व्याख्या जानेंगे।

भू धातु के लृट् लकार के रूप

15.1 लृट् शेषे च॥ 3.3.13

सूत्रार्थ - क्रियार्थ क्रिया के होने या न होने पर भविष्यत् काल के अर्थ में धातु से लृट् लकार होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से लृट् लकार का विधान होता है। इस सूत्र में तीन पद है। लृट् (1/1), शेषे (7/1), च अव्ययपद। 'भविष्यति गम्यादय' इस अधिकार सूत्र से भविष्यति से सप्तम्यन्त पद की अनुवृत्ति होती है। धातोः पद से पच्यन्त का अधिकार है। इसमें 'तुमुण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम्' इस सूत्र में स्थित क्रियार्थायाम् और क्रियायाम् इन दो पदों से परामर्श होता है। क्रियार्थ या क्रिया उससे भिन्न ही शेष रहता है। अतः सूत्रार्थ - क्रियार्थ क्रिया चाहे विद्यमान हो या न हो न भविष्यत्काल में धातु से परे 'लृट्' प्रत्यय का विधान होता है।

विवरण - जो क्रिया किसी दूसरी क्रिया के निष्पादनार्थ की जाती है वह क्रियार्थ क्रिया होती है। क्रिया अर्थः प्रयोजनं यस्याः सा क्रिया। 'चैत्रः वदति पठिष्यामि इति पाठशालां गच्छामि।' चैत्र गमन क्रिया करता है। इस क्रिया का क्या प्रयोजन है। यहाँ चैत्र गमन करके पढ़ेगा। अतः गमन क्रिया का प्रयोजन पठन क्रिया है। गमन पठनार्थ है। अतः गमन क्रिया पठनार्थ क्रिया है।

वाक्य में क्रियार्थ क्रिया हों या न हों भविष्यत् काल के अर्थ में धातु से लृट् का विधान किया जाता है। अतएव सूत्रार्थ होता है - क्रियार्थ क्रिया के होने या न होने पर यदि भविष्यकाल में धात्वर्थ व्यापार की विवक्षा में धातु से परे लृट् होता है।

अद्यतन और अनद्यतन भविष्यकाल में लृट् होता है। अतः सामान्य भविष्यकाल में लृट् का विधान होता है।

उदाहरण - 1. क्रियार्थ क्रिया के होने पर - पठिष्यामि इत गच्छामि।

2. क्रियार्थ क्रिया के न होने पर - पठिष्यामि।

सूत्रार्थ समन्वय

1. **क्रियार्थ क्रिया के होने पर** - पठिष्यामि इति गच्छामि। पठनार्थम् गमनम्। पठन क्रियार्थ गमन क्रिया है। अतः क्रियार्थ होने पर भविष्यकाल में पढ़ने की विवक्षा में प्रकृत सूत्र से पठ् धातु से लृट् का विधान हुआ।

टिप्पणियाँ

2. **क्रियार्थ क्रिया के न होने पर** - पठिष्यामि। इस वाक्य में क्रियार्थ क्रिया नहीं है। परन्तु भविष्यत् में पढने की विवक्षा है। अतः प्रकृत सूत्र से पठ् धातु से लृट् का विधान हुआ।

भू धातु से भविष्यत्काल की विवक्षा में 'लृट् शेषे च' सूत्र से लृट्। लृट् के ऋकार एवं टकार की इत्संज्ञा तथा लोप होकर भू + ल्। कर्ता अर्थ में प्रथम पुरूष एकवचन की विवक्षा में ल् के स्थान पर तिप् प्रत्यय भू + तिप्, अनुबन्ध लोप - भू + ति। लृट् कर्ता अर्थ में होने पर, उसके स्थान पर तिप् भी कर्ता अर्थ में है। ''तिङ शित् सार्वधातुकम्'' सूत्र से तिप् की सार्वधातुक संज्ञा। अतः कर्ता अर्थ में सार्वधातुक परे होने पर 'कर्तरिशप्' सूत्र से शप् का आगम। स्यतासी लृलुटोः सूत्र से शप् के स्थान पर स्य आदेश होकर भू+स्य+ति। यहाँ आर्धधातुकं शेषः'' सूत्र से तिङ एवं शित् भिन्न होने से स्य की आर्धधातुक संज्ञा। स्य प्रत्यय का आदिवर्ण सकार वल् प्रत्याहारस्थ है। अतः स्य प्रत्यय वलादि है। ''आर्धधातुकस्येड् वलादेः'' सूत्र से स्य को इट् का आगम। अनुबन्ध लोक होकर भू+इ+स्य+ति।

यहाँ ''आर्धधातुकं शेषः'' सूत्र से तिङ् एवं शित् भिन्न होने से स्य की आर्धधातुक संज्ञा। स्य प्रत्यय का आदिवर्ण सकार वल् प्रत्याहारस्य है। अतः स्य प्रत्यय वलादि है। ''आर्धधातुकस्येड् वलादेः'' सूत्र से स्य को इट् का आगम। अनुबन्ध लोप होकर भू+इ+स्य+ति।

उसके बाद आगम परिभाषा से इ स्य आगम सहित समुदाय प्रत्यय है। अतः इ की भी आर्धधातुक संज्ञा होती है। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊकार को गुण ओ आदेश होकर भो+इ+स्य+ति। एचोऽयवायावः सूत्र से अव् आदेश होकर भव्+इ+स्य+ति। यहाँ स्य प्रत्यय के अवयव सकार इण् इकार से परे स्थित होने पर अपदान्त है। अतः आदेश प्रत्ययथोः सूत्र से सकार को मूर्धन्य षकार आदेश होकर भव् इष् य ति, सभी वर्णों के मेल से 'भविष्यति' रूप सिद्ध होता है।

(सूत्रम् - आदेशप्रत्यययोः - इण् एवं क वर्ग से परे स्थित अपदान्त प्रत्यय के अवयव सकार को मूर्न्धन्य षकार आदेश होता है।)

इस प्रकार लृट् लकार के सभी रूप सिद्ध होते हैं। इससे पूर्व कहे सूत्रों से अन्य सूत्र अपेक्षित नहीं है। अतः पूर्वोक्त सूत्रों के आधार पर अन्य शेष रूप सिद्ध होते हैं। जिनका संक्षेप रूप यहाँ प्रदर्शित कर रहे हैं।

भविष्यतः - भूधात्वर्थव्यापार भविष्यत्काल के विवक्षित होने पर भू धातु से लृट्, लट् के स्थान पर तस्, शप् का बाध करके स्य प्रत्यय, इट् का आगम, इगन्त को गुण, ओ तथा अयादि एवं सकार कोषकार होकर भव्+इ+ष्+य+तस् तथा स् को रुत्व एवं विसर्ग होकर भविष्यतः सिद्ध होता है।

भविष्यन्ति - भू धातु से लृट्, लृट् को झि, झ् को अन्त् आदेश तथा शेष पूर्ववत् होकर भविष्य+अन्ति। यहाँ 'अतो गुणे' सूत्र से पररूप एकादेश होकर भविष्यन्ति रूप सिद्ध होता है। भविष्यसि, भविष्यथः, भविष्यथ - इसमें पूर्ववत् रूप होते हैं।

भविष्यामि - भू धातु से लृट् के स्थान मिप् आदेश, शेष पूर्ववत् भविष्य+ मि इस स्थिति में अतो दीर्घो यञि सूत्र से अदन्त अंग को दीर्घ आदेश होकर भविष्यामि सिद्ध होता है। इसी प्रकार भविष्यावः भविष्यामः रूपसिद्धि होती है।

भू धातु के लृट् लकार के रूप

लृट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यपुरुषः	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तमपुरुषः	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं, उनका रूप इन्हीं के समान कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - पठिष्यति, पठिष्यतः, पठिष्यन्ति। पठिष्यसि, पठिष्यथः, पठिष्यथ। पठिष्यामि, पठिष्यावः, पठिष्यामः।

2. **गद व्यक्तायां वाचि** - गदिष्यति, गदिष्यतः, गदिष्यन्ति। गदिष्यसि, गदिष्यथः, गदिष्यथ। गदिष्यामि, गदिष्यावः, गदिष्यामः।

3. **अर्च पूजायाम्** - अर्चिष्यति, अर्चिष्यतः, अर्चिष्यन्ति। अर्चिष्यसि, अर्चिष्यथः, अर्चिष्यथ। अर्चिष्यामि, अर्चिष्यावः, अर्चिष्यामः।

4. **व्रज गतौ** - व्रजिष्यति, व्रजिष्यतः, व्रजिष्यन्ति। व्रजिष्यसि, व्रजिष्यथः, व्रजिष्यथ। व्रजिष्यामि, व्रजिष्यावः, व्रजिष्यामः।

5. **कटें वर्षावरणयोः** - कटिष्यति, कटिष्यतः, कटिष्यन्ति। कटिष्यसि, कटिष्यथः, कटिष्यथ। कटिष्यामि, कटिष्यावः, कटिष्यामः।

6. **क्षि क्षये** - क्षयिष्यति, क्षयिष्यतः, क्षयिष्यन्ति। क्षयिष्यसि, क्षयिष्यथः, क्षयिष्यथ। क्षयिष्यामि, क्षयिष्यावः, क्षयिष्यामः।

7. **चितीं संज्ञाने** - चेतिष्यति, चेतिष्यतः, चेतिष्यन्ति। चेतिष्यसि, चेतिष्यथः, चेतिष्यथ। चेतिष्यामि, चेतिष्यावः, चेतिष्यामः।

8. **शुच शोके** - शोचिष्यति, शोचिष्यतः, शोचिष्यन्ति। शोचिष्यसि, शोचिष्यथः, शोचिष्यथ। शोचिष्यामि, शोचिष्यावः, शोचिष्यामः।

पाठगत प्रश्न 15.1

1. 'लृट्' शेषे च सूत्र का उदाहरण क्या है?
2. लृट् आदेश तिङ् की आर्धधातुक संज्ञा है या नहीं।
3. लृट् के स्थान पर स्य की आर्धधातुक या सार्वधातुक संज्ञा होती है?
4. स्य प्रत्यय किस लकार में होता है?
5. 'लृट्' शेषे च' सूत्र में शेष क्या है?
6. इनमें से लृट् का उदाहरण नहीं है।

   (अ) भविष्यथः (ब) भविष्याव (स) भविष्यामि (द) भविष्यतः

लोट् लकार

15.2 लोट् च॥ (3.3.162)

सूत्रार्थ - विधि आदि अर्थों में धातु से परे लोट् हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। लोट् (1/1), च अव्यय पद। ''विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्'' सूत्र से विधि निमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु पद की अनुवशति होती है। यहाँ प्रत्ययः और परश्च इन दोनों सूत्रों का अधिकार है। प्रत्यय के अधिकार में पढ़ने से लोट् की प्रत्यय संज्ञा होती है। धातोः से पंचम्यन्त पद का अधिकार है। अतः सूत्रार्थ होता है - विधि, निमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु अर्थ में विद्यमान धातु से परे लोट् प्रत्यय होता है। विधि निमन्त्रण आदि की विस्तृत व्याख्या विधिलिङ् में देखेगें।

15.3 आशिषि लिङ्लोटौ॥ (3.3.173)

सूत्रार्थ - आशिष अर्थ में धातु से लिङ् और लोट् प्रत्यय हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। आशिषि (7/1) लिङ्लोटौ (1/2)। लिङ् च लोट् च इति लिङ्लोटौ इतरेतरद्वन्द्व समास है। यहाँ प्रत्ययः और परश्च इन दो सूत्रों का अधिकार है। प्रत्यय के अधिकार में पढ़े जाने से लिट् एवं लोट् प्रत्यय हैं। धातोः इस पंचम्यन्त पद का अधिकार है। सूत्रार्थ होता है - आशिष अर्थ के विद्यमान होने पर धातु से परे लिङ् और लोट् प्रत्यय हो।

आशिष् यह सकारान्त स्त्रीलिंग पद है। आशासनम् याच्ञा आशीः। अप्राप्त इष्ट अर्थ की प्राप्तु करने की इच्छा आशीष है। किसी शक्ति, ज्ञान या आयु से ज्येष्ठ कनिष्ठ को अप्राप्त इष्ट अर्थ कनिष्ठ का हों। यह इच्छा वाणी से प्रकट करता है उसे आशीष कहते हैं। कहा भी गया है -

वात्सल्याद्यत्र मान्येन कनिष्ठस्याभिधीयते।
इष्टावधारकं वाक्यमाशीः सा परिकीर्तिता॥

जैसे - चिरं जीव। सफलो भवतात्। स्वस्ति भवतु।

सूत्रार्थ समन्वय - आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान धातु से 'आशिषि लिङ्लोटौ' सूत्र से कर्ता अर्थ में लोट् का विधान होता है। लोट् का अनुबन्ध लोप होने पर - भू+ल्। ल् के स्थान पर प्रथम पुरुष एकवचन की विवक्षा में तिप् प्रत्यय - भू+तिप्। अनुबन्धलोप, तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से तिप् की सार्वधातुक संज्ञा होने पर 'कर्त्तरिशप्' सूत्र से शप् का आगम व अनुबन्धलोप करने पर भू+अ+ति। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू' के ऊ को गुण ओ आदेश होकर भो+अ+ति। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+ति स्थिति बनती है, मिलाने पर भवति।

15.4 एरुः॥ (3.4.86)

सूत्रार्थ - लोट् के इकार को 'उ' हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से उकार किया जाता है। इस सूत्र में दो पद हैं। एः (6/1) (इकार कीषाष्ठी), उः(1/1).। 'लोटो लङ्वत्' सूत्र से लोटः से षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति होती है। सूत्रार्थ होता है - लोट् के इकार के स्थान उकार हो।

उदाहरण - भवतु

सूत्रार्थ समन्वय - भव्+अ+ति इस स्थिति में ति लोट् है। इस सूत्र से उस इ के स्थान उ होकर भवतु रूप प्राप्त होता है।

15.5 तुह्योस्तातङ्ङाशिष्यन्यतरस्याम्॥ (7.1.35)

सूत्रार्थ - आशीर्वाद अर्थ में तु और हि को तातङ् विकल्प से हों।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से तातङ् का विधान किया जाता है। इस सूत्र में चार पद हैं। तुह्योः, तातङ्, आशिषि, अन्यतरस्याम् - यह सूत्र का विच्छेद है। तुह्योः (6/2), तातङ (1/1), आशिषि (7/1), अन्यतरस्याम् यह विकल्पार्थ में अव्यय। तुश्च हिश्च तुही, तयोः तुह्योः इतरेतरयोगद्वन्द्व समास। सूत्रार्थ होता है - आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान तु एव हि के स्थान पर विकल्प से तातङ् होता है।

तातङ् के ङ्कार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत्संज्ञा तथा तस्यलोपः सूत्र से लोप होता है। अकार उच्चारणार्थ है। तात् शेष रहता है। तातङ् अनेकाल एवं ङित् है। परिभाषा प्रकरण से अनेकाल् ङित् आदेश ङिच्च सूत्र से अन्त्य अल् के स्थान पर होता है। ङकार इत्संज्ञक होने से क्ङिति च सूत्र से गुण वृद्धि का निषेध होता है और ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचतिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जतीनां ङिति च सूत्र सम्प्रसारण होता है। इस प्रकार जहां ङित् करने का दूसरा प्रयोजन रहता है वहां

टिप्पणियाँ

उसकी गति शिथिल हो जाती है उसका बल नहीं रहता। तब कहा जा सकता है कि ङित् तो किसी दूसरे कार्य के लिए किया गया है, अन्त्यादेश के लिए नहीं अतः ङित् की परिभाषा प्रवृत नहीं होती। अनेकाल शित् सर्वस्य की परिभाषा से तातङ्, सम्पूर्ण तु एवं हि के स्थान पर होता है।

सूत्रार्थ समन्वय - पूवोक्त सूत्रों से भवतु स्थिति हुई। यहां आशीर्वाद अर्थ में लोट् है अतः इस सूत्र से विकल्प में तु के स्थान तातङ् आदेश होकर भवतात् बनता है।

15.6 लोटोलङ्वत्॥ (3.4.85)

सूत्रार्थ - लङ् के स्थान पर होने वाले कार्य लोट् के स्थान पर भी होते हैं। तम् और स् का लोप आदि कार्य लोट् के स्थान पर भी होता है।

सूत्र व्याख्या - यह अतिदेश सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। लोट : (6/1), लङ्वत् अव्यय पद है लङः इव इति लङ्वत्। (तत्र तस्येव सूत्र से वतिः प्रत्यय) सूत्रार्थ होता है - लङ् लकार के स्थान पर हुए कार्यों के समान लोट् लकार के स्थान पर कार्य आदेशित किये जाते हैं। वे कार्य हैं - ''तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम:'' सूत्र से होने वाले तमादि, नित्यंङितः सूत्र से होने वाला सकार लोप। इस सूत्र से अतिदेश किया जाता है। अतः अतिदेश के कारण लङ् के स्थान पर कार्य विधायक सूत्र प्रयुक्त होते हैं। वे यहाँ भी प्रवृत्त होंगे।

15.7 तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम:॥ (3.4.101)

सूत्रार्थ - चारों ङितों के स्थान पर क्रमशः तमादि हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से ताम्, तम्, त एवं अम् का विधान किया गया है। इस सूत्र में दो पद है। नित्यं ङितः सूत्र से ङितषाष्ठ्यन्त पद की अनुवृति होती है। लकार का अधिकार है। ताः च थाः च थ च मिप् च इति तस्थस्थमिपः, तेषां तस्थस्थमिपाम् - इतरेतरयोग द्वन्द्व समास। (यहाँ तस् सान्त प्रत्यय है उसका वेधस् शब्द के समान पुल्लिंग रूप ताः।) ताम् च तम् च तश्च अम् च इति तान्तन्तामः इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। ङित लकार विशेषण है। अतः ल् का जो ङित है वह अर्थ प्राप्त किया जाता है।

सूत्रार्थ होता है - ङित लकार के स्थान पर कहे गये तस्, थस्, थ, मिप् के स्थान पर क्रमशः ताम्, तम् त और अम् हो। ताम् आदि अनेकाल् है। अतः अनेकाल्शित् सर्वस्य' परिभाषा से सम्पूर्ण के स्थान पर होते है। ङित लकार चार होते हैं - लङ्, लिङ्, लुङ्, लृङ्। इन चार लकारों में यह सूत्र प्रवृत्त होगा और लोटोलङ्वत् की सहायता से लोट् में भी प्रयुक्त होता है।

उदाहरण - भवताम्/भवतम्/भवत।

सूत्रार्थ समन्वय - आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान भू धातु से 'आशिषि लिङ्लोटौ' सूत्र से कर्ता अर्थ में लोट् में ल् के स्थान पर तस् प्रत्यय होकर भू+तस्। यहाँ लोट् के स्थान पर तस् विहित है। लोट् के स्थान लङ्वत् कार्य हो यह अतिदेश है। अतः लङ् के स्थान पर कार्य विधायक

''तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम:'' सूत्र से तस् के स्थान पर ताम् होता है। तब भू+ताम् बनता है। स्थानिवद्भाव से भी तिङ्शित् सार्वधातुकम् सूत्र से कर्ता अर्थ में सार्वधातुक संज्ञा करके 'कर्तरिशप्' सूत्र से धातु को शप् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+ताम्। शप् की सार्धधातुक संज्ञा होने से 'सार्वधातुकार्धधातुकयो:' सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ आदेश होकर ओ+अ+ताम्। यथासंख्यमनुदेश: समानाम् की परिभाषा से एचोऽयवापाव: सूत्र से ओ को अव् होकर भव्+अ+ताम् तथा वर्णसम्मेलन होकर भवताम् रूप सिद्ध होता है।

(भवन्तु रूप में लोटोलङ्वत् कार्य नहीं होते हैं। फिर भी क्रमश: जो रूप आता है उसे उपस्थित किया जा रहा है।)

भवन्तु - आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान भू धातु से 'आशिषि लिङ्लोटौ' सूत्र से लोट् में लकार के स्थान पर प्रथम पुरूष बहुवचन की विवक्षा में झि प्रत्यय होकर भू+झि स्थिति बनती है। झ् के स्थान पर 'झोऽन्त:' सूत्र से अन्त् आदेश होकर भू+अन्ति। उसके बाद शप् आगम, गुण आदेश, अयादि सन्धि, होकर भव्+अ+अन्ति बनता है। यहाँ अतोगुणे सूत्र से पररूप एकादेश होकर भवन्ति रूप प्राप्त होता है। यहाँ अन्ति लोट् है। एरू: सूत्र से इकार के स्थान पर उकार होकर भवन्तु सिद्ध होता है।

(यहां सिप् प्रत्यय करने से भव रूप बनता है परन्तु उसकी सिद्धि आगे दी जायेगी। प्रकृत सूत्र के उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है।)

भवतम् - पूर्ववत् आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान भू धातु से 'आशिषी लिङलोटौ सूत्र से कर्ता अर्थ में लोट् में ल् के स्थान पर मध्यमद्विवचन की विवक्षा में थस् प्रत्यय होकर भू-थस्। लोटोलङ्वत् अतिदेश से तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम: सूत्र से थस् के स्थान पर तम् सर्वादेश होकर भू+तम्। उसके बाद शप्, गुण, अवादेश होकर भव्+अ+तस् तथा वर्णसम्मेलन करके 'भवतम्' रूप सिद्ध होता है।

भवत - पूर्ववत् भू धातु से आशिषि लिङ्लोटौ सूत्र से कर्ता अर्थ में लोट् में ल् के स्थान पर मध्यम पुरूष बहुवचन की विवक्षा में 'थ' प्रत्यय होकर भू+थ। लोटोलङ्वत् के अतिदेश से तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम: सूत्र से थ के स्थान पर त सर्वादेश होकर भू+त बनता है। उसके बाद शप् आगम, इगन्त गुण, अयादि होकर भव्+अ+त तथा वर्णसम्मेलन होकर भवत रूप सिद्ध होता है।

15.8 सेर्ह्यपिच्च॥ (34.87)

सूत्रार्थ - लोट् के सि को हि आदेश हो और वह अपित् हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से ही आदेश का विधान है। इस सूत्र में चार पद हैं। से: (6/1), हि (1/1), अपित् (1/1) च अव्ययपद। लोटो लङ्वत् सूत्र से लोट: केषाष्ठ्यन्त पद की अनुवृति होती है। प्रत्यय: और परश्च इन दो सूत्रों का अधिकार है। सूत्रार्थ होता है लोट् के स्थान पर विहित सिप् के स्थान पर ही आदेश होता है और वह अपित् है। तिप् तस् झि -

टिप्पणियाँ

सूत्र से में मध्यम पुरुष एकवचन की विवक्षा में ल् के स्थान पर सिप् का विधान किया जाता है। यदि लोट् के स्थान पर सिप् विहित है तो सिप् के स्थान पर इस सूत्र से हि आदेश होता है। हि अनेकाल् होने से सर्वादेश है।

स्थानिवद् भाव से सिप् को पित् ही आदेश होना चाहिए। उसको हटाने के लिए सूत्र में अपित् कहा गया है। अपित् का फल सार्वधातुकमपित् सूत्र से डिन्तवद् भाव से क्ङिङति च से गुणवृद्धि का निषेध होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - भवसि आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान भू धातु से ''आशिषि लिङ्लोटौ'' सूत्र से कर्ता अर्थ में लोट् में ल् के स्थान पर मध्यम पुरुष एकवचन की विवक्षा में सिप् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+सि बनता है। यहाँ लोट् के स्थान पर सि विहित है। अतः सेर्ह्यपिच्च सूत्र से सि के स्थान पर हि अनेकाल् होने से सर्वादेश होकर भू+हि। स्थानिवद् भाव से सार्वधातुकसंज्ञा, कर्ता में कर्तरिशप् से शप् होकर भू+शप्+हि, अनुबन्धलोप, इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ तथा अवादेश होकर भव्+अ+हि रूप बनता है।

15.9 अतो हेः॥ (6.4.108)

सूत्रार्थ - अदन्त अंग से परे हि का लोप हो जाता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। उस सूत्र में दो पद हैं। अतः हे यह सन्धि विच्छेद है। अतः (5/1), हेः (6/1)। चिणोलुक् सूत्र से तुक् प्रथमान्तं पद की अनुवृति होती है। अंग का अधिकार है। अंगस्य इस षाष्ठ्यन्त पद का पंचम्यन्त से विपरिणमत है। तब वाक्य योजना होती है। अदन्त अंग से परे हि का लोप हो जाता है। यहां तदन्त विधि होती है। यहाँ अतः एवं अंगात् इन दोनों पदों में समान विभक्ति है। अंगात् विशेष्य है और अतः विशेषण है। अतः तदन्त विधि से अदन्तात् अंगात् यह प्राप्त होता है। उसके बाद सूत्रार्थ होता है अदन्त अंग से परे हि का लुक् (लोप) होता है।

विशेषता - प्रत्यय के लुक् श्लु लुप् इन प्रत्ययों के अदर्शन की लुक् संज्ञा होती है। यहाँ हि भी स्थानावद् भाव से प्रत्यय ही है। अतः यहाँ हि समग्र प्रत्यय का लुक् होता है। इसलिए यहाँ अलोऽन्त्यस्य परिभाषा प्रवृत नहीं होती।

उदाहरण - भव।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्तसूत्रों से भव+हि यह स्थिति थी। यहाँ हि प्रत्यय परे होने से भव अंग संज्ञक है और अदन्त भी है। इसलिए उससे परे हि का लुक् इस सूत्र से होता है। भव यह रूप सिद्ध होता है।

तुह्योस्तातङ्ङाशिषि अन्यतरक्याम् सूत्र से विकल्प में हि के स्थान पर तातङ् का विधान होता है। अतः पक्ष में भवतात् रूप होता है।

15.10 मेर्निः॥ (3.4.89)

सूत्रार्थ - लोट् के मि के स्थान पर नि आदेश होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से नि का विधान किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। मेः (6/1), निः (6/1) लोटो लङ्वत् सूत्र सेषाष्ट्यन्त पद की अनुवृत्ति होती है। सूत्रार्थ होता है - लोट् के स्थान पर विहित मिप् के स्थान पर नि आदेश होता है। मि अनेकाल होने से सर्वादेश होता है। लङ्वत् भाव से तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः सूत्र से मिप् को अम् प्राप्त है। उसका इस सूत्र से बाध किया जाता है। अतः अम् का नि अपवाद है।

उदाहरण में समन्वय - आशीर्वाद अर्थ में विद्यमान भू धातु से ''आशिषि लिङ्लोटौ'' सूत्र से कर्ता अर्थ में ल् के स्थान पर उत्तम पुरुष एकवचन की विवक्षा मे मिप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होकर भू-मि। लोटोलङ्वत् के अतिदेश से तस्थस्थामिपां तान्तन्तामः सूत्र से मिप् के स्थान पर अम् आदेश प्राप्त है परन्तु प्रस्तुत सूत्र से तम् का अपवाद से बाध होकर नि का विधान होकर भू+नि स्थिति बनती है।

15.11 आडुत्तमस्य पिच्च॥ (3.4.92)

सूत्रार्थ - लोट् के उत्तम पुरुष को आट् हो तथा वह पित् हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इससे आट् का विधान किया गया है। इस सूत्र में चार पद हैं। आट् (1/1), उत्तमस्य (6/1), पित् (1/1), च अव्ययपद। आट् टित् होने से आद्यन्तौ टकितौ की परिभाषा से आट् उत्तम पुरूष का आदि अवयव होता है।

उत्तम पुरुष छः होते हैं। मिप्, वस्, मस्, इट्, वहि, महिङ्। इनमें से केवल मिप् ही पित् है। अन्य सभी अपित् हैं। अतः उनका भी पित् विधान के लिए आट् को पित् कहा है। सार्वधातुकमपित् सूत्र से अपित् सार्वधातुक ङित् वत् होते हैं। ङित्त्व होने से क्ङिति च सूत्र से गुणवृद्धि का निषेध प्राप्त होता है। उसके निवारण के लिए पित् कहा गया है।

उदाहरण में समन्वय - पूर्वोक्त सूत्र से भू+नि स्थिति थी। यहाँ लोट् के उत्तम पुरुष के मिप् के स्थान पर विहित नि भी उत्तम पुरुष है। अतएव प्रकृत सूत्र से आट् का आगम टित् होने से आदि में होकर भू+आ+नि। सार्वधातुक संज्ञा, कर्ता अर्थ में शप् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+आ+नि। इगन्त अंग ऊ को गुण ओ तथा अवादेश होकर भव्+अ+आ+नि स्थिति बनती है। तब अकः सवर्णे दीर्घः सूत्र से सवर्ण दीर्घ अ+आ को आ होकर 'भवानि' रूप सिद्ध होता है।

15.12 नित्यं ङितः॥ (3.4.99)

सूत्रार्थ - ङित् उत्तम पुरुष के अन्त्य सकार का नित्य लोप होता है।

टिप्पणियाँ

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। नित्यम् क्रियाविशेषण अव्यय पद है। ङित: यह षाष्ठयन्त पद है। लस्य (6/1) का अधिकार है। स:षाष्ठ्यन्त है और उत्तमस्य भी षाष्ठ्यन्त है। षाष्ठ्यन्त से विपरिणाम होता है। ङकार: इत् यस्य स: ङित् तस्य ङित: इति बहुब्रीहि समास। ङित: से ङित् लकार ग्राह्य है। लङ्, लिङ्, लुङ् एवं लृङ् ये चार ङित् लकार हैं। ङित् लकारों के उत्तम पुरुष के स् का नित्य लोप होता है।

इस सूत्र में तदन्त विधि होती है। यहाँ स: और ङिदुत्तमस्य दोनोंषाष्ठ्यन्त समान विभक्तिक पद हैं। स: विशेषण एवं उत्तमस्य विशेष्य है। अत: तदन्तविधि से सकारान्त उत्तम पुरुष का, यह अर्थ प्राप्त होता है। यहाँ अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से सान्त उत्तम के अन्त्य अल् स् का लोप होता है। अत: सूत्रार्थ होता है - ङित् लकारों के स्थान पर विहित जो सकारान्त उत्तम है, उसके अन्त्य अल् स् का नित्य लोप होता है।

उदाहरण - भवाव/भवाम।

सूत्रार्थ समन्वय - भवाव -भू धातु से लोट् के उत्तम पुरुष द्विवचन में वस् प्रत्यय होकर - भू+वस्। आङुत्तमस्य पिच्च सूत्र से आट् का आगम, टित् होने से आदि में - अनुबन्ध लोप होकर भू+आ+वस्। लोटोलङ्वत् के बल से नित्यंङित: सूत्र से वस् के स् का लोप होकर भू+आ+व, सार्वधातुक संज्ञा, शपागम इगन्त अंग, भू के ऊ को गुण ओ, अवादेश, आदि होकर भव्+अ+आ+व अक: सवर्णे दीर्घ: होकर भवाव बनता है।

भवाम - भू धातु से लोट में उत्तम पुरुष बहुवचन में मस् प्रत्यय। आट् का आगम्, सकार का लोप होकर भू+आ+म शपागम, इगन्त अंग को गुण, आवादेश, सवर्णदीर्घ होकर भवाम रूप सिद्ध होता है।

आशीर्वाद अर्थ में भू धातु के लोट् लकार के रूप

आशीर्लोट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	भवतु/भवतात्	भवताम्	भवन्तु
मध्यपुरुष:	भव/भवतात्	भवतम्	भवत
उत्तमपुरुष:	भवानि	भवाव	भवाम

विधि आदि अर्थों में लोट् में तातङ् आदेश नहीं होता है। अन्य रूप समान होते है।

विधिलोट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	भवतु	भवताम्	भवन्तु
मध्यपुरुष:	भव	भवतम्	भवत
उत्तमपुरुष:	भवानि	भवाव	भवाम

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लृट् और लोट् लकार में रूप सिद्धियाँ

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं, उनका रूप इन्हीं के समान कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - पठतु, पठताम्, पठन्तु। पठ, पठतम्, पठत। पठानि, पठाव, पठाम।
2. **गद व्यक्तायां वाचि** - गदतु, गदताम्, गदन्तु। गद, गदतम्, गदत। गदानि, गदाव, गदाम।
3. **अर्च पूजायाम्** - अर्चतु, अर्चताम्, अर्चन्तु। अर्च, अर्चतम्, अर्चत। अर्चानि, अर्चाव, अर्चाम।
4. **व्रज गतौ** - व्रजतु, व्रजताम्, व्रजन्तु। व्रज, व्रजतम्, व्रजत। व्रजानि, व्रजाव, व्रजाम।
5. **कटें वर्षावरणयोः** - कटतु, कटताम्, कटन्तु। कट, कटतम्, कटत। कटानि, कटाव, कटाम।
6. **क्षि क्षये** - क्षयतु, क्षयताम्, क्षयन्तु। क्षय, क्षयतम्, क्षयत। क्षयानि, क्षयाव, क्षयाम।
7. **चितीं संज्ञाने** - चेततु, चेतताम्, चेतन्तु। चेत, चेततम्, चेतत। चेतानि, चेताव, चेताम।
8. **तप सन्तापे** - तपतु, तपताम्, तपन्तु। तप, तपतम्, तपत। तपानि, तपाव, तपाम।
9. **शुच शोके** - शोचतु, शोचताम्, शोचन्तु। शोच, शोचतम्, शोचत। शोचानि, शोचाव, शोचाम।

पाठगत प्रश्न 15.2

1. लोट् च सूत्र का अर्थ लिखिए?
2. आशीर्वाद अर्थ में कौन सा लकार होता है?
3. आशीर्वाद अर्थ में लोट् किस सूत्र से होता है?
4. आशीष् का क्या अर्थ है?
5. एरुः सूत्र का क्या अर्थ है?
6. मेर्निः से किस लकार में क्या होता है?
7. भवाव में स् का लोप किस सूत्र से होता है?
8. लोट् में मिप् के स्थान पर क्या होता है?

   (अ) नि (ब) अम् (स) इलोप (द) आट्

9. लोट् का उदाहरण कौन सा है?

   (अ) भवावः (ब) भवाम (स) भवथ (द) भवतः

टिप्पणियाँ

10. भवतु में ति के इ को उ किस सूत्र से होता है ?

(अ) इतश्च (ब) एरूः (स) नित्यं ङितः (द) लोट च्

11. लोट् को आट् किस सूत्र से होता है?

(अ) आटश्च (ब) आडजादीनाम्

(स) आडुतमस्य पिच्च (द) लोट च्

12. लोट् में किसको आट् होता है?

(अ) अंग को (ब) मध्यम को (स) उतम को (द) आगम को

13. नित्यं ङितः क्या करता है?

(अ) आडागम (ब) अडागम (स) वृद्धि (द) सलोप

14. लोट् का उतम पुरुष कैसा है?

(अ) पित् (ब) अपित् (स) ङित् (द) कित्

15. सेर्हि कैसा है?

(अ) पित् (ब) अपित् (स) ङित् (द) कित्

16. अतो हेः सूत्र से क्या होता है?

(अ) अल्लोप (ब) हि लोप (स) हि लुक (द) अतो दीर्घ

17. अतो हेः का उदाहरण क्या है?

(अ) याहि (ब) एधि (स) भवत (द) भव

भू धातु लङ् लकार में रूप

15.13 अनद्यतने लङ्॥ (3.2.111)

सूत्रार्थ - अनद्यतन भूत अर्थ की धातु से लङ् प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद हैं। अनद्यतने (7/1), लङ् (1/1)। भूते (7/1), धातोः (5/1), प्रत्ययः (1/1), परश्च (1/1) इनका अधिकार आता है। अद्य भवः अद्यतनः, अविद्यमानः अद्यतनः यस्मिन् सः अनद्यतनः कालः इति बहुव्रीहिसमासः। अतीतरात्रि के अन्तिम समय से आगामि रात्रि के आदिकाल सहित काल अद्यतन होता है। उससे निम्न अनद्यतन होता

है। अतीतकाल ही भूतकाल है। पदयोजना - अनद्यतने भूते धातोः परः लङ् स्यात्। सूत्रार्थ होता है - अनद्यतन भूत अर्थ के विद्यमान होने पर धातु से परे लङ् प्रत्यय हों।

धातु के अर्थ, व्यापार और फल कह चुके हैं। जिस धातु का अर्थ व्यापार अर्थात् क्रिया अनद्यतन भूतकाल में होती है वह धातु अनद्यतन भूतार्थवृत्ति कही जाती है। उस काल में क्रिया की वृति है जिसकी वह अनद्यतन भूतार्थवृति धातु होती है। उस काल में क्रिया की प्रकट विवक्षा होती है तब धातु से परे लङ् प्रत्यय का विधान किया जाता है।

उदाहरण - रामः अयोध्यायाः राजा अभवत्।

भू धातु से अनद्यतन भूत अर्थ में लङ् प्रत्यय, लङ् के ङ् एवं अ की इत्संज्ञा एवं लोप होकर भू+ल् स्थिति बनती है। प्रथम पुरूष एकवचन में तिप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, कर्ता अर्थ में शप् आगम अनुबन्धलोप इतश्च से ति के इ का लोप होकर भू+अ+त् इगन्त अंग को गुण एवं अयादि होकर भव्+अत् बनता है तथा अट् का आगम होकर अभवत् सिद्ध होता है।

15.14 लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः॥ (6.4.71)

सूत्रार्थ - लुङ् लङ् लृङ् में अंग को अट् होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से अट् का विधान किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। लुङ् च लङ् च लृङ् च इति लुङ्लङ्लृङः तेषु लुङ्लङ्लृङ्क्षु इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। सूत्रार्थ होता है - लुङ् लङ् लृङ् ये प्रत्यय परे हो तो, तदन्त अंग को अट् हो तथा वह उदात्त हों। अट् के ट् की हलन्त्यम् से इत् संज्ञा तथा तस्यलोपः से लोप होता है। अट् टित् होने से आद्यन्तौ टकितौ की परिभाषा से अंग का आदि अवयव होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप, ल् के स्थान पर प्रथमपुरुष एकवचन में तिप्, अनुबन्धलोप होकर भू+ति। तिङ्शित् सार्वधातुकम से सार्वधातुक संज्ञा होने पर कर्त्तरिशप् से शप् तथा अनुबन्धलोप, भू+अ+ति। इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ तथा अयादि होकर भवति रूप बनता है। प्रकृत सूत्र लुङल्ङ्लृङ्क्ष्वडुदान्तः से अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर अभवति स्थिति बनती है।

15.15 आडजादीनाम्॥ (6.4.72)

सूत्रार्थ - लुङ्, लङ् एवं लृङ में अजादि अंग को आट् का आगम होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। यह सूत्र से आट् का आगम होता है। इस सूत्र में दो पद हैं। आट् (1/1), अजादीनाम् (6/3)। अंग का अधिकार है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से लुङ्लङ्लृङ्क्षु सप्तमी बहुवचनान्त पद की अनुवृति है उदात्तः इस पद से प्रथमान्त पद की अनुवृत्ति है। अचः आदिः येषां ते अजादयः तेषां अजादिनाम् इति बहुव्रीहि समासः। लुङ् च लङ् च लृङ्

टिप्पणियाँ

च इति लुङ्लङ्लृङः तेषु लुङ्लङ्लृङ्क्षु इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। पद योजना होती है अजादिनाम् अंगानाम् आट् उदात्तः लुङ्लङ्लृङ्क्षु। सूत्र होता है लुङ् लङ् लृङ् प्रत्यय परे हो तो अजादि अंग को आट् का आगम हो और वह उदात्त हो। आट् के टकार की हलन्त्य सूत्र से इत् संज्ञा व तस्य लोपः से लोप होता है। आट् टित् होने से आद्यन्तौ टकितौ सूत्र से अंग का आदि अवयव होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - **आतत्** - अत सातत्यगमने धातु से अनद्यतन भूत अर्थ में लङ् प्रत्यय, लङ् के ङ् एवं अ की इत्संज्ञा एवं लोप होकर अत्+ल् स्थिति बनती है। प्रथम पुरूष एकवचन में तिप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, कर्ता अर्थ में शप् आगम अनुबन्धलोप होकर अत्+अ+ति इगन्त अंग को गुण एवं अयादि होकर अत्+अ +ति बनता है तथा लङ् परे होने से अत् अंग है उसका आदि वर्ण अकार अच् है अतः अजादि अंग होने से प्रकृत सूत्र से आट् का आगम, इत् संज्ञा होकर आ+अत्+अ+ति बनता है। आगे

15.16 आटश्च॥ (6.1.90)

सूत्रार्थ - आट् से अच् परे होने पर वृद्धि एकादेश हो।

सूत्रावतरण- आ एध् ल् इस स्थिति में अकार एवं एकार के स्थान पर वृद्धि करने के लिए यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। यह सूत्र से वृद्धि होती है। इस सूत्र में दो पद हैं। आटःषाष्ठ्यन्त पद, च अव्ययपद है। वृद्धिरादैच् सूत्र से वृद्धिः प्रथामान्त पद की अनुवृत्ति है। एकः पूर्वपरयोः सूत्र का अधिकार है। उससे पूर्व पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व आ+अत्+अ+ति स्थिति में आटश्च सूत्र से अच् परे रहते आ अ दोनों को वृद्धि एकादेश होकर आत्+अ+ति तथा इतश्च सूत्र से इकार का लोप होकर **आतत्** रूप सिद्ध होता है।

15.17 इतश्च॥ (3.4.99)

सूत्रार्थ - ङित् लकार के स्थान पर आदेश हुआ जो इकारान्त परस्मैपद है, उसके अन्त्य इकार का लोप हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से लोप का विधान किया गया है। इस सूत्र में दो पद हैं। इतः (6/1),च अव्ययपद है। नित्यं ङितः सूत्र से ङितः इसषाष्ठयन्त पद की अनुवृत्ति है। लस्य (6/1) का अधिकार है। इतश्च लोपः परस्मैपदेषु सूत्र से परस्मैपद की अनुवृत्ति है औरषाष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणमित है। पदयोजना होती है ङितः लस्य इतः परस्मैपदस्य लोपः।

इतः परस्मैपदस्य ये दो समान विभक्ति पद हैं। इतः विशेषण एवं परस्मैपद विशेष्य है। अतः तदन्तविधि से इदन्त परस्मैपद का यह अर्थ प्राप्त होता है। इदन्तपरस्मैपद यहाँ स्थानषष्ठी अल्समुदायबोध से

सुना जाता है और आदेश लोपरूप है अतः अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से इदन्त परस्मैपद अन्त्य अल् का लोप होता है। ङितः यह लस्य का विशेषण है दोनों का अभेदान्वय होता है। अतः सूत्रार्थ होता है - ङित लकारों के स्थान पर विहित जो इकारान्त परस्मैपद है, उस इकार का लोप होता है। यह लोप सभी ङित लकारों में होता है।

उदाहरण - अभवत्। अभवन्। अभवः।

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त सूत्रों से अभव+ति स्थिति है। यहां लङ् ङित लकार है। उसके स्थान पर विहित ति इकारान्त परस्मैपद है। इतश्च सूत्र से इकार का लोप होकर अभवत् रूप सिद्ध होता है। यहाँ दसवीं कक्षा में पढे संधि प्रकरण के कुछ सूत्र प्रवृत होते है! झलां जशोऽन्ते सूत्र से अन्त्य तकार के स्थान पर दकार होकर **अभवद्** बनता है। वाऽवसाने सूत्र से विकल्प में चर्त्व तकार होकर **अभवत्** रूप सिद्ध होता है।

अभवताम् - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्।ल् के स्थान पर तस् प्रत्यय भू+तस्। तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम: सूत्र से तस् को ताम् सर्वादेश होकर भू+ताम्। ताम् की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+ताम्। सार्वधातुकार्ध धातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+ताम्। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+ताम् स्थिति बनती है, मिलाने पर भवताम्। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर **अभवताम्** रूप सिद्ध होता है।

अभवन् - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। ल् के स्थान पर झि प्रत्यय भू+झि। झ् के स्थान पर 'झोऽन्तः' सूत्र से अन्त् आदेश होकर भू+अन्ति। अन्ति की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+अन्ति। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+अन्ति। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+अन्ति स्थिति बनती है, यहाँ अतोगुणे सूत्र से पररूप एकादेश होकर भवन्ति रूप प्राप्त होता है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर अभवन्ति रूप बनता है। इतश्च सूत्र से इकार का लोप होकर अभवन्त् तथा संयोगान्तस्य लोपः सूत्र से अन्त्य तकार का लोप होकर **अभवन्** रूप सिद्ध होता है।

अभवः - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्।ल् के स्थान पर सिप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर भू+ सि। सिप् की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+ सि। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+सि। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+सि स्थिति बनती है, मिलाने पर भवसि।

टिप्पणियाँ

लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर अभवसि। इतश्च सूत्र से इकार का लोप होकर अभवस् तथा स् को रुत्व विसर्ग होकर **अभवः** रूप सिद्ध होता है।

अभवतम् - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। ल् के स्थान पर मध्यमपुरुषद्विवचन में थस् प्रत्यय भू+ थस्। तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः सूत्र से थस् को तम् सर्वादेश होकर भू+तम्। तम् की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+तम्। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+तम्। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+तम् स्थिति बनती है, मिलाने पर भवतम्। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर **अभवतम्** रूप सिद्ध होता है।

अभवत - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। ल् के स्थान पर मध्यमपुरुषबहुवचन में थ प्रत्यय भू+थ तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः सूत्र से थ को त सर्वादेश होकर भू+त। त की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+त। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+त। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+त स्थिति बनती है, मिलाने पर भवतम्। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर **अभवत** रूप सिद्ध होता है।

अभवम् - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। ल् के स्थान पर उत्तमपुरुषैकवचन में मिप् प्रत्यय भू+ मिप् तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः सूत्र से मिप् को अम् सर्वादेश होकर भू+ अम्। अम् की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+ अम्। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+ अम्। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+ अम् स्थिति बनती है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर अभव+अम् एवं अतो गुणे सूत्र से पररूप एकादेश होकर **अभवम्** रूप सिद्ध होता है।

अभवाव - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। ल् के स्थान पर उत्तमपुरुषद्विवचन में वस् प्रत्यय भू+वस्। नित्यं ङितः सूत्र से वस् के सकार का लोप होता है। भू+व। व की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+व। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+ व। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+व

स्थिति बनती है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर अभव+व एवं अतो दीर्घो यञिसूत्र से अदन्त अंग को दीर्घ आदेश होकर **अभवाव** रूप सिद्ध होता है।

अभवाम - अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु से अनद्यतने लङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लङ् का विधान होता है। अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। ल् के स्थान पर उत्तमपुरुषबहुवचन में वस् प्रत्यय भू+मस्। नित्यं ङितः सूत्र से मस् के सकार का लोप होता है। भू+म। म की तिङ् शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा में कर्तरि शप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+अ+म। सार्वधातुकार्धधातुकयोः सूत्र से इगन्त अंग भू के ऊ को गुण ओ होकर भो+अ+ म। यथासंख्यामनुदेशः समानाम्' इस परिभाषा से एचोऽयवायावः सूत्र से भो के ओ को अव् आदेश होकर भव्+अ+म स्थिति बनती है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से भव अंग को अट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर अभव+म एवं अतो दीर्घो यञिसूत्र से अदन्त अंग को दीर्घ आदेश होकर **अभवाम** रूप सिद्ध होता है।

अनद्यतन भूत अर्थ में विद्यमान भू धातु के लङ् लकार के रूप

लृट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
मध्यपुरुषः	अभवः	अभवतम्	अभवत
उत्तमपुरुषः	अभवम्	अभवाव	अभवाम

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं, उनका रूप इन्हीं के समान कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - अभवत्, अभवताम्, अभवन्। अभवः, अभवतम्, अभवत। अभवम्, अभवाव, अभवाम।
2. **गद व्यक्तायां वाचि** - अगदत्, अगदताम्, अगदन्। अगदः, अगदतम्, अगदत। अगदम्, अगदाव, अगदाम।
3. **अर्च पूजायाम्** - आर्चत्, आर्चताम्, आर्चन्। आर्चः, आर्चतम्, आर्चत। आर्चम्, आर्चाव, आर्चाम।
4. **व्रज गतौ**- अव्रजत्, अव्रजताम्, अव्रजन्। अव्रजः, अव्रजतम्, अव्रजत। अव्रजम्, अव्रजाव, अव्रजाम।
5. **कटें वर्षावरणयोः** - अकटत्, अकटताम्, अकटन्। अकटः, अकटतम्, अकटत। अकटम्, अकटाव, अकटाम।
6. **क्षि क्षये** - अक्षयत्, अक्षयताम्, अक्षयन्। अक्षयः, अक्षयतम्, अक्षयत। अक्षयम्, अक्षयाव अक्षयाम।

टिप्पणियाँ

7. **चितीं संज्ञाने** - अचेतत्, अचेतताम्, अचेतन्। अचेतः, अचेततम्, अचेतत। अचेतम्, अचेताव, अचेताम।

8. **शुच शोके** - अशोचत्, अशोचताम्, अशोचन्। अशोचः, अशोचतम्, अशोचत। अशोचम्, अशोचाव, अशोचाम।

9. **तप संतापे** - अतपत्, अतपताम्, अतपन्। अतपः, अतपतम्, अतपत। अतपम्, अतपाव, अतपाम।

पाठगत प्रश्न 15.3

1. अनद्यतने लङ् किस काल में होता है?
2. लङ् विधायक सूत्र कौन सा है?
3. अभवत् में अट् विधायक सूत्र कौन सा है?
4. इतश्च सूत्र की वृति लिखिए?
5. लङ् में हलादि अंग को अट् किस सूत्र से होता है?
6. लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अट् का आगम किस को होता है?
   (अ) धातु को (ब) अंग को (स) प्रत्यय को (द) अभ्यास को
7. इतश्च सूत्र का उदाहरण क्या है?
   (अ) अभवः (ब) अभवताम् (स) अभवतम् (द) अभवम्
8. अभवत् में तिप् के इकार का लोप किस सूत्र से होता है?
   (अ) इतश्च (ब) एरुः (स) नित्यं ङितः (द) अतो हेः
9. आडजादीनाम् सूत्र का उदाहरण क्या है?
   (अ) आगच्छति (ब) आतत् (स) आस्ते (द) भवानि
10. इनमें कौन लोट् में प्रयुक्त नहीं होता है
   (अ) एरुः (ब) शेषात् कर्तरि परस्मैपदम्
   (स) शेषे प्रथमः (द) इतश्च

पाठ का सार

इस पाठ में लट् लोट् लङ् इन तीन लकारों को प्रस्तुत किया है। उन लकारों में भू धातु के रूप सिद्ध करने के लिए जो सूत्र प्रयुक्त होते है, उनको प्रस्तुत किया गया है।

क्रियार्थ क्रिया के होने न होने पर धातु से भविष्यकाल में लृट् शेषे सूत्र से लट् का विधान होता है। स्यतासीलृलुटोः सूत्र से श्शप् का बाध होकर स्य प्रत्यय होता है। स्य प्रत्यय आर्धधातुक होता

है अमः यह आर्धधातुक लकार है। विधि आदि अर्थों को प्रकट करने के लिए लोट् च से लोट् लकार होता है। आशीष् अर्थ में आशीषि लिङ्लोटौ सूत्र से लिङ् व लोट् लकार होता है। आशीर्लोट् एवं विधिलोट् में साधारण कार्य होते है केवल तिप् सिप् को तातङ् विशिष्ट कार्य होता है। उससे भवतु, भवतात्, भव, भवतात् दो रूप बनते है, अन्य रूप समान होते हैं। इसमें इ को उ, सि को हि, अदन्त अंग से परे हि का लोप , मेर्निः से मि को नि, तथा आडुत्तमस्य पिच्च से उत्तम पुरूष को आट् का आगम होता है। कुछ कार्य लङ् लिङ् लुङ् लृङ् इन चार ङित् लकारों में के समान होते हैं। जैसे तस् थस् थ मिप् को क्रमश ताम् तम् त अम् तथा अन्त्य से सकार का लोप होता है।

अनद्यतन भूत काल को प्रकट करने के लिए अनद्यतने लङ् से लङ् लकार होता है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अट् का आगम होता है। आडजादिनाम् से अजादि को आट् का आगम एवं इतश्च से इकार का लोप होता है।

पाठांत प्रश्न

1. लृट् शेषे सूत्र की व्याख्या कीजिए?
2. भविष्यति भविष्यन्ति भविष्यामि इन की ससूत्र व्याख्या कीजिए?
3. लोट् च सूत्र की व्याख्या कीजिए?
4. आशिषि लिङ्लोटौ सूत्र की व्याख्या कीजिए?
5. मेर्निः सूत्र की व्याख्या कीजिए?
6. नित्यं ङितः सूत्र की व्याख्या कीजिए?
7. लोट् के मिप् को अम् कहाँ नहीं होता?
8. भवतात्, भवतु, भवताम्, भव, भवानि, भवाम की ससूत्र व्याख्या कीजिए?
9. अनद्यतने लङ् सूत्र की व्याख्या कीजिए?
10. इतश्च सूत्र की व्याख्या कीजिए?
11. अभवत्, अभवन्, अभवः, अभवम् की ससूत्र सिद्धि कीजिए?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

15.1

1. भविष्यामि।
2. नहीं।
3. आधधामुक।
4. लृट् व लङ् में।
5. क्रियार्थ क्रिया से भिन्नार्थ शेष।
6. 2।

टिप्पणियाँ

15.2

1. विधि आदि अर्थों में लोट् हो।
2. लिङ्लोटौ।
3. आशिषि लिङ्लोटौ।
4. आशासनम् याच्ञा आशीः। अप्राप्त इष्ट अर्थ की प्राप्तु करने की इच्छा आशीष है।
5. लोट् के इकार को उ होता है।
6. लोट् के मिप् को नि होता है।
7. नित्यं ङितः।

8. 1 9. 2 10. 2 11. 3 12. 3

13. 4 14. 1 15. 2 16. 3 17. 4

15.3

1. भूत में।
2. अनद्यतने लङ्।
3. लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः।
4. ङित् लकार के परस्मैपद में इकारान्त का लोप हो।
5. लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः।

6. 2 7. 1 8. 1 9. 2 10. 4

16

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों में रूप सिद्धियाँ

तिङन्त प्रकरण के पूर्व पाठों में लट् लिट् लुट्, लोट् व लङ् लकार पढ़ चुके। इस पाठ में लिङ् लुङ् व लृङ् लकार पढ़ेंगे। लिङ् के दो भाग हैं, आज्ञा अनुरोध व यांचना आदि भाषा से प्रकट किये जाते है। उसके लिए विधिलिङ् लकार का प्रयोग किया जाता है। लिङ् लकार किसी काल को प्रकट नहीं करता अपितु क्रिया में प्रेरणा का द्योतक है। आशीर्वाद अर्थ में आशीर्लिङ् प्रयुक्त होता है।

अतीत कालीन क्रिया को प्रकट करने के लिए लुङ्लकार का प्राचीनसाहित्य में प्रचुर प्रयोग हुआ है। लुङ् विकरण भेद से अनेक प्रकार का है। इस पाठ में लुङ् की साधारण प्रक्रिया प्रदर्शित की गई है। अवशिष्ट सूत्र आगे कहे जायेंगे। लुङ्लकार का अल्पप्रयोग होता है। फिर भी लोक में प्रयोगवश यहाँ उपस्थित है।

भू धातु के इन लकारों में रूप प्रदर्शित किये गये हैं। छात्र अन्य धातुओं के रूप भू धातु के समान अभ्यास करे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप -

- विधि आदि को जानेंगे;
- लिङ् के भेदों को जानेंगे;

टिप्पणियाँ

- आज्ञादि करने के लिए योग्य लकार का प्रयोग जानेंगे;
- सभी अतीतकालीन क्रियाओं के प्रकट करने के लिए लुङ् का प्रयोग जानेंगे;
- क्रिया उत्पत्ति के लिए लकार का प्रयोग जानेंगे;

विधिलिङ् लकार

16.1 विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्॥ 3.3.161

सूत्रार्थ - विधि निमन्त्रण आमन्त्रण अधीष्ट संप्रश्न प्रार्थना आदि अर्थों में लिङ् लकार हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से लिङ् लकार का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद है। विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु (7/1), लिङ् (1/1)। धातोः (5/1) प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) इनका अधिकार आता है। विधिः च निमन्त्रणं च आमन्त्रणं च अधीष्टः च संप्रश्नं च प्रार्थनं च इति विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनानि, तेषु विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्ट संप्रश्नप्रार्थनेषु इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। सूत्रार्थ होता है- विधि निमन्त्रण आमन्त्रण अधीष्ट संप्रश्न प्रार्थना आदि अर्थों में विद्यामान धातु से परे लिङ् लकार होता है।

विधि - आयु अधिकार या वर्ण से अपने से छोटे या सेवक आदि को आज्ञा देना विधि है। वक्ता के वचन से श्रोता कर्म में प्रवत्त होता है। वहाँ आज्ञा होती है उदाहरण- स्वामी सेवक से कहता है- भवान् वस्त्रं क्षालयेद्। आचार्य ने छात्र से कहा- त्वं वेदं पठेः। स्वामी ने सेवक से कहा- जलम् आनयेः। भश्त्य या सेवक के न करने पर यद्यपि पाप नहीं लगता फिर भी वह दण्ड के योग्य होता है। शास्त्रवचन प्रायः आज्ञारूप से होते है। जैसे सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्। यजेत् स्वर्गकामः।

निमन्त्रण- नियोगकरण ही निमन्त्रण है। अवश्य कर्त्तव्य प्रेरण को निमन्त्रण कहते हैं। अर्थात् ऐसी प्रेरणा जिसका पालन न किया जाये तो प्रत्यवाय (पाप) लगता हो। जैसे श्राद्धादि में किसी अन्य श्रोत्रिय भोक्ता के न मिलने पर यदि कोई ब्राह्मण अपने दोहित्र आदि को कहे कि इह भवान् भुंजीत। यदि कोई दोहित्रादि ऐसे श्राद्ध भोजन के लिए मना करेगा तो स्मृतिशास्त्रानुसार उसे पाप का भागी होना पड़ेगा।

आमन्त्रण- कामाचारानुज्ञा ही आमन्त्रण होता है। ऐसी प्रवृत्तना का नाम आमन्त्रण है। जिसमें कामचारिता होती है अर्थात् करना या न करना इच्छा पर निर्भर करता है, करने से पुण्य या न करने पर पाप नहीं होता। जैसे घर में आये अतिथि को गृहस्वामी कहता है- इह आसने उपविशेत् भवान्। परन्तु अतिथि स्वेच्छानुसार अन्यत्र बैठता है। ऐसा आचरण करने से अतिथि को पाप या अधर्म नहीं होता। इस प्रकार यहां अतिथि के प्रति आज्ञा भी नहीं है। सम्प्रति आमन्त्रण का अर्थ आह्वान भी माना जाता है। जैसे मित्र इदं फलं खादेः त्वम्। इस वाक्य में क्रिया का प्रवर्तन है। यहां खाने के लिए प्रेरणा भी है। किन्तु आज्ञा नहीं हैं। अतः न करने पर प्रत्यवाय (पाप) नहीं है, कामचार है।

अधीष्ट - सत्कारपूर्वक व्यापार ही अधीष्ट है, कोई ग्रहस्थी अपने पुत्र को गुरुकुल ले जाकर गुरु को कहता है-पुत्रम् अध्यापयेद् भवान्। यहां इस वचन से गुरु अध्यापन कार्य में प्रेरित होता है, परन्तु यहां गुरु के प्रति आज्ञा नहीं है, याच्या भी नहीं है, न करने पर पाप भी नहीं है। अर्थात् किसी बड़े गुरु आदि को सत्कारपूर्वक किसी कार्य को करने की प्रेरणा देना अधीष्ट कहलाता है।

सम्प्रश्न - विचार करके निर्धारण करना ही सम्प्रश्न है। जैसे कोई शिष्य गुरु को कहता है- किं भो व्याकरणम् अधीनीय उत शिक्षाम्। यह प्रश्न करके शिष्य निर्णय करना चाहता है। अर्थात् किसी बड़े के समीप किसी बात का सम्प्रधारण या निश्चय करना सम्प्रश्न है।

प्रार्थना- मांगने का नाम प्रार्थना है। जैसे कोई भिक्षुक कहता है- भवान् अन्नं मे द्याद्। भो भोजनं लभेय।

विधि आदि प्रथम चार अर्थों में प्रवर्तन सामान्य है। अतः वहां प्रवर्तनात्व से लिङ् अर्थ है। जैसे अनुचर प्रति जलम् आनय। इस वाक्य से अनुचर का जलानय में प्रवृत्ति होती है अतएव इस प्रकार के वाक्य प्रयोग ही यहां व्यापार है। वहां विशेषकर लोट् या लिङ् का प्रयोग होता है। यहां प्रवृत्ति प्रेरित निष्ठ और उसके अनुकूल व्यापार प्रेरक निष्ठ है, प्रेरक वाक्य प्रयोगकर्ता होता है।

उदाहरण- विधि आदि अर्थों में विद्यमान भू धातु से विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लिङ्, लिङ् का ङकार व इकार का अनुबन्ध लोप होकर भू+ल् इस स्थिति में प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिप्तस्झि ... से तिप् प्रत्यय एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+त्। तब

16.2 यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च॥ (3.4.103)

सूत्रार्थ - परस्मैपद लिङ् को यासुट् का आगम हो और वह ङित् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र यासुट् का विधान है। इस सूत्र में पांच पद है। यासुट् (1/1), परस्मैपदेषु (7/3), उदात्तः (1/1), ङित् (1/1), च अव्ययपद। लिङः यासुट् सूत्र से लिङ इस षष्ठ्यान्त पद की अनुवृत्ति है। ङ् इत् यस्य स ङित् बहुव्रीहिसमासः। परस्मैपदेषु का परस्मैपदनाम् इस षष्ठयान्तता से विपरिणाम होता है अतः सूत्रार्थ होता है - लिङ् के स्थान पर विहित परस्मैपदों को यासुट् का आगम होता है और वह उदात्त हो। यासुट् टित् होने से आद्यन्तौ टकितौ परिभाषा से आदि अवयव होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - भू+त् इस स्थिति में प्रकृतसूत्र से लिङ् त् के स्थान पर परस्मैपद को यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+त्। यास्त् समुदाय की तिङ्शत् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा तथा कर्त्तरि शप् से शप् का आगम्, इगन्त को गुण तथा अवादि होकर भव यास्त् स्थिति बनती है। तब-

टिप्पणियाँ

16.3 लिङः स लोपोऽनन्त्यस्य॥ (7.2.79)

सूत्रार्थ - सार्वधातुक लिङ् के अनन्त्य सकार का लोप होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र से लोप का विधान है। इस सूत्र में चार पद है। लिङः (6/1), स (6/1), लोपः (1/1) अनन्त्यस्य (6/1)। न अन्त्यः अनन्त्यः, तस्य इति तत्पुरूष समासः। कदादिभ्यः सार्वधातुके सूत्र से सार्वधातुके इस सप्तम्यन्त पद की अनुवृत्ति है। सार्वधातुकस्य इस षष्ट्यान्तता से विपरिणाम है। पद योजना होती है - लिङः अनन्त्यस्य आर्धधातुकस्य लिङः सस्य लोपः। सूत्रार्थ होता है- सार्वधातुकसंज्ञक जो लिङ् आदेश है, उसके अनन्त्य सकार का लोप होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व भव+यास्त् स्थिति में यास्त् अश लिङ् सार्वधातुक संज्ञक है। यास्त् में स् अन्त्य नहीं है, वह अनन्त्य है। अतः प्रकृत सूत्र से सकार का लोप प्राप्त है।

16.4 अतो येयः॥ (7.2.80)

सूत्रार्थ - अदन्त अंग से परे सार्वधातुक के अवयव यास् के स्थान पर इय् आदेश है।

सूत्रार्थ समन्वय - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। अतः या इयः यह सूत्रगत पदच्छेद है। अतः (5/1), या (लुप्तषष्ठयैकवचनान्त पद), इयः (1/1)। अंगस्यषाष्ठ्यन्त अधिकार का अंगात् इस पंचम्यन्त से विपरिणाम है। रुदादिभ्यः सार्वधातुके सूत्र से सार्वधातुके इस सप्तम्यन्त की अनुवृत्ति है। उसका सार्वधातुकस्य इसषाष्ठ्यन्तता से विपरिणाम है। इस प्रकार पद योजना होती है - अतः अंगस्य सार्वधातुकस्य या इतः।

सूत्रार्थ होता है - अदन्त अंग से पद सार्वधातुक के अवयव यास् को इय् आदेश होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व भव+यास्त् स्थिति में लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य सूत्र से सकार लोप प्राप्त किन्तु इस सूत्र से यास् को इय् होकर भव+इय्+त् स्थिति बनती है। तब-

16.5 लोपो व्योर्वलि॥ (6.1.64)

सूत्रार्थ - वल् परे हो तो वकार एवं यकार का लोप हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में तीन पद है। लोपः व्योः वलि सूत्रगत पदच्छेद है। लोपः (1/1), व्योः (6/2) वलि (7/1)। व् च य् व्यौ, तयोः व्योः इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। सूत्रार्थ होता है - वल् परे होने पर वकार एवं यकार का लोप होता है।

उदाहरण - पूर्व भव+इय्+त् स्थिति में वल् तकार परे होने से प्रकृत सूत्र से यकार का लोप होकर भव+इ+त् तथा आद्गुणः से गुण होकर भवेत् रूप सिद्ध होता है।

भवेताम्- विधि आदि अर्थों में विद्यमान भू धातु से विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लिङ्,लिङ् का ङकार व इकार का अनुबन्ध लोप होकर भू+ल् इस स्थिति में प्रथमपुरुष द्विवचन की विवक्षा में तिप्तसझि ... से तस् प्रत्यय होकर भू+तस्। तस्थस्थमिपां तान्मन्ताम: सूत्र से तस् के स्थान सर्वादेश ताम्, भू+ताम्, लिङ् तस् के स्थान पर विहित ताम् परस्मैपद को यासुट् आगम एव अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्ताम् यास्त् समुदाय की तिङ्शत् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा तथा कर्त्तरि शप् से शप् का आगम्, इगन्त को गुण तथा अवादि होकर भव+ यास्ताम् स्थिति बनती है। यास्ताम् अश लिङ् सार्वधातुक संज्ञक है। यास्त् में स् अन्त्य नहीं है, वह अनन्त्य है। अत: लिङ: सलोपोऽनन्त्यस्य सूत्र से सकार का लोप प्राप्त किन्तु अतो येय: सूत्र से यास् को इय् होकर भव+इय्+ताम् स्थिति बनती है तब लोपो व्योर्वलि सूत्र से यकार का लोप होकर भव+इ+त् तथा आद्गुण: से गुण होकर भवेताम् रूप सिद्ध होता है।

16.6 झेर्जुस्॥ (3.4.108)

सूत्रार्थ - लिङ् के झि के स्थान पर जुस् आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इसमें दो पद है। झे: (6/1) जुस् (1/1)। लिङ: यासुट् सूत्र से लिङ: इस षष्ठ्यान्त पद की अनुवृत्ति है। वाक्य योजना होती है - लिङ: झे: जुस्। सूत्रार्थ होता है- लिङ् के झि के स्थान पर जुस् आदेश होता है। अर्थात् लिङ् के स्थान पर विहित जो झि प्रत्यय है, उसके स्थान पर जुस् आदेश होता है। जुस् प्रयोगोत्तर स्थानिवद् भाव से प्रत्ययत्व को प्राप्त होता है। तब चुट् से जुस् के ज् की इत्संज्ञा, तस्य लोप: से लोप तथा अनेकाल् होने से अनेकाल्शित् सर्वस्य परिभाषा से सम्पूर्ण झि को जुस् होता है।

उदाहरण - भवेयु:

सूत्रार्थ समन्वय - विधि आदि अर्थों में भू धातु से कर्ता अर्थ में लिङ् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। प्रथमपुरूषबहुवचन की विवक्षा में तिप्तस्झि ... सूत्र से झि प्रत्यय भू+झि। झेर्जुस् सूत्र से झि को जुस् आदेश भू+जुस्, अनुबन्धलोप, यासुट् आगम् होकर भू+यास्+उस्, कर्तरिशत् से शप् आगम, अनुबन्धलोप, अतो येय: से यास् को इय् आदेश होकर भू+इय्+उस्, इगन्त भू को गुण एवं अवादि होकर भव+इय्+उस्, आद्गुण: से गुण होकर तथा स् को रूत्व एवं विसर्ग होकर भवेयु: रूप सिद्ध होता है।

भवे: - विधि आदि अर्थों में भू धातु से कर्ता अर्थ में लिङ् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। मध्यमपुरूष एकवचन की विवक्षा में तिप्तस्झि ... सूत्र से सिप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप भू+सि। इतश्च सूत्र से सि का इकार लोप भू+स् अनुबन्धलोप, यासुट् आगम् होकर भू+यास्+स्, कर्तरिशत् से शप् आगम, अनुबन्धलोप, अतो येय: से यास् को इय् आदेश होकर भू+इय्+स्, इगन्त भू को गुण एवं अवादि होकर भव+इय्+उस्, लोपो व्योर्वलि सूत्र से यकार का लोप, आद्गुण: से गुण होकर तथा स् को रूत्व एवं विसर्ग होकर भवे: रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

भवेतम् - विधि आदि अर्थों में भू धातु से कर्ता अर्थ में लिङ् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। मध्यमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में तिप्तस्झि ... सूत्र से थस् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप भू+सि। तस्थस्थमिपां तान्मन्ताम: सूत्र से थस् के स्थान सर्वादेश तम्, यासुट् आगम् होकर भू+यास्+तम्, कर्तरिशत् से शप् आगम, अनुबन्धलोप, अतो येय: से यास् को इय् आदेश होकर भू+इय्+तम्, इगन्त भू को गुण एवं अवादि होकर भव+इय्+तम्, लोपो व्योर्वलि सूत्र से यकार का लोप, आद्गुण: से गुण होकर भवेतम् रूप सिद्ध होता है।

भवेत - विधि आदि अर्थों में भू धातु से कर्ता अर्थ में लिङ् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। मध्यमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में तिप्तस्झि ... सूत्र से थ प्रत्यय, तस्थस्थमिपां तान्मन्ताम: सूत्र से थ के स्थान सर्वादेश त, यासुट् आगम् होकर भू+यास्+त, कर्तरिशत् से शप् आगम, अनुबन्धलोप, अतो येय: से यास् को इय् आदेश होकर भू+इय्+त, इगन्त भू को गुण एवं अवादि होकर भव+इय्+त, लोपो व्योर्वलि सूत्र से यकार का लोप, आद्गुण: से गुण होकर भवेत रूप सिद्ध होता है।

भवेयम् - विधि आदि अर्थों में भू धातु से कर्ता अर्थ में लिङ् तथा अनुबन्ध लोप होकर भू+ल्। उत्तमपुरूष एकवचन की विवक्षा में तिप्तस्झि ... सूत्र से मिप् प्रत्यय, तस्थस्थमिपां तान्मन्ताम: सूत्र से मिप् के स्थान सर्वादेश अम्, यासुट् आगम् होकर भू+यास्+अम्, कर्तरिशत् से शप् आगम, अनुबन्धलोप, अतो येय: से यास् को इय् आदेश होकर भू+इय्+अम्, इगन्त भू को गुण एवं अवादि होकर भव+इय्+अम्, आद्गुण: से गुण होकर भवेयम् रूप सिद्ध होता है।

भवेव, भवेम- विधि आदि अर्थों में भू धातु से कर्ता अर्थ में उत्तम पुरूष द्विवचन में वस् एवं बहुवचन में मस् प्रत्यय, यासुट् आगम् कर्तरिशत् से शप् आगम, अनुबन्धलोप, अतो येय: से यास् को इय् आदेश होकर, इगन्त भू को गुण एवं अवादि होकर, आद्गुण: से गुण, नित्यं ङित: से सकार लोप होकर भवेव,भवेम रूप सिद्ध होता है।

भू धातु के विधिलिङ् लकार के रूप

विधिलिङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	भवेत्	भवेताम्	भवेयु:
मध्यपुरुष:	भवे:	भवेतम्	भवेत
उत्तमपुरुष:	भवेयम्	भवेव	भवेम

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं, उनका रूप इन्हीं के समान कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - भवेत्, भवेताम्, भवेयु:। भवे:, भवेतम्, भवेत। भवेयम्, भवेव, भवेम।
2. **गद व्यक्तायां वाचि** - गदेत्, गदेताम्, गदेयु:। गदे:, गदेतम्, गदेत। गदेयम्, गदेव, गदेम।
3. **अर्च पूजायाम्** - अर्चेत्, अर्चेताम्, अर्चेयु:। अर्चे:, अर्चेतम्, अर्चेत। अर्चेयम्, अर्चेव, अर्चेम।
4. **व्रज गतौ** - व्रजेत्, व्रजेताम्, व्रजेयु:। व्रजे:, व्रजेतम्, व्रजेत। व्रजेयम्, व्रजेव, व्रजेम।

5. **कटें वर्षावरणयोः** - कटेत्, कटेताम्, कटेयुः। कटेः, कटेतम्, कटेत। कटेयम्, कटेव, कटेम।
6. **क्षि क्षये** - क्षयेत्, क्षयेताम्, क्षयेयुः। क्षयेः, क्षयेतम्, क्षयेत। क्षयेयम्, क्षयेव, क्षयेम।
7. **चितीं संज्ञाने** - चेतेत्, चेतेताम्, चेतेयुः। चेतेः, चेतेतम्, चेतेत। चेतेयम्, चेतेव, चेतेम।
8. **तप सन्तापे** - तपेत्, तपेताम्, तपेयुः। तपेः, तपेतम्, तपेत। तपेयम्, तपेव, तपेम।
9. **शुच शोके** - शोचेत्, शोचेताम्, शोचेयुः। शोचेः, शोचेतम्, शोचेत। शोचेयम्, शोचेव, शोचेम।

पाठगत प्रश्न 16.1

1. विधि क्या है?
2. निमन्त्रण क्या है?
3. आमन्त्रण क्या है?
4. अधीष्ट क्या है?
5. संप्रश्न क्या है?
6. लिङ् किन अर्थो होता है?
7. अतो येयः सूत्र से किस के स्थान पर क्या होता है?
8. झेर्जुस् कहाँ होता है?
9. यासुट् क्या होता है?

   (अ) प्रत्ययः (ब) आगम (स) आदेश (द) अंग

10. इतश्च का उदाहरण क्या है?

    (अ) भवेः (ब) भवेताम् (स) भवेयुः (द) भवेयम्

11. यासुट् कहाँ होता है?

    (अ) परस्मैपद में (ब) आत्मनेपद में (स) अंग में (द) विकरण में

भू धातु आशीर्लिङ् रूप

आशिषि लिङ्लौटौ सूत्र से आशिष् अर्थ में भू धातु लिङ् में प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में तिप् प्रत्यय, इतश्च सूत्र से ति के इकार का लोप, लिङाशिषि सूत्र से आर्धधातुक संज्ञा, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+त्। स्कोः संयोगाद्योरन्ते

टिप्पणियाँ

च सूत्र से पदान्त में स्थित स्त् संयोग के आदि सकार का लोप होकर भू या त्। इस स्थिति में आर्धधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त अंग इक् के ऊकार का गुण प्राप्त। तब-

(सूत्र-स्कोः संयोगाद्योरन्ते च-पद के अन्त में जो संयोग है, झल् परे रहते संयोग के आदि सकार का लोप होता है।)

16.7 किदाशिषि॥ (3.4.104)

सूत्रार्थ - आशिष में लिङ् कित् होता है।

सूत्र व्याख्या - यह अतिदेश सूत्र है। इस सूत्र से यासुट् कित् होता है। इस सूत्र में दो पद है। कित् (1/1) आशिषि (7/1)। लिङः सीयुट् से लिङः इसषाष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् इस प्रथमान्त पद की अनुवृत्ति है। पदयोजना - आशिषि लिङः यासुट् कित्। सूत्रार्थ होता है - आशीर्वाद अर्थ में विहित लिङ् का यासुट् कित् होवें।।

16.8 क्ङिति च॥ (1.1.5)

सूत्रार्थ - गित्, कित्, ङित् को मान कर इग्लक्षण गुण अथवा वृद्धि नहीं होंवे।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र से गुणवृद्धि निषेध किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। क्ङिति (7/1) यहाँ निमित्त सप्तमी है, च (अव्ययपद) है। इको गुणवृद्धि इस समग्र सूत्र की अनुवृत्ति है। इकः यह षष्ठ्यन्त पद है। गुणवृद्धी प्रथमाद्विवचनान्त पद है। न धातुलोप अर्थधातुके सूत्र से न (अव्ययपद) की अनुवृत्ति है। ग् च क् च ङ् च इति क्ङ इति इतरेतरयोगद्वन्द्व समासः। क्ङ इतः यस्य स क्ङित् तस्मिन् क्ङिति इति बहुव्रीहिसमासः। गुणश्च वृद्धिश्च इति गुणवृद्धी इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। पदयोजना - क्ङिति इकः गुणवृद्धी न च। सूत्रार्थ होता है - गित्, कित्, ङित् मानकर इग्लक्षण गुण व वृद्धि नहीं होती। इको गुणवृद्धी परिभाषा से यहां इकःषाष्ठ्यन्त पद उपस्थापित है। वहां प्राप्त गुणवृद्धि इग्लक्षण में कही जाती है। जिस निमित्त से इग्लक्षण में गुण वृद्धि प्राप्त होती है उस निमित्त को यदि गित् कित् ङित् हो तो गुणवृद्धि का निषेध किया जाता है।

उदाहरण - भूयात्

सूत्रार्थ समन्वय - भू यात् स्थिति में आर्धधातुकत्व से गुण प्राप्त। यहां किदाशिषि सूत्र से यासुट् कित् होता है। यहां इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यात् कित् है। अतः क्ङिति च सूत्र से गुण निषेध होता है। अत भूयात् रूप सिद्ध होता है।

भूयास्ताम्- आशिषि लिङ्लोटौ सूत्र से आशिष् अर्थ में भू धातु लिङ् में प्रथमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में तस् प्रत्यय, तस् को ताम् आदेश की लिङाशिषि सूत्र से आर्धधातुक संज्ञा, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+ताम्। इस स्थिति में आर्धधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त अंग इक् के ऊकार का गुण प्राप्त। तब

यहां किदाशिषि सूत्र से यासुट् कित् होता है। यहां इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यास्ताम् कित् है। अतः क्ङिति च सूत्र से गुण निषेध होता है। अतः भूयास्ताम् रूप सिद्ध होता है।

भूयासुः - आशिषि लिङ्लोटौ सूत्र से आशिष् अर्थ में भू धातु लिङ् में प्रथमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में झि प्रत्यय, झेर्जुस् से झि को जुस् आदेश, अनुबन्ध लोप, लिङाशिषि सूत्र से आर्धधातुक संज्ञा, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+उस्। इस स्थिति में आर्धधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त अंग इक् के ऊकार का गुण प्राप्त। तब यहां किदाशिषि सूत्र से यासुट् कित् होता है। यहां इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यासुस् कित् है। अतः क्ङिति च सूत्र से गुण निषेध होता है। अतः भूयासुः रूप सिद्ध होता है।

भूयाः - आशिषि लिङ्लोटौ सूत्र से आशिष् अर्थ में भू धातु लिङ् में मध्यमपुरूष एकवचन की विवक्षा में सिप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, इतश्च से इकार लोप, लिङाशिषि सूत्र से आर्धधातुक संज्ञा, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+स्। स्कोः संयोगाद्योरन्ते च सूत्र से पदान्त में स्थित स्स् संयोग के आदि सकार का लोप होकर भू या स् इस स्थिति में आर्धधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त अंग इक् के ऊकार का गुण प्राप्त। तब यहां किदाशिषि सूत्र से यासुट् कित् होता है। यहां इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यासुट् कित् है। अतः क्ङिति च सूत्र से गुण निषेध होता है सकार को रुत्व एव विसर्ग होकर भूयाः रूप सिद्ध होता है।

भूयास्तम् - मध्यमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में थस् प्रत्यय, थस् को तम् आदेश, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+तम्। इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यास्तम् कित् होने से गुणनिषेध होकर भूयास्तम् रूप सिद्ध होता है।

भूयास्त - मध्यमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में थ प्रत्यय, थस् को त आदेश, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+त। इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यास्त कित् होने से गुणनिषेध होकर भूयास्त रूप सिद्ध होता है।

भूयासम् - उत्तमपुरूष एकवचन की विवक्षा में मिप् प्रत्यय, मिप् को अम् आदेश, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+अम्। इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यासम् कित् होने से गुणनिषेध होकर भूयासम् रूप सिद्ध होता है।

भूयास्व - उत्तमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में वस् प्रत्यय, नित्यं ङितः से सकार लोप, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+व। इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यास्व कित् होने से गुणनिषेध होकर भूयास्व रूप सिद्ध होता है।

भूयास्म - उत्तमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में मस् प्रत्यय, नित्यं ङितः से सकार लोप, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्ध लोप होकर भू+यास्+म। इग्लक्षण गुण प्राप्त किन्तु उसका निमित्त यास्म कित् होने से गुणनिषेध होकर भूयास्व रूप सिद्ध होता है।

भू धातु के आशीर्लिङ् लकार के रूप

आशीर्लिङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
मध्यपुरुषः	भूयाः	भूयास्तम्	भूयास्त
उत्तमपुरुषः	भूयासम्	भूयास्व	भूयास्म

पाठगत प्रश्न 16.2

1. यासुट् किस सूत्र से होता है?
2. यासुट् कहाँ होता है?
3. अतो येयः कहाँ नहीं होता है,?
4. आशीष् में तिङ् की आर्धधातुक संज्ञा किस सूत्र से होती है,?
5. लिङाशिषि सूत्र से क्या होता है?
6. इतश्च का उदाहरण क्या है?

   (अ) भूयात् (ब) भूयास्ताम् (स) भूयासुः (द) भूयास्त
7. भूयात् को आर्धधातुक होने से गुण निषेध का कारण क्या है?

   (अ) यासुट् कित् होने से (ब) यासुट् ङित् होने से

   (स) यासुट् पित् होने से (द) यासुट् सेट् होने से
8. आशीष् में भू धातु का उदाहरण नहीं है?

   (अ) भूयाः (ब) भूयास्व (स) भूयासुः (द) भवतात्
9. आशीष् में भू धातु का उदाहरण नहीं है?

   (अ) भूयासुः (ब) भुयासुः (स) भूयासूः (द) भूयासूः

भू धातु - लुङ् लकार में रूप

16.9 लुङ्॥ (3.2.110)

सूत्रार्थ - भूतार्थ में धातु से लुङ् हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है इस सूत्र से लुङ् का विधान है। इस सूत्र में लुङ् एक ही प्रथमैकवचनान्त पद है। भूते (7/1), धातोः (5/1) प्रत्ययः (1/1), परश्च (1/1) का अधिकार

आता है। सूत्रार्थ होता है- भूतकाल अर्थ में धातु से परे लुङ् प्रत्यय होता है। अनद्यतन परोक्ष भूत में लिट् अनद्यतन भूत में लङ् और भूतकाल में लुङ् की व्यवस्था होती है।

उदाहरण - अभूत्

सूत्रार्थ समन्वय - भू धातु से भूतकाल की विवक्षा में लुङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लुङ् प्रत्यय तथा ङकार एवं उकार की इत् संज्ञा तथा लोप होकर भू+ल् इस स्थिति में प्रथमपुरूषैकवचन की विवक्षा में तिप् अनुबन्ध लोप होकर भू+ति, इतश्च से ति के इकार का लोप भू+त्। तिङ्शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा तथा कर्त्तरिशप् से शप् का आगम् प्राप्त। तब-

16.10 च्लि लुङि॥ (3.1.43)

सूत्रार्थ - लुङ् परे धातु से परे च्लि प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से च्लि का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद है। च्लि (1/1), लिङि (7/1)। धातोः (5/1), प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार आता है। सूत्रार्थ होता है - लुङ् परे रहते धातु में परे च्लि प्रत्यय होता है। च्लि प्रत्यय का इकार उच्चारणार्थ है चकार की चुटू से इत्संज्ञा। च्लि प्रत्यय शप् आदि का अपवाद है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में भू+त् स्थिति में शप् प्राप्त किन्तु च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय होकर भू+च्लि+त् स्थिति बनती है। तब

16.11 च्लेः सिच्॥ (3.1.44)

सूत्रार्थ - च्लि के स्थान पर सिच् हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से सिच् होता है। इस में दो पद है। च्लेः (6/1) सिच् (1/1)। च्लि लुङि से लुङि इस सप्तम्यन्त पद की अनुवृत्ति है। धातोः (5/1) प्रत्ययः (1/1), परश्च (1/1) का अधिकार आता है। सूत्रार्थ होता है - लुङ् में धातु से परे च्लि के स्थान पर सिच् प्रत्यय होता है। सिच् के चकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा तथा इकार की उपदेशेऽजनुनासिक इत् से इत् संज्ञा तथा दोनों का लोप होकर सकार शेष रहता है।

(च्लि के स्थान पर जैसा सिच् वैसे ही अङ् चङ् तथा क्स इत्यादि होते है।)

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - भू+च्लि+त् इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से सिच् होकर भू+स्+त् तथा लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वदात्त सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अ+भू स्+त् स्थिति बनती है। तब-

16.12 गाति-स्था-घु-पा-भूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु॥ (2.8.77)

सूत्रार्थ - गाति, स्था, घु, पा, तथा भू धातु से परे सिच् का लोप हो यदि परस्मैपद परे हो तो।

सूत्रव्याख्या -यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से लुक् का विधान है। गाति स्था घु पा भूभ्यः (5/3), सिचः (6/1) परस्मैपदेषु (7/3)। ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञोः सूत्र से लुक् इस प्रथमान्त पद

टिप्पणियाँ

की अनुवृत्ति होती है। गातिः च स्थाः घुः च पाः च भूः च गातिस्थाघुपाभुवः इति इतरेतरयोग द्वन्द्वसमासः। तेभ्यः गातिस्थाघुपाभूभ्यः। सूत्रार्थ होता है - परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो, गा, स्था, घु, पा, भू इन धातु से परे सिच् का लुक् हो जाता है। इणो गा लुङि सूत्र से इण् धातु को गा आदेश होता है। यहाँ पर इस धातु से ही अभिप्राय है। पा पाने और रक्षणे दो धातु हैं, इनमें पाने अर्थक ही ग्राह्य है। दाधाघ्वदाप् सूत्र से दारूप और धारूप धातुओं की घु संज्ञा होती है। उनमें व डुदाञ् दाने, डुधाञ् धारणपोषणयोः इन दोनों का ग्रहण है।

विशेष - प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः सूत्र से प्रत्यय के अदर्शन की लुक् संज्ञा होती है। यहां सिच् प्रत्यय है। अतः सिच् समग्र प्रत्यय का लुक् होता है। इसलिए अलोऽन्त्यस्य परिभाषा प्रवृत्त नहीं होती।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में अभू+स्+त् इस स्थिति में गाति स्थाघुपाभूभ्यः सिच् परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लुक् होकर अभूत् स्थिति बनती है। सार्वधातुकाऽऽर्धधातुकयोः से इगन्त को गुण प्राप्त है। तब-

16.13 भूसुवोस्तिङि॥ (7.3.88)

सूत्रार्थ-सार्वधातुक तिङ् परे हो तो भू एवं सू धातु को गुण नहीं होता है।

सूत्रव्याख्या - यह निषेध सूत्र है इससे गुण का निषेध किया जाता है। इस में दो पद है। भूसुवोः तिङि यह सूत्रगतपदच्छेद है। भूसूवोः (6/2) तिङि (7/1)। नाभ्यस्तस्याचि पिति सार्वधातुके सूत्र से न अव्ययपद की अनुवृत्ति है। सार्वधातुके इस सप्तम्यन्त पद की अनुवृत्ति है। मिदेर्गुणः सूत्र से गुणः इस प्रथमान्त पद की अनुवृत्ति है। भूः च सूः च भूसूवौ, तयोः भूसूवोः इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। भू सत्तायाम् तथाषूञ् प्राणिगर्भविमोचने ये दो धातु अभिमत है। सूत्रार्थ होता है - भू एवं सू इन दो धातुओं से सार्वधातुक तिङ् परे हो तो गुण नहीं होता। यहाँ गुण इस पद से गुण नहीं का विधान किया जाता है। अतः इको गुणवृद्धी की परिभाषा प्रवृत्त नहीं होती।

उदाहरण - अभूत्

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में अभू+त् स्थिति में गुण प्राप्त था प्रकृत सूत्र से गुण का निषेध होकर अभूत् रूप सिद्ध होता है।

अभूताम् -भू धातु से लुङ् सूत्र से भूतकाल में लुङ। प्रथमपुरूषद्विवचन की विवक्षा में तस् प्रत्यय होकर भू+तस्। यहां तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः सूत्र से तस् को ताम् सर्वादेश होकर भू+ताम्। लुङ् परे होने से च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, तथा च्लेः सिच् से च्लि के स्थान पर सिच् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+स्+ताम् स्थिति में गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+ताम् यहां सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त को गुण प्राप्त। तब-

16.14 सार्वधातुकमपित्॥ (1.2.4)

सूत्रार्थ - अपित् सार्वधातुक ङिद्वत् होता है।

सूत्रव्याख्या - इस अतिदेश सूत्र से ङिद्वत् अतिदेश किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। सार्वधातुकम् (1/1) अपित् (1/1)। गाङ्कुटादिभ्योऽञ्णिन्ङित् सूत्र से ङित् इस प्रथमान्त की अनुवृत्ति होती है। प् इत् यस्य स पित्, न पित् अपित् इति बहुवीहिगर्भ नञ् तत्पुरुषसमासः। ङ् इत् यस्य स ङित्। सूत्रार्थ होता है अपित् सार्वधातुक ङित् वत् होता है। अर्थात् पित् भिन्न सार्वधातुक ङित्वत् होता है। जिस के पकार की इत् संज्ञा नहीं होती उस सार्वधातुक के ङकार इत् के समान है।

सूत्रार्थ समन्वय - पर्वू में भू+ताम् स्थिति में इग्लक्षण गुण प्राप्त में ताम् तस् के स्थान पर आदेश हुआ है। तस् पित् नहीं है अत वह अपित् है। उसके स्थान पर आदेश हुआ ताम् भी इस सूत्र से ङित्वत् हुआ। ङित् होने से क्ङिति च सूत्र इग्लक्षण गुण का निषेध हो जाता है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभूताम् रूप सिद्ध होता है।

अभूवन् - भू धातु से लुङ् सूत्र से भूतकाल में लुङ। प्रथमपुरूषबहुवचन की विवक्षा में झि प्रत्यय होकर भू+झि। यहां च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, तथा च्लेः सिच् से च्लि के स्थान पर सिच् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+स्+झि स्थिति में गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+झि यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू झि। तब झोऽन्तः सूत्र से अन्त् आदेश, अभू अन्ति, इतश्च से इकार लोप, संयोगान्तस्य लोपः से तकार लोप, अभू अन्, भुवो वग् लुङ्लिटोः सूत्र से वुक् का आगम अनुबन्ध लोप होकर अभूवन् रूप सिद्ध होता है।

अभूः - भू धातु से लुङ् सूत्र से भूतकाल में लुङ। मध्मपुरूष एकवचन की विवक्षा में सिप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर भू+सि। यहां च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, तथा च्लेः सिच् से च्लि के स्थान पर सिच् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+स्+सि स्थिति में गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+सि यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू सि। तब इतश्च से इकार लोप, अभूस्, सिप् सार्वधाधतुक होने से गुण प्राप्त किन्तु भूसुवोस्तिङि से गुण निषेध, सकार को रुत्व विसर्ग होकर अभूः रूप सिद्ध होता है।

अभूतम् - भू धातु से लुङ् सूत्र से भूतकाल में लुङ। मध्मपुरूष द्विवचन की विवक्षा में थस् प्रत्यय, तस्थस्थमिपां तान्मन्तामः सूत्र से थस् के स्थान सर्वादेश तम्, भू+तम्। यहां च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, तथा च्लेः सिच् से च्लि के स्थान पर सिच् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+स्+तम् स्थिति में गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+तम् यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू तम्। तब सार्वधाधतुक होने से गुण प्राप्त किन्तु तम् अपित् होने से गुण निषेध होकर अभूतम् रूप सिद्ध होता है।

अभूत - मध्मपुरूष बहुवचन की विवक्षा में थ प्रत्यय, तस्थस्थमिपां तान्मन्तामः सूत्र से थ के स्थान सर्वादेश त, भू+त। यहां च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, तथा च्लेः सिच् से च्लि के स्थान पर सिच् एवं अनुबन्ध लोप होकर भू+स्+त स्थिति में गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+त यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू त। तब सार्वधाधतुक होने से गुण प्राप्त किन्तु तम अपित् होने से गुण निषेध होकर अभूत रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

अभूवम् - उत्तमपुरूष एकवचन की विवक्षा में मिप् प्रत्यय, तस्थस्थमिपां तान्मन्ताम: सूत्र से अम् के स्थान सर्वादेश अम्, भू+त। यहां च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, तथा च्ले: सिच् से च्लि के स्थान पर सिच् एवं गातिस्थाघुपाभूभ्य: सिच: परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+अम् यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्त: सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू अम्। तब भुवो वग् लुङ्लिटो: सूत्र से वुक् का आगम अनुबन्ध लोप होकर अभूवम् रूप सिद्ध होता है।

अभूव - उत्तमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में वस् प्रत्यय, नित्यं ङित: से सकार लोप, यहां च्लि प्रत्यय, तथा च्लि के स्थान पर सिच् एवं गातिस्थाघुपाभूभ्य: सिच: परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+व यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्त: सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू व। यहां इग्लक्षण का निषेध होकर अभूव रूप सिद्ध होता है।

अभूम - उत्तमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में मस् प्रत्यय, नित्यं ङित: से सकार लोप, यहां च्लि प्रत्यय, तथा च्लि के स्थान पर सिच् एवं गातिस्थाघुपाभूभ्य: सिच: परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् का लोप होकर भू+म यहां लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्त: सूत्र से अंग को अट् का आगम होकर अभू म। यहा इग्लक्षण का निषेध होकर अभूम रूप सिद्ध होता है।

भू धातु के लुङ् लकार के रूप

लुङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	अभूत्	अभूताम्	अभूवन्
मध्यपुरुष:	अभू:	अभूतम्	अभूत
उत्तमपुरुष:	अभूवम्	अभूव	अभूम

16.15 न माङ्योगे॥ (6.4.74)

सूत्रार्थ - माङ् के योग में अंग को अट् या आट् का आगम नहीं होता।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र से अट् एवं आट् के आगम का निषेध किया जाता है। इसमें दो पद है। लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्त: से अट् इस प्रथमान्त पद की अनुवृत्ति होती है। आडजादीनाम् इस सूत्र से आट् इस प्रथमान्त पद की अनुवृत्ति होती है। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। माङोयोग: माङ्योग:। तस्मिन् माङ्योगे। सूत्रार्थ होता है - माङ् के योग में अंग को अट् एवं आट् दोनों नहीं होते।

उदाहरण - मा भवान् प्रमादं कार्षीत्।

16.16 माङि लुङ्॥ (3.3.179)

सूत्रार्थ - माङ् शब्द के उपपद रहते धातु से लुङ् प्रत्यय हो। यह सब लकारों का अपवाद है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से लुङ् का विधान है। इस सूत्र में दो पद है। माङ् (7/1) लुङ् (1/1)। यहा धातोः (5/1), प्रत्ययः (1/1) और परश्च (1/1) का अधिकार आता है। सूत्रार्थ होता है - माङ् उपपद होने पर धातु से परे लुङ् प्रत्यय होता है यह सभी लकारों का अपवाद है। अर्थात् माङ् निषेधार्थक अव्यय है। जिस क्रिया का करना चाहे उस वाचक धातु से परे लुङ् का विधान हो। यह लुङ् अन्य सभी लकार का जो अर्थ है उसी अर्थ में इसका प्रयोग होता है। न केवल भूतकाल में।

उदाहरण - मा भवान् प्रसादं कार्षीत्।

सूत्रार्थ समन्वय -कृ धातु से लुङ्, लुङ् के स्थान पर तिप् में अकार्षीत् रूप होता है। माङ् का ङ्कार हलन्त्यय से इत् संज्ञक तथा तस्य लोपः से लोप होता है। न माङ्योगे सूत्र से अट् आट् नहीं होते। अतः कार्षीत् रूप में अट् नहीं दिखाई देता। यहां प्रमादकरण का निषेध है। विवक्षानुसार इसे सभी कालों व प्रकारों में कह सकते हैं।

16.17 स्मोत्तरे लङ् च॥ (3.3.176)

सूत्रार्थ - यदि माङ् के योग मे स्म लगा हो तो लङ् एवं लुङ् दोनों का प्रयोग होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से लङ् एवं लुङ् का विधान होता है। इस सूत्र में तीन पद है। स्मोत्तरे (7/1), लङ् (1/1), च अव्ययपद। माङिलुङ् सूत्र से लुङ् इस प्रथमान्त की अनुवृत्ति है। यहां धातोः (5/1) प्रत्ययः (1/1) और परश्च (1/1) का अधिकार आता है। स्मः उत्तरः परः यस्मात् स स्मोत्तरः इति बहुव्रीहिसमासः। सूत्रार्थ होता है - निषेधार्थक माङ् से परे स्म का प्रयोग यदि किया जाये तो जिस क्रिया का निषेध करना चाहे, उस से परे लङ् एवं लुङ् प्रत्यय होते है।

उदाहरण - मा स्म भवान् भूत्। मा स्म भवत्।

सूत्रार्थ समन्वय - मा स्म भवान् भूत इस उदाहरण में भू धातु से लुङ् में अभूत् रूप बनता है। न माङ् योगे सूत्र से अट् नहीं होता अतः भूत् रूप में अट् नहीं दिखाई देता।

मा स्म भवत् उदाहरण में भू धातु से लङ् में अभवत् रूप बनता है। किन्तु न माङ् योगे सूत्र से अट् नही होता है। अतः भवत् रूप दिखाई देता है।

भू धातु लृङ् लकार में रूप

16.18 लिङ् निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ॥ (3.3.139)

सूत्रार्थ - हेतु-हेतुमद्भाव आदि जो लिङ् के निमित्त कहे गये है, उन में यदि भविष्यत्कालिक क्रिया कही जाये तो धातु से परे लृङ् प्रत्यय होता है। क्रिया की अनिष्पति (असि( ) गम्यमान हो तो।

टिप्पणियाँ

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों में रूप सिद्धियाँ

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से लृङ् का विधान है। इस सूत्र में तीन पद है। लिङ्निमित्ते (7/1), लृङ् (1/1), क्रियातिपतौ (7/1)। भविष्यति मर्यादा वचनेऽवरस्मिन् सूत्र से भविष्यति (7/1) पद की अनुवृत्ति है। यहां धातोः (5/1), प्रत्ययः (1/1), परश्च (1/1) का अधिकार आता है। लिङो निमित्तं लिङ् निमित्तम्। तस्मिन् लिङ्निमित्ते इतिषाष्ठीतत्पुरूषसमासः। क्रियायाः अतिपत्तिः अनिष्पत्तिः असिद्धः अनभिनिवृत्तिः क्रियातिपत्तिः। तस्याम् क्रियातिपत्तौ इतिषाष्ठीतत्पुरूष समासः। सूत्रार्थ होता है - हेतु हेतुमद्भाव आदि लिङ् के निमित्त कहे गये हैं, उन में विद्यमान धातु से परे लृङ् प्रत्यय होता है।

हेतु हेतुमतोर्लिङ् इत्यादि सूत्रों से लिङ् के प्रयोग के कुछ निमित्त अष्टाध्यायी में कहे गये है। हेतु अर्थात् कारण, हेतुमत् अर्थात् कार्यफल। इस प्रकार हेतु हेतुमद् कारण कार्य (फल) का युग्म होता है। कार्यकारण के युग्म से निर्दिष्ट क्रिया के गुण से अतिपत्ति होती है, तो उस क्रिया वाचक धातु से लृङ् होता है।

उदाहरण -कृष्णम् अनंस्यत् चेत् सुखम् अयास्यत्। सुवृष्टिः चेद् अभविष्यत् तदा सुभिक्ष्यम् अभविष्यत्। दक्षिणेन चेद् आयास्यन् न शकटं पर्यभविष्यत्। अभोक्ष्यत् भवान् घश्तेन यदि मत्समीपम् आगमिष्यत्। गुरुं चेत् प्रणमेत् शास्त्रान्तं गच्छेत्।

सूत्रार्थ समन्वय -कृष्णम् अनंस्यत् चेत् सुखम् अयास्यत् इस उदाहरण में कृष्णनमन हेतु सुखलाभ कार्यफल है। यहां हेतु हेतुभाव कारणफलयुग्म है। परन्तु किसी प्रमाण से ज्ञात होता है कि यह नमन नहीं करेगा तो इसको सुख भी नहीं आयेगा। अतः कारण फलयुग्म से निर्दिष्ट क्रिया की असिद्धि होती है। अतः नम् धातु से और या धातु से लृङ् होता है। इस प्रकार प्रक्रिया से अनंस्यत् और अयास्यत् रूप होते हैं। उनके प्रयोग से वाक्य सिद्ध होता है।

कृष्ण नमेत् चेत् सुखं यायात् में विधिलिङ् का प्रयोग होता है परन्तु यहां क्रियातिपत्ति अभीष्ट नहीं है।

अभिष्यत् - भू धातु से लृङ्, लृङ् का तिप्, स्यतासी लृलुटोः सूत्र से स्य का आगम, आर्धधातुक होने से इट् आगम, होकर भू+इ+स्य+ति, इतश्च से ति के इकार का लोप, लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से अट् आगम, अ भू+इ+स्यत् इगन्त को गुण तथा अवादि, एवं आदेश प्रत्ययों से सकार कोषकार होकर अभविष्यत् रूप सिद्ध होता है।

अन्य उदाहरणों इसी प्रकार समझना चाहिए।

भू धातु के लृङ् लकार के रूप

लृङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्
मध्यपुरुषः	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत
उत्तमपुरुषः	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

भ्वादिप्रकरण में - भू धातु के लिङ्, लुङ् और लृङ् लकारों में रूप सिद्धियाँ

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं, उनका रूप इन्हीं के समान कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं।

1. **पठव्यक्तायांवाचि** - अपठिष्यत्, अपठिष्यताम्, अपठिष्यन्। अपठिष्यः, अपठिष्यतम्, अपठिष्यत। अपठिष्यम्, अपठिष्याव, अपठिष्याम।

2. **गद व्यक्तायां वाचि** - अगदिष्यत्, अगदिष्यताम्, अगदिष्यन्। अगदिष्यः, अगदिष्यतम्, अगदिष्यत। अगदिष्यम्, अगदिष्याव, अगदिष्याम।

3. **अर्च पूजायाम्** - अर्चिष्यत्, अर्चिष्यताम्, अर्चिष्यन्। अर्चिष्यः, अर्चिष्यतम्, अर्चिष्यत। अर्चिष्यम्, अर्चिष्याव, अर्चिष्याम।

4. **व्रज गतौ** - अव्रजिष्यत्, अव्रजिष्यताम्, अव्रजिष्यन्। अव्रजिष्यः, अव्रजिष्यतम्, अव्रजिष्यत। अव्रजिष्यम्, अव्रजिष्याव, अव्रजिष्याम।

5. **कटें वर्षावरणयोः** - अकटिष्यत्, अकटिष्यताम्, अकटिष्यन्। अकटिष्यः, अकटिष्यतम्, अकटिष्यत। अकटिष्यम्, अकटिष्याव, अकटिष्याम।

6. **क्षि क्षये** - अक्षयिष्यत्, अक्षयिष्यताम्, अक्षयिष्यन्। अक्षयिष्यः, अक्षयिष्यतम्, अक्षयिष्यत। अक्षयिष्यम्, अक्षयिष्याव, अक्षयिष्याम।

7. **चितीं संज्ञाने** - अचेतिष्यत्, अचेतिष्यताम्, अचेतिष्यन्। अचेतिष्यः, अचेतिष्यतम्, अचेतिष्यत। अचेतिष्यम्, अचेतिष्याव, अचेतिष्याम।

8. **शुच शोके** - अशोचिष्यत्, अशोचिष्यताम्, अशोचिष्यन्। अशोचिष्यः, अशोचिष्यतम्, अशोचिष्यत। अशोचिष्यम्, अशोचिष्याव, अशोचिष्याम।

पाठगत प्रश्न 16.3

1 लुङ् सूत्र अर्थ लिखिए?

2 लुङ् में शबपवाद कौन है?

3 च्लेः सिच् किस लकार में होता है?

4 सिच् में कौन इत्संज्ञक है?

5 अभूत् में सिच् लुक् किस सूत्र से होता है?

6 गातिस्थाकृसूत्र से क्या होता है?

7 अभूत् में सार्वधातुक को गुण किस सूत्र से नहीं होता?

टिप्पणियाँ

8. स्मोत्तरेमाङि किन लकारों में होता है ?
9. न माङ्योगे से क्या नहीं होता?
10. म भवान् भूत् यहां अंग को अट् किस से नहीं होता?
11. क्रियातिपत्ति कौन है?
12. लुङ् में विकरण क्या है?

    (अ) शप् (ब) तास् (स) च्लि (द) स्य
13. लृङ् में अंग को क्या नहीं होता है?

    (अ) अट् (ब) आट् (स) गुण (द) अभ्यास
14. इनमें से लुङ् का रूप नहीं है?

    (अ) अभूताम् (ब) अभूवन् (स) अभूवम् (द) अभूत
15. च्लि के स्थान पर क्या होता है?

    (अ) स्य (ब) तास् (स) यासुट् (द) सिच्

पाठ का सार

इस पाठ में लिङ् लुङ् और लृङ् इन तीन लकारों को उपस्थित किया गया है। उनमें से लिङ् के दो भेद विधिलिङ् एवं आशीर्लिङ् होते है। विधि आदि अर्थों में विद्यमान लिङ् विधिलिङ् कहलाता है। विधिलिङ् का मुख्यार्थ प्रेरणा या प्रवर्तना है। विधिलिङ् में तिङ् और शप् विधान होता है। यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम विशेष कार्य है। कहीं पर अतो येय: से यास् को इय् होता है। झेर्जुस् से झि का जुस्, ङितो के इकार लोप, नित्यं ङित:, तस्थस्थमिपां तान्तन्ताम: आदि कार्य होते हैं।

आशीर्वाद अर्थ में आशीर्लिङ् होता है। आशीर्लिङ् में किदाशिषि से यासुट् कित् होने से इग्लक्षणगुणवृद्धि का क्ङिति च से निषेध होता है।

लुङ् साहित्यकारों का प्रिय लकार है। जो इस लकार का प्रयोग करता है उसकी प्रौढ़ संस्कृत होती है। इसका प्रयोग भूतकालीन सभी क्रियाओं को प्रकट करने के लिए किया जाता है। लुङ् में शप् का अपवाद होकर च्लि, च्लि को सिच् आदि विशेष कार्य हैं। माङ् के प्रयोग में लुङ् सभी लकारों का अपवाद है यदि स्मोत्तर: माङ् प्रयुक्त हो तो लुङ् और लङ् होता है। माङ् के प्रयोग अट् आट् नहीं होते।

क्रिया की अनिष्पति गम्यमान में लृङ् होता है। इसमें शप् का अपवाद स्यतासी लृलुटो: होता है अंग को अट् या आट् होते है।

पाठांत प्रश्न

1. विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् सूत्र की व्याख्या कीजिए?
2. भवेत्, भवेताम्, भवेयुः, भवेयम् भवेम इनको ससूत्र सिद्ध कीजिए?
3. क्ङिति च सूत्र की व्याख्या कीजिए?
4. भूयात्, भूयाताम्, भूयासुः, भूयासम्,भूयास्म इनको ससूत्र सिद्ध कीजिए?
5. लुङ् सूत्र की व्याख्या कीजिए?
6. सार्वधातुकमपित् सूत्र की व्याख्या कीजिए?
7. अभूत्, अभूवन्, अभूत, अभूवम्, अभूम, अभविष्यत्, अभविष्यः, अभविष्यम् इनको ससूत्र सिद्ध कीजिए?
8. स्तम्भों में स्थित सूत्र एवं उसके प्रयोग का मेल कीजिए-

(क) स्तम्भ		(ख) स्तम्भ	
1.	परोक्षे लिट्	(क)	क्रियातिपत्तौ
2.	अनद्यतने लुट्	(ख)	भविष्यति
3.	लृट्शेषे च	(ग)	अनद्यतन भविष्यति
4.	लोट् च	(घ)	भूतसामान्ये
5.	अनद्यतने लुङ्	(ङ)	अनद्यतनपरोक्षभूते
6.	लुङ्	(च)	अनद्यतनभूते
7.	लृङ्	(छ)	विध्यादौ

9. स्तम्भों में स्थित लकार एवं रूप का मेल कीजिए-

(क) स्तम्भ		(ख) स्तम्भ	
1.	लट्	(क)	अभवत
2.	लिट्	(ख)	अभेत
3.	लुट्	(ग)	भूयासम्
4.	लृट्	(घ)	अभूवन्
5.	लोट्	(ङ)	अभविष्यत

टिप्पणियाँ

6.	लङ्	(च)	अभव:
7.	विधिलिङ्	(छ)	बभूविथ
8.	आशीर्लिङ्	(ज)	भवितास्मि
9.	लुङ्	(झ)	भविष्यथ
10.	लृङ्	(ञ)	भवत

10. स्तम्भों में स्थित लकार एवं विकरण का मेल कीजिए?-

	(क) स्तम्भ		(ख) स्तम्भ
1.	लिङ्	(क)	शप्
2.	लृङ्	(ख)	सिच्
3.	लुङ्	(ग)	स्य
4.	लुट्	(घ)	हि
5.	लङ्	(ङ)	अभ्यास
6.	लिट्	(च)	तास्
7.	लोट्	(छ)	यासुट्

11. स्तम्भों में स्थित समान लकारों का मेल कीजिए-

	(क) स्तम्भ		(ख) स्तम्भ
1.	भवत:	(क)	भूयास्त
2.	भविता	(ख)	अभूवन्
3.	भविष्यत:	(ग)	अभवत
4.	भवताम्	(घ)	अभविष्यत
5.	भवेतम्	(ङ)	बभूविथ
6.	भूयात्	(च)	भवथ
7.	अभूत्	(छ)	भवितासि
8.	अभवताम्	(ज)	भविष्याव:
9.	अभविष्यत	(झ)	भवत
10.	बभूव	(ञ)	भवेत

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

16.1

1. आयु, अधिकार या वर्ण से निकृष्ट भश्त्यादि को प्रवर्तन विधि है।
2. अवश्यकर्तव्य प्रेरणा, नियोगकरण हि निमन्त्रण है।
3. कामचारानुज्ञा हि आमन्त्रण है।
4. सत्कारपूर्वक व्यापार हि अधीष्ट है।
5. विचार का निर्धारण हि संप्रश्न है।
6. विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ्।
7. अतो येयः सूत्र से यास् को इय् होता होता है।
8. लिङ्। 9. 2 10. 1 11. 1

16.2

1. किदाशिषि।
2. आशिषि।
3. अदन्त अंग परे सार्वधातुक के अवयव को इय् किया जाता है लिङाशिषि से सार्वधातुक होने से प्रवृत नही होता है।
4. लिङाशिषि।
5. आशिष में लिङादेश तिङलिङाशिषि से सार्वधातुकसंज्ञक होता है।
6. 1 7. 1 8. 4 9. 1

16.3

1. भूतार्थ में लुङ् हो।
2. च्लि।
3. लुङ् में।
4. इचौ।

टिप्पणियाँ

5. गातिस्थाघुपाभूभ्य: सिच: परस्मैपदेषु।
6. गातिस्थाघुपाभूभ्य: सिच: का लुक होता है परस्मैपद परे हो।
7. भुवो वग् लुङ्लिटो: सूत्र से निषेध होता है।
8. लङ् और लुङ्।
9. अट् व आट् नहीं।
10. माङ् योगे सूत्र से अट् नही होता है।
11. क्रियाया: अतिपत्ति: अनिष्पत्ति: असिद्ध: अनभिनिवृत्ति: क्रियातिपत्ति:।

12. 4 13. 4 14. 2 15. 4।

17

भ्वादिप्रकरण में - लट् लिट् के सूत्रशेष

वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी आदि ग्रन्थों में क्रमशः एक एक धातु के रूपों को सिद्ध करने के लिए जिन सूत्रों की आवश्यकता होती है उनकी व्याख्या करके धातु के रूप सिद्ध किये जाते हैं। उनसे एक-एक धातु के रूपों का ज्ञान किया जाता है किन्तु एक लकार के सभी सूत्र बिखरे हुए होते हैं। इस प्रकार सभी का समुदित अल्पप्रयास से बोध होता है। अतः यहाँ से आगे परस्मैपदप्रकरण में लकार क्रम से सूत्र उपस्थित किये गये हैं। यहाँ कुछ अधिक प्रयुक्त होने वाले साधारण सूत्र दिये गये है। कुछ तिङन्त प्रकरण में आगे दिये गये है।

वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी इत्यादि प्रक्रिया ग्रन्थों में धातुओं का क्रम स्वीकार किया गया है। उसी प्रकार लघुसिद्धान्त कौमुदी में धातुएं चुनी है। इसी प्रकार इस प्रकरण में भी सरल प्रक्रिया के लिए चुनी हुई धातुओं को प्रदर्शित किया गया है। न कि इस धातु के सभी रूपों को। अन्य रूप विद्यार्थी स्वयं समझ सकते हैं। यदि सभी धातुओं के सभी रूप दिये जाये तो ग्रन्थविस्तार हो जायेगा।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप -

- तिङन्त प्रकरण के मुख्य सूत्रों का जानेंगे;
- विभिन्न धातुओं के रूप सिद्ध कर सकेंगे;
- विविधसूत्रों की व्याख्या करने में समर्थ होंगे;
- पूर्णपाठों में किये गये सार्वधातुक आर्धधातुक संज्ञाओं को रूपों में जानेंगे;
- भू धातु के रूपों को सिद्धकर के बहुत से लकारों में और विशेषकर लिट् लकार में प्रयुक्त सूत्रों को जानेंगे;
- इडागम प्रकरण को इस पाठ में पढ़ेंगे।

टिप्पणियाँ

लकारक्रम-लिट्

17.1 अत आदेः॥ 7.4.70

सूत्रार्थ - अभ्यास के आदि अत् को दीर्घ हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से दीर्घ का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद हैं। अतः (6/1), आदेः (6/1)। यहां लोपोऽभ्यासस्य सूत्र से अभ्यासस्य (6/1) पद की अनुवृत्ति होती है। दीर्घ इणः किति सूत्र से दीर्घः (1/1) पद आता है। पद योजना होती है - अभ्यासस्य आदेः अतः दीर्घः। सूत्रार्थ होता है - अभ्यास के आदि अत् को दीर्घ होता है। स्वाभाविक अभ्यास के अत् हो तो ही दीर्घ होता है। ह्रस्वः सूत्र से ह्रस्व किये गये अत् को दीर्घ नहीं किया जाता है।

उदाहरण - आत।

सूत्रार्थसमन्वय - अत सातल्यगमने धातु से परोक्षे लिट् सूत्र में लिट्, प्रथम पुरूषैकवचन की विवक्षा में तिप् प्रत्यय, उसके स्थान पर णल् तथा अनुबन्धलोप होकर अत्+अ बनता है। धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व होकर अत्+अत्+अ। पूर्वोऽभ्यासः सूत्र से पर्वू अत् की अभ्यास संज्ञा में हलादिः शेषः से आदि हल के अभाव में लकार का लोप अ+अत्+अ। अतो गुणे सूत्र से पररूप प्राप्त किन्तु अत आदेः सूत्र से अभ्यास के 'अ' को दीर्घ आ होकर आ+अत्+अ स्थित बनती है। तब -

17.2 अत उपधायाः॥ (7-2-116)

सूत्रार्थ - ञित् आ गित् प्रत्यय परे हो तो पर उपधा अत् के स्थान पर वृद्धि हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से वृद्धि का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद हैं। अतः (6/1), उपधायाः (6/1)। मृजेर्वृद्धिः सूत्र से वृद्धिः (1/1) पद आता है। अचो ञिणति सूत्र से ञिणति (7/1) पद आता है। ञ् च ण् च ञ्णौ इति इतरेतरयोगद्वन्द्व समासः। ञ्णौ इतौ यस्य स ञ्िणत्, तस्मिन् ञ्िणति इति बहुव्रीहि। अंगस्य का अधिकार पढ़े जाने से प्रत्यय परे होने एवं अंग संज्ञा के उत्पन्न होने से प्रत्यये (7/1) पद का आक्षेप किया जाता है। पद योजना - उपधायाः अतः वृद्धि ञ्िणति प्रत्यये। सूत्रार्थ होता है - ञित् और णित् प्रत्यय परे होने पर उपधा का जो अत् है, उसको वृद्धि होती है। स्थानेऽन्तरतमः परिभाषा से अत् के स्थान पर आकर ही वृद्धि होगी।

उदाहरण - आत।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्तसूत्रों से आ+अत+अ इस स्थिति में वल् के णित् होने से उपधा के अत् को वृद्धि होकर आ+आत्+अ तथा अकः सवर्णे दीर्घः सूत्र से आ+आ को दीर्घ आ होकर आत रूप सिद्ध होता है।

17.3 द्विर्वचनेऽचि॥ (1.1.59)

सूत्रार्थ - द्वित्वनिमित्तक अच् को मान कर अच् के स्थान पर आदेश नहीं होता, द्वित्व करना हो तो।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र से अच् से आदेश का निषेध किया जाता है। इस सूत्र में दो पद हैं। द्विवचने (7/1), अचि (7/1)। अचः परस्मिन् पूर्व विधौ सूत्र से अचः (6/1) पद की अनुवृत्ति होती है। स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ सूत्र से आदेशः (1/1) पर आता है। पदान्तद्विवचन ... सूत्र से न अव्ययपद की अनुवृति होती है। द्विः उच्यते अस्मिन् इति द्विर्वचनम्। यहां 'द्विर्वचने' पद की आवृत्ति होती है। एक द्विवचने पद अचि का विशेषण बनता है और उसमें निमित्त सप्तमी मानी जाती है। द्वित्व के निमित्त अच् को मान कर, ऐसा अर्थ हो जाता है। दूसरे 'द्विवचने' पद में विषय सप्तमी मान कर द्वित्व करने में, इस प्रकार अर्थ हो जाता है। अर्थ होता है - द्वित्व के निमित्त अच् को मानकर अच् के स्थान पर आदेश नहीं होता, द्वित्व के करने में। अर्थात् द्वित्व का निमित्त अच् विद्यमान हो तो उस का आश्रय करके किसी अन्य अच् के स्थान पर तब तक कोई आदेश नहीं होता, जब तक द्वित्व नहीं हो जाता। द्वित्व कर चुकने के बाद ही उस के स्थान पर कोई आदेश हो सकेगा पहले नहीं।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - क्षमार्थक क्षि धातु से परोक्ष लिट् सूत्र में लिट्, लिट् के ल् के स्थान पर प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में तिप्-एवं अनुबन्ध लोप होकर क्षि+ति। परस्मैपदानां णलतुसुस् थलथुसणल्वमाः सूत्र से तिप् को णल् सर्वादेश तथा अनुबन्ध लोप होकर क्षि+अ।

यहाँ लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से धातु को द्वित्व प्राप्त किन्तु इकोयणचि सूत्र से इक् को यण् प्राप्त। यहां भी णल् णित् होने से अचोञ्णिति सूत्र से अजन्त अंग को वृद्धि प्राप्त है। यहां फिर सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त को गुण प्राप्त है। किन्तु विप्रतिषेधे परं कार्यम् की परिभाषा से द्वित्व होने से यण् आदेश बलवान है। अतः द्वित्व होने से पूर्व गुण प्राप्त होता है। वहां णल् को निमित्त करके द्वित्व को प्राप्त होता है उस अकार का द्वित्वनिमित्तक अच् है। द्विर्वचनेऽचि सूत्र से इस अच् परे होने से अच् को आदेश नहीं हो सकता द्वित्व कार्य के बिना अर्थात् प्रथम द्वित्व होता है, उसके बाद अच् को आदेश आदि होता है। इस प्रकार लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से अनभ्यास धातु अवयव एकाच् क्षि को द्वित्व होने पर क्षि+क्षि+अ स्थिति होती है। द्विरूक्त पूर्वभाग क्षि की पूर्वोऽभ्यासः सूत्र से अभ्यास संज्ञा में हलादिः शेषः सूत्र से अभ्यास के आदि हल् का शेष रहने पर कि+क्षि+य स्थिति बनती है-तब-

17.4 कुहोश्चुः॥ (7.4.62)

सूत्रार्थ - अभ्यास के कवर्ग और हकार के स्थान पर चवर्ग आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से चवर्ग का विधान किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। कुहोः (6/2), चुः (1/1)। यहां लोपोऽभ्यासस्य सूत्र से अभ्यासस्य (6/1) इसषाष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति होती है। कुः च ह् च कुहौ, तयोः इति इतरेतरयोग द्वन्द्वसमासः। सूत्रार्थ होता है - अभ्यास के कवर्ग और हकार के स्थान पर चवर्ग आदेश होता है। कुहोः स्थानी छः है। चुः आदेश पाँच है। अतः स्थानी और आदेश की संख्या वैषभ्य होने से स्थानेऽन्तरतमः सूत्र से गुणकृत आदि आन्तर्य से निर्वाह होता है।

आन्तरतम्यपरीक्षा - (परीक्षा के लिए नहीं है।)

टिप्पणियाँ

स्थानेऽन्तरतमः परिभाषा जहां प्रवृत्त होती है वहां स्थानी से सदृशतम आदेश करना चाहिए। सादृश्य स्थान, अर्थ, गुण और प्रमाण चार प्रकार का है। सदृशतम आदेश के अन्वेषण के लिए आन्तरतम्य परीक्षा की जाती है। उस परीक्षा को यहां प्रदर्शित किया जा रहा है।

स्थानकृत् आन्तर्य है या नहीं - स्थानी कवर्ग एवं हकार का उच्चारण स्थान अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः सूत्र से कण्ठ है। आदेश में चवर्ग का उच्चारण स्थान तालु है। अतः स्थानी से सदृशतम विधीयमान आदेश में प्राप्त नहीं होता है।

प्रमाणकृत् आन्तर्य है या नहीं - प्रमाण यहां उच्चारण काल है। स्थानी कवर्ग और हकार अर्धमात्रिक के समान आदेश चवर्ग (च्, छ्, ज्, झ्, ञ्) ये पाँच ही अर्धमात्रिक है। अतः इसमें एक प्रमाणत अन्तरतम नहीं है।

अर्थकृत् आन्तर्य है या नहीं - यहां वर्णों का कोई भी अर्थ ग्रहण नहीं होता है। समुदाय ही अर्थवान् होता है। उनकी एकदेशोऽनर्थक न्याय है अतः अर्थ से आन्तर्य का विचार नहीं किया जा सकता है।

गुणकृत् आन्तर्य है या नहीं - गुण शब्द अर्थ यहां बाह्यत्न है। स्थानी कवर्ग एवं हकार से आदेश में जो बाह्य यत्न समान है वह आदेश चवर्ग सदृशतम है। बाह्यत्न नीचे विस्तार से प्रदर्शित किये जा रहे है -

	वर्ण	बाह्यत्न			
स्थानी	क	विवार	श्वास	अघोष	अल्पप्राण
	ख	विवार	श्वास	अघोष	महाप्राण
	ग	संवार	नाद	घोष	अल्पप्राण
	घ	संवार	नाद	घोष	महाप्राण
	ङ	संवार	नाद	घोष	अल्पप्राण
	ह	संवार	नाद	घोष	महाप्राण
आदेश	च	विवार	श्वास	अघोष	अल्पप्राण
	छ	विवार	श्वास	अघोष	महाप्राण
	ज	संवार	नाद	घोष	अल्पप्राण
	झ	संवार	नाद	घोष	महाप्राण
	ञ	संवार	नाद	घोष	अल्पप्राण

प्रकरण में साक्षात् स्थानी को देख कर आदेश में जिसका बाह्यप्रयत्न स्थानी से सदृशतम हो वह आदेश होता है।

जैसे- स्थानी ककार हो तो आदेश में चकार का ही बाह्यप्रयत्न ककार के तुल्य है। स्थानी खकार हो तो आदेश में छकार का ही बाह्यप्रयत्न खकार के तुल्य है। स्थानी गकार हो तो आदेश में जकार का ही बाह्यप्रयत्न गकार के तुल्य है। स्थानी घकार हो तो आदेश में झकार का ही बाह्यप्रयत्न घकार के तुल्य है। स्थानी ङकार हो तो आदेश में ञकार का ही बाह्यप्रयत्न ङकार के तुल्य है। स्थानी हकार हो तो आदेश में झकार का ही बाह्यप्रयत्न हकार के तुल्य है। यद्यपि ङकार के तुल्य जकार भी है फिर भी ङकार एवं ञकार दोनों अनुनासिक भी है। अतः ङकार क स्थान पर ञकार ही होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में कि+क्षि+अ स्थिति थी।

यहाँ कुहोश्चुः सूत्र से अभ्यास के कवर्ग के ककार के स्थान पर चवर्ग करना है। ककार के स्थान पर आदेश में चवर्ग में से कौनसा हो इसलिए उपर आन्तरम्भ्य परीक्षा प्रदर्शित कि गई उसके आधार पर ककार का बाह्य प्रयत्न विवार श्वास अघोष एवं अल्पप्राण है। आदेश में चकार का बाह्य प्रयत्न विवार श्वास अघोष और अल्पप्राण ककार के तुल्य है। अतः चकार आदेश होकर चि+क्षि+अ स्थिति बनती है।

17.5 अचो ञ्णिति॥ (7.1.91)

सूत्रार्थ - ञित् णित् प्रत्यय परे हो तो अजन्त अंग को वृद्धि हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से वृद्धि का विधान किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। अचः (6/1), ञ्णिति (7/1)। अंगस्य (6/1) इसका अधिकार है। मृजेर्वृद्धिः सूत्र से वृद्धिः (1/1) पद की अनुवृत्ति होती है। ञ् च ण् च ञणौ इति इतरेतरयोग द्वन्द्वसमास्। ञ्णौ इतौ यस्य स ञ्णित् तस्मिन् ञ्णिति इति बहुव्रीहिसमासः। प्रत्यय परे होने से अंग संज्ञा उत्पन्न होती है। अतः प्रत्यये इस सप्तम्यन्त पद की अपेक्षा होती है। पदयोजना होती है - अचः अंगस्य ञ्णिति प्रत्यये वृद्धिः। अचः अंगस्य में समान विभक्ति होने से अच् का विशेषण होने से तदन्त विधि होती है। तदन्तविधि से अजन्तस्य अंगस्य यह प्राप्त होता है। अलोऽन्त्यस्य इस परिभाषा से अन्त्य अल् को वृद्धि होती है। यहां अन्त्य अत् अच् ही है। अतः सूत्रार्थ होता है - अजन्त अंग के अन्त्य अच् को वृद्धि होती है। यदि ञित् या णित् प्रत्यय परे हो।

उदाहरण -चिक्षाय

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में चि+क्षि+अ यह स्थिति थी। णल् प्रत्यय परे होने से चि क्षि इस समुदाय की अंग संज्ञा होती है। यहां अंग अजन्त है और णल् णित् प्रत्यय है। अतः अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से अचोञ्णिति सूत्र से अन्त्य अल् इकार के स्थान पर वृद्धि ऐकार होकर चि क्षै+अ स्थिति बनती है। उसके बाद एचोऽयवायावः से ऐकार को आय् आदेश होकर चिक्षाय रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

चिक्षियतुः - क्षय अर्थक क्षि धातु से परोक्षे लिट् सूत्र से लिट्, लिट् के ल् के स्थान पर प्रथमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में तस् प्रत्यय होकर क्षि+तस्। तस् को अतुस् सर्वादेश होकर क्षि+अतुस् बनता है। उसके बाद सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त को गुण प्राप्त होता है- तब

17.6 असंयोगाल्लिट् कित्॥ (1.2.5)

सूत्रार्थ -असंयोग से परे अपित् लिट् कित् हो।

सूत्र व्याख्या -यह अतिदेश सूत्र है। इस सूत्र से कित् का अतिदेश किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। असयोगात् (5/1) लिट् (1/1), कित् (1/1)। सार्वधातुकमपित् सूत्र से अपित् (1/1) पद आता है। न संयोगः असंयोगः, तस्मात् असंयोगत् इति नञ् अपित् इति नञ् तत्पुरूष समासः। सूत्रार्थ होता है - असंयोग से परे अपित् लिट् कित् होता है। अठारह तिङ्प्रत्ययों में तिप्, सिप्, मिप् ये तीन पित् है। शेष 15 प्रत्यय अपित् है। इसी प्रकार तिप् आदि के स्थान पर विहित् णालादि भी स्वयं अपित् ही है। यहां तिप् सिप् व मिप् के स्थान पर विहित णल्, थल् एवं अ ये तीन पित् है और इन से भिन्न अपितों की कित् संज्ञा होती है।

उदाहरण -चिक्षियतुः।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में क्षि+अतुस् स्थिति में इगन्त अंग इक् के इकार को गुण प्राप्त था। यहां लिट् के स्थान पर विहत जो तस् प्रत्यय के स्थान पर अतुस् स्थानीवद्भाव न होने से स्वतः पित् नहीं है। अतः अपित् और लिट् है। क्षि के अन्त में इकार है संयोग नहीं। अतः असंयोग से परे अपित् लिट् अतुस् है। अतः इस सूत्र असंयोगल्लिट् कित् से कित् अतिदेश किया जाता है। और क्ङिति च से इग्लक्षण गुण का निषेध होता है। इसके बाद लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र में अनभ्यास धातु के अवयव एकाच् क्षि को द्वित्व होकर क्षि+क्षि+अतुस् हलादिःशेषः सूत्र में अभ्यास के आदि हल् शेष रहकर कि+क्षि+अतुस्। कुहोश्चुः से अभ्यास के ककार को चकार होकर चि+क्षि+अतुस्। उसके बाद श्नुधातुभ्रुवां वोरियङुवङौ सूत्र से षकारोत्तरवर्त्ती इकार के स्थान पर इयङ् आदेश, अनुबन्ध लोप होकर चि+क्षिय्+अतुस्। तथा सकार को सत्व एवं विसर्ग होकर चिक्षियतुः रूप सिद्ध होता है।

चिक्षियुः - क्षि धातु से लिट् में प्रथम पुरूष बहुवचन की विवक्षा में झि प्रत्यय, उसके स्थान पर झेर्जुस् से जुस् एवं अनुबन्ध होकर क्षि+उस्। सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण प्राप्त असंयागाल्लिट् कित् से उस् की कित् संज्ञा क्ङिति च से गुण निषेध, द्वित्व और अभ्यास कार्य होकर चि+क्षि+उस्। अचि श्नुधातुभ्रुवां "वोरियङुवङौ सूत्र से क्षि के इ को इयङ् होकर चि+क्षिय्+उस्, वर्णसम्मेलन तथा स् को विसर्ग होकर चिक्षियुः रूप सिद्ध होता है।

चिक्षयिथ, चिक्षेय - क्षि धातु से लिट, लिट् को सिप्, सिप् को थल् सर्वादेश होकर क्षि+थ। लिट् च सूत्र में लिट् आदेश के सिप् की आर्धधातुक संज्ञा, उसके स्थान पर आदेश हुए थल् भी आर्धधातुक हुआ तथा वलादि भी है। अतः आर्धधातुकस्येड् वलादेः से थल् को इट् का आगम प्राप्त। किन्तु -

पाठगत प्रश्न 17.1

1. अभ्यास के आदि अच् को दीर्घ किस सूत्र से होता है?
2. अतति में अत् धातु का अर्थ क्या है?
3. ञित् णित् प्रत्यय परे रहते उपधा के अत् को वृद्धि किस सूत्र से होती है?
4. द्विर्वचनेऽचि का अर्थ लिखिए?
5. चिक्षाय में ककार को चकार किस सूत्र से होता है?
6. चिक्षाय में इकार को वृद्धि किस सूत्र से होती है?
7. चिक्षियतुः में आर्धधातुक निबन्धक गुण का अभाव कैसे हुआ।
8. चिक्षियतुः में यकार किस से आया?
9. चिक्षाय रूप में ककार का चकार करने में कैसी समानता है-

   1. स्थानकृत 2. गुणकृत् 3. अर्थकृत् 4. प्रमणकृत्

17.7 एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्॥ (7.2.10)

सूत्रार्थ - उपदेश अवस्था में जो धातु एकाच् वाली तथा साथ ही अनुदात्त भी हो तो उस धातु से परे आर्धधातुक प्रत्यय को इट् का आगम नहीं होता।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र से इट् का निषेध किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद हैं। एकाचः (5/1) उपदेश (7/1), अनुदात्तात् (5/1)। ऋत इद्धातोः इस सूत्र से धातोः (5/1) पद की अनुवृत्ति होती है। नेड् वशि कृति इस सूत्र से न अव्ययपद एवं इट् (1/1) पद की अनुवृत्ति होती है। एकः अच् यस्य यस्मिन् वा असौ एकाच्, तस्माद् एकाचः इति बहुव्रीहिसमासः। अनुदात्तः अस्ति अस्य इति अनुदात्तः धातुः (अर्श आदिभ्योऽच् इति अजन्तम् पदम्) सूत्रार्थ होता है- उपदेश में जो धातु एकाच् और अनुदात्त है उससे परे आर्धधातुक को इट् नहीं होता है। जो धातु उपदेश अवस्था में एकाच् भी है और अनुदात्त भी है। उससे परे आर्धधातुक को इट् का निषेध किया गया है। यहां विशेष्य अवधेय है। यदि उपदेश में धातु एकाच् है परन्तु अनुदात्त नहीं है तो निषेध नहीं होगा। यदि धातु उपदेश में अनुदात्त है परन्तु एकाच् नहीं है तो भी निषेध नहीं होता है। जिस धातु को इट् का आगम होता है उसे सेट् धातु कहते हैं। जिस धातु के परे आर्धधातुक को इट् का आगम नहीं होता उसे अनिट् कहते हैं। और जिस धातु से परे आर्धधातुक को इट् का आगम विकल्प से होता है वह वेट् होती है। इस प्रकार इट् आगम के आधार पर धातु तीन प्रकार की है - सेट्, वेट् और अनिट्।

टिप्पणियाँ

आर्धधातुकस्येड् वलादेः सूत्र से इट् का आगम का विधान किया जाता है। इस सूत्र से इट् का निषेध किया गया है। अतः इस सूत्र में कहा गया कि आर्धधातुक को इट् नहीं होता है।

उपदेश धातु में बहुत अधिक स्वर की योजना होती है। उसकी उपदेशेऽजनुनासिक इत् सूत्र से इत् संज्ञा होती है। जिस धातु का अनुदात्त स्वर इत् संज्ञा प्राप्त होती है वह धातु अनुदात्तेत् कही जाती है। जिस धातु के स्वकीय स्वर की इत्संज्ञा नहीं होती है वह धातु अनुदात्त कही जाती है। इस प्रकार अनुदात्त एवं अनुदात्तेत् दो प्रकार धातु होती हैं।

पाणिनीयधातुपाठ में पाणिनी ने धातु स्वरों का निर्देश किया गया है। वहां देखने से ही उसका ज्ञान हो सकता है। वहाँ परिशीलन से कुछ धातुओं का निर्देश करने के लिए समर्थ हो सके। अतः कौन सी धातु अनुदात्त है और कौन अनुदात्त नहीं इस ज्ञान के लिए धातुएँ व्यवस्थित है। वे यहां दी गई है।

जिस धातु को एक अच् होता है वह अजन्त और हलन्त भेद से दो प्रकार की होती है। यहां अजन्त धातु विषयी कारिका प्रस्तुत है। इस कारिका में स्थिति धातु अनुदात्त नहीं हैं।

ऊदृदन्तैर्यौतिरुक्ष्णुशीङ्स्नुनुक्षुश्विडीङ्श्रिभिः।
वृङ्वृञ्भ्यां च विनैकाचोऽजन्तेषु निहताः स्मृताः॥

इस कारिका में अविद्यमान या अनुल्लिखत एकाच् और अजन्त धातु अनुदात्त होती है। कारिका में उल्लिखित-ऊदन्त, ॠदन्त (दीर्घ ;), यु रु क्ष्णु शी स्नु क्षु श्वि डीङ् श्रि, वृङ्, वञ् धातुएं हैं। इनको छोड़कर अन्य एकाच् और अजन्त धातु अनुदात्त होता है।

हलन्त 103 धातुएं हैं -

कान्तेषु शक्लेकः।

चान्तेषु पच् मुच् रिच् वच् विच् सिचःषट्। छान्तेषु प्रच्छ्येकः। जान्तेषु त्यज् निजिर् भज् भञ्ज् भुज् भ्रस्ज् मस्ज् यज् युज् रुज् रञ्ज् विजिर् स्वञ्ज् सञ्ज् सृजः पन्द्रह।

दान्तेषु अद् क्षुद् खिद् छिद् तुद् नुद् पद्य भिद् विद्य विनद् विन्द् शद् सद् स्विद्य स्कन्द् हदः सोलह।

धान्तेषु क्रुध् क्षुध् बुध्य बन्ध् युध् रुध् राध् व्यध् साध् शुध् सिध्या ग्यारह।

मान्तेषु मन्यहनी दो।

पान्तेषु आप् क्षुप् क्षिप् तप् तिप् तृप्य दृप्य लिप् लुप् वप् शप् स्वप् सृपस् तेरह।

भान्तेषु यभ् रभ् लभः तीन।

मान्तेषु गम् नम् यम् रमश् चार।

शान्तेषु क्रुश् दंश् दिश् मृश् रिश् रुश् लिश् विश् स्पृशो दस।

भ्वादिप्रकरण में - लट् लिट् के सूत्रशेष

षान्तेषु कृष् त्विष् तुष् द्विष् दुष् पुष्य पिष् विष् शिष् शुष् श्लिष ग्यारह।

सान्तेषु घस्-वसती दो।

हान्तेषु दह् दिह् दुह् नह् मिह् रुह् लिह् वहः आठ।

अनुदात्ता हलन्तेषु धातवः एक सौ तीन। 103 धातु अनुदात्त है।

ये हलन्त अनुदात्त धातुएं अकारादिक्र से नीचे प्रस्तुत हैं -

क्र.	धातुः	--	क्र.	धातुः	--	क्र.	धातुः	--	क्र.	धातुः	--	क्र.	धातुः
1.	अद्		22.	दह्		43.	भिद्		64.	रिश्		85.	शप्
2.	आप्		23.	दिश्		44.	भुज्		65.	रुज्		86.	शिष्
3.	कृष्		24.	दिह्		45.	भ्रस्ज्		66.	रुध्		87.	शुध्
4.	क्रुध्		25.	दुष्		46.	मन्य		67.	रुश्		88.	शुष्
5.	क्रुश्		26.	दुह्		47.	मस्ज्		68.	रुह्		89.	श्लिष्य
6.	क्षिप्		27.	दृप्य		48.	मिह्		69.	लभ्		90.	सत्रा्
7.	क्षुद्		28.	दश्श्		49.	मुच्		70.	लिप्		91.	सद्
8.	क्षुध्		29.	द्विष्		50.	मृश्		71.	लिश्		92.	साध्
9.	खिद्		30.	नम्		51.	यज्		72.	लिह्		93.	सिच्
10.	गम्		31.	नह्		52.	यभ्		73.	लुप्		94.	सिध्य
11.	घस्		32.	निजिर्		53.	यम्		74.	वच्		95.	सृज्
12.	छिद्		33.	नुद्		54.	युज्		75.	वप्		96.	सृप्
13.	छुप्		34.	पच्		55.	युध्		76.	वस्		97.	स्कन्द्
14.	तप्		35.	पद्य		56.	रत्रा्		77.	वह्		98.	स्पश्श्
15.	तिप्		36.	पिष्		57.	रभ्		78.	विच्		99.	स्वत्रा्
16.	तुद्		37.	पुष्य		58.	रम्		79.	विजिर्		100.	स्वप्
17.	तुष्		38.	प्रच्छ्		59.	राध्		80.	विद्य		101.	स्विद्य
18.	त्प्		39.	बन्ध्		60.	रिच्		81.	विष्		102.	हद्
19.	त्यज्		40.	बुध्य		61.	विनद्		82.	व्यध्		103.	हन्
20.	त्विष्		41.	भज्		62.	विन्द्		83.	शकद्ध			
21.	दश्		42.	भत्रा्		63.	विश्		84.	शद्			

टिप्पणियाँ

भ्वादिप्रकरण में - लट् लिट् के सूत्रशेष

हलन्त धातुओं में कुछ धातुओं के विषय में विवरण यहां दिया गया है।

अनुक्र.	धातुः-अर्थः	गणः, पदम्
1.	शकॢँ शक्तौ	स्वादि, प.प.
2.	पच् डुपचँष् पाके	भ्वादि, उ.प.
3.	मुच् मुचँॢ मोक्षणे	तुदा, उ.प.
4.	रिच् रिचिर् विरेचने, रिचिर् वियोजनसम्पर्चनयोः	रूधा, उ.प.चुरा, उ.प.
5.	वच् वच परिभाषणे, ब्रवो वचिः इति वच् अपि	अदा, प.प.
6.	विच् विचिर् पश्थग्भावे	रूधा, उ.प.
7.	सिच् षिचँ क्षरण	तुदा, उ.प.
8.	प्रच्छ ज्ञीप्सायाम्	तुदा, प.प.
9.	त्यज हानौ	भ्वा, प.प.
10.	निजिर् णिजिर् शौचपोषण्योः	जुहो., उ.प.
11.	भज् सेवायाम्	भ्व, उ.प.
12.	भञ्ज् भत्राँ आमर्दने	रूधा, प.प.
13.	भुज् भुज पालनाभ्यवहारयोः, भुजाँ कौटिल्ये	रूधा, प.प. तुदा, प.प.
14.	भ्रस्ज् पाके	तुदा, प.प.
15.	मस्ज् टुमस्जाँ शुद्धौ	तुदा, प.प.
16.	यज् देवपूजासक्तिकरणदानेषु	भ्वा, उ.प.
17.	युज् युजिर् योगे,युजँ समाधौ,युजसंयमने	रूधा, उ.प.दिवा, आ.प.चुरा, उ.प.
18.	रूज् रूजाँ भक्े	तुदा, प.प.
19.	रञ्ज् रागे	भ्वा, दिवा, उ.प.
20.	विजिर् पृथग्भावे	जुहो, उ.प.

21.	स्वञ्ज्षवत्राँ परिष्वके	भ्वा, आ.प.
22.	सञ्ज्षात्रा सके	भ्वा, प.प.
23.	सृज विसर्गे	दिवा, आ.प.। तुदा, प.प.
24.	अद भक्षणे	अदा, प.प.
25.	क्षुद् क्षुदिर् सम्पेषणे	रूधा, उ.प.
26.	खिद् खिदँ दैन्ये, खिद परिघाते	दिव, रूधा, आ.प.तुदा, प.प.
27.	छिद् छिदिर् द्वैधीकरणे	रूधा, उ.प.
28.	तुद् व्यथने	तुदा, उ.प.
29.	नुद णुद प्रेरणे	तुदा, उ.प.
30.	पद् पदँगतौ	दिवा, आ.प.
31.	भिद् भिदिर् विदारणे	रूधा, उ.प.
32.	विद्-विद्-विदँ सत्तायाम्	दिवा, आ.प.
33.	विन्द्-विद् विदऊ विचारणे	रूधा, आ.प.
34.	विन्द्-विद् विदद्यँ लाभे	तुदा, उ.प.
35.	शद् शदद्यँ शातने	भ्वा, तुदा, प.प.
36.	सद्षादद्यँ विशरणगत्यवसादनेषु	भ्व, तुदा, प.प.
37.	स्विद्य स्विद् ञिष्विदाँ गात्रप्रक्षरणे	दिवा, प.प.
38.	स्कन्द् स्कन्दिर् गतिशोषणयोः	भ्वा, प.प.
39.	हद् पुरीषोत्सर्गे	भ्वा, आ.प.
40.	क्रुध क्रोधे	दिवा, प.प.
41.	क्षुध् बुभुक्षायाम्	दिवा, प.प.
42.	बुध् बुध् बुधँ अवगमने	दिव, आ.प.
43.	बन्ध बन्धने	क्र्यादि, प.प.
44.	युध् सम्प्रहारे	दिवा, आ.प.

टिप्पणियाँ

45.	रूध् रूधिरँ आवरणे, अनु+रूधँ कामे	रूधा, आ.प.दिवा, आ.प.
46.	राध् राध संसिद्धौराध वृद्धौ	स्वा, प.पदिवा, प.प.
47.	व्यध ताडने	दिवा, प.प.
48.	शुध् शौचे	दिवा, प.प.
49.	साध् संसिद्धौ	स्वा, प.प.
50.	सिध्य् सिध् षिधुँ संराद्धौ	दिवा, प.प.
51.	मन्य-मन् मनँ ज्ञाने	दिवा, आ.प.
52.	हन् हिंसागत्योः	अदा, प.प.
53.	आप् आपद्म व्याप्तौआपद्म लम्भने	स्वा, प.प.चुरा, उ.प.
54.	क्षुप् प्रेरणे	दिवा, प.प.। तुदा, उ.प.
55.	क्षिप् स्पर्शे	तुदा, प.प.
56.	तप्-तप सन्तापे, तपँ ऐश्वर्ये, तप दाहे	भ्वा, प.प.दिवा, आ.प.चुरा, उ.प.
57.	तिप् तिपश्ँ क्षरणे	भ्वादि, प.प.
58.	तृप्य, तृप् त्प प्रीणने	दिवा, प.प.
59.	दृप्य दृप् दश्प हर्षमोहनयोः	दिवा, प.प.
60.	लिप् उपदेहे	तुदा, उ.प.
61.	लुप्-लुपद्यँ छेदने	तुदा, उ.प.
62.	वप् डुवपँ बीजसन्ताने	भ्वादि, उ.प.
63.	शप् शपँ आक्रोशे	भ्वादि, दिवा, उ.प.
64.	स्वप् ञिष्वप् शये	अदा, प.प.
65.	सृप् सृपद्यँ गतौ	भ्वादि, प.प.
66.	यभ् मैथुने	भ्वादि, प.प.
67.	रभ् राभस्ये	भ्वादि, आ.प.
68.	लभ् डुलषँष् प्राप्तौ	भ्वादि, आ.प.

69.	गम् गमद्यँ गतौ	भ्वादि, प.प.
70.	नम् णम प्रह्त्वे शब्दे च	भ्वादि, प.प.
71.	यम् यमुँ उपरमे	भ्वादि, प.प.
72.	रम् रमुँ क्रीडायाम्	भ्वादि, आ.प.
73.	क्रुश् आहने रोदने च	भ्वादि, प.प.
74.	दंश् दशने	भ्वादि, प.प.
75.	दिश् अतिसर्जने	तुदा, प.प.
76.	दृश् दशशिर् प्रेक्षणे	भ्वादि, प.प.
77.	मृश् आमर्शने	तुदा, प.प.
78.	रिश् हिंसायाम्	तुदा, प.प.
79.	रूश् हिंसायाम्	तुदा, प.प.
80.	लिश् अल्पीभावे, लिश गतौ	दिवा, आ.प.तुदा, प.प.
81.	विश् प्रवेशन	तुदा, प.प.
82.	स्पृश् संस्पर्शे	तुदा, प.प.
83.	कृष विलेखने	भ्वादि, तुदा, उ.प.
84.	त्विष् दीप्तौ	भ्वादि, उ.प.
85.	तुष् प्रीतौ	दिवा, प.प.
86.	द्विष् अप्रीतौ	अदा, उ.प.
87.	दुष् वैकृत्ये	दिवा, प.प.
88.	पुष्य-पुष् पुष पुष्टौ	दिवा, प.प.
89.	पिष्, पिषद्यँ सत्वूर्णने	रूधा, प.प.
90.	विष् विषद्यँ व्याप्तौ,	जुहो, उ.प.
	विषुँ सेचने,	भ्वादि, प.प.
	विष विप्रयोगे	क्र्यादि, प.प.

91.	शिष् शिष हिंसायाम्,	भ्वादि, प.प.
	शिषद्मँ विशेषणे,	रूधा, प.प.
	शिष असर्वोपयोगे	चुरा, उ.प.
92.	शुष शोषणे	दिवा, प.प.
93.	श्लिष्य श्लिष् श्लिष आलिक्ने	दिवा, प.प.
94.	घस् घसद्मँ अदने	भ्वादि, प.प.
95.	वसति वस् निवासे	भ्वादि, प.प.
96.	दह् भस्मीकरणे	भ्वादि, प.प.
97.	दिह् उपचये	अदा, उ.प.
98.	दुह् प्रपूरणे	अदा, उ.प.
99.	नह् णहँ बन्धने	दिवा, उ.प.
100.	मिह् सेचने	भ्वादि, प.प.
101.	रूह् बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च	भ्वादि, प.प.
102.	लिह् आस्वादने	अदा, उ.प.
103.	वह् प्रापणे	भ्वादि, उ.प.

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व क्षि+य स्थिति में आर्धधातुकस्येड, वलादेः सूत्र. से इट् का आगम प्राप्त। किन्तु क्षि धातु उपदेश में एकाच् और अनुदात्त है। अतः इट् आगम का एकाच् और अनुदात्त होने से इस एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से इट् का निषेध है।

17.8 कृसृभृवृस्तुद्रुस्रुश्रुवो लिटि॥ (7.2.13)

सूत्रार्थ -कृ सृ भृ वृ स्तु द्रु स्रु श्रु इन आठ धातुओं से परे ही लिट् को इट् न हो, अन्य अनिट् धातुओं से परे भी उसे इट् का आगम जा जाये।

सूत्रव्याख्या - यह नियम सूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। कृसृभृवृस्तुद्रुस्रु श्रुवः (5/1) लिटि (7/1)। नेड्वशि कृति सूत्र से न अव्ययपद की अनुवृत्ति है। यहां आर्धधातुक लिट को इट् आगम होता है। लिटि इसका लिटः इसषाष्ठ्यन्त से विपरिणाम होता है। सूत्रार्थ होता है -कृ सृ भृ वृ स्तु द्रु स्रु श्रु इन से लिट् को इट् नहीं होती है।

इस सूत्र में अनुबन्धरहित कृ डुकृञ् करणे, कृञ् हिंसायाम् इन दो का ग्रहण होता है। सृ से सृ गतौ, भृ निरनुबन्धपाठ होने से भृञ् भरणे, डुभृञ् धारणेपोषणयोः इन दो का ग्रहण होता है, निरनुबन्धितपाठ से वृङ् सम्पक्तौ, वृञ् वरणे इन दो का ग्रहण होता है, स्तु सेषटुञ् स्तुतौ, द्रुगतौ, स्रु गतौ, तथा श्रु श्रवणे का ग्रहण किया जाता है।

कृ सृ भृ ये तीन एकाच् और अनुदात्त धातुएं है। अतः इनसे एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से इट् आगम नहीं होता। वृ धातु को श्रयुकः क्किति (श्रिञ् एकाच् उगन्त गित् कित् प्रत्यय को इट् नहीं) उगन्त तथा थल् कित् होने से इट् नहीं प्राप्त होता। इस प्रकार इन चार धातुओं को इस सूत्र के बिना भी इट् नहीं होता। इन चारों से इट् आगम का निषेध होता है। अतः पुनः निषेध करने के लिए सूत्र से नियम की कल्पना की जाती है। सिद्ध होने पर भी कोई बात दोहराई जाय तो वह नियमार्थ बन जाती है। स्तु द्रु, स्रु श्रु आदि से थल से भारद्वाज नियम से पाक्षिक इट् का आगम प्राप्त होता है। परन्तु उनसे इट् नहीं होंवे इसलिए सूत्र में उपादान किया गया है। इस प्रकार पर्यावलोचना से सूत्र का अर्थ होता है -कृ सृ भृ वृ स्तु द्रु स्रु श्रु इसमें ही लिट् को इट् नहीं होता। अन्य धातुओं से लिट् को इट् होता है। अतः अन्य एकाच् उपदेशेऽनुदात्त होने से इट् आगम निषेध प्राप्त था किन्तु इस सूत्र से उनको पुनः इट् आगम होता है। इस प्रकार इस सूत्र से दिया गया नियम को क्रादिनियम कहा जाता है।

आर्धधातुकस्येऽवलादेः सूत्र से अविशेष के समान इन वलादि आर्धधातुक को इट् का विधान किया जाता है। एकाच् उपदेश में अनुदात्त होने से इस सूत्र द्वारा उपदेश में एकाच् अनुदात्त से परे अविशेष से पर को इट् निषेध किया जाता है। यहां जिनसे निषेध किया गया उनमें क्रादि को छोड़कर अन्यों को पुनः क्रादिनियम से इट् का आगम होता है। और भी कृ सृ भृ वृ स्तु द्रु स्रु श्रुवा लिटि सूत्र से क्रादि आठ को लिट् में इट् निषेध किया गया। अन्य अनिट् को इट् का विधान होता है। अनिटों को पुनः सेट्त्व केवल लिट् में ही होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय- पूर्व क्षि+थ स्थिति में आर्धधातुकस्येड् वलादेः से थल् को इट् आगम प्राप्त। प्राप्त इट् आगम को एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध। इस प्रकार क्षि धातु क्रादि में नहीं है। अतः क्रादिनियम से क्षि धातु के लिट् थल् को पुनः इट् आगम प्राप्त होता है। तब-

17.9 अचस्तास्वत् थल्यनिटो नित्यम्॥ (7.2.61)

सूत्रार्थ - उपदेश में अजन्त धातु, जो तास् में नित्य अनिट् हो, उससे परे थल् को इट् का आगम नहीं होता।

सूत्र व्याख्या -यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र द्वारा इट् का निषेध किया जाता है। इस सूत्र में पाँच पद हैं। अचः (5/1), तास्वत् अव्ययपद, थलि (7/1), अनिटः (5/1), नित्यम् क्रियाविशेषण अव्ययपद। उपदेशेऽत्वतः सूत्र से उपदेशे (7/1) पद की अनुवृत्ति है। तासि च क्लृपः सूत्र से तासि (7/1) पद की अनुवृत्ति है। न वृद्भ्यश्चतुर्भ्यः सूत्र से न अव्ययपद की अनुवृत्ति है। धातु से थल्

टिप्पणियाँ

का विधान है। अतः धातोः (5/1) का आक्षेप किया जाता है। तासौ इव तास्वत् इति सप्तमन्त से वति प्रत्यय। पद योजना-उपदेशे अचः धातोः तासि नित्यम् अनिटः तास्वत् थलि इट् न। अचः धातोः से अच् धातु का विशेषण है। अतः तदन्त विधि से अजन्ताद् धातोः अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - उपदेश में ऐसी अजन्त धातु जो तास् में नित्य अनिट् हो उस से परे जैसे तास् में इट् नहीं होता वैसे थल् में भी इट् नहीं होता।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में क्रादिनियम से क्षि धातु से लिट् के थल् को पुनः इट् आगम प्राप्त हुआ। क्षि धातु उपदेश में अजन्त है। एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उससे परे तास् को नित्य इट् आगम नहीं होता है अतः वह तास् परे होने से नित्य अनिट् है। अच् से तास् वत् थल् नित्य अनिट् है। इस सूत्र से क्षि धातु से परे थल् को इट् आगम का निषेध प्राप्त होता है।

17.10 उपदेशेऽत्वतः॥ (7.2.62)

सूत्रार्थ - उपदेश में ह्रस्व अकार वाली धातु जो तास् में नित्य अनिट् हो उससे परे थल् को इट् न हो।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र द्वारा इट् का निषेध किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। उपदेशे (7/1), अत्वतः (5/1)। अचस्तास्वत् थल्यनिटो नित्यम् सूत्र से तास्वत् अव्ययपद, थलि (7/1), अनिट् (5/1), नित्यम् क्रियाविशेषण अव्ययपद। तासि च क्लृपः सूत्र स तासि (7/1) पद की अनुवृत्ति है। गमेरिट् परस्मैपदेषु सूत्र से इट् (1/1) पद की अनुवृत्ति है। न वृद्भ्यचतुर्भ्यः सूत्र से न अव्ययपद की अनुवृत्ति है। धातु से थल् का विधान है। अतः धातोः (5/1) का आक्षेप किया जाता है।

अत्-अस्ति-अस्मिन्निति अत्वान्, तस्य अत्वतः। पदयोजना-उपदेश अत्वतः धातोः तासि नित्यम् अनिटः तास्वत् थलि इट् न। सूत्रार्थ होता है - उपदेश में ह्रस्व अकार वाली धातु जो तास् में नित्य अनिट् हो उससे परे जैसे थास् में इट् नहीं वैसे थल् में भी इट् न हो।

उदाहरण - पच् शक् आदि ह्रस्व अकार वाली धातु है। उसका पपक्थ शशक्य आदि रूप बनते हैं।

17.11 ऋतो भारद्वाजस्य॥ (6.2.63)

सूत्रार्थ - भारद्वाज ऋषि का मत है कि तास् में नित्यनिट् केवल ऋदन्त धातु से परे ही थल् को इट् न हो, अन्य धातुओं के थल् को इट् हो जाये।

सूत्र व्याख्या - यह नियम सूत्र हैं। इसमें दो पद हैं। ऋतः (5/1), भारद्वाजस्य (6/1)। अचस्तास्वत् थल्यनिटो नित्यम् सूत्र से तास्वत् अव्ययपद, थलि (7/1), अनिटः (5/1), नित्यम् क्रियाविशेषण अव्ययपद। तासि च क्लृपः सूत्र से तासि (7/1) की अनुवृत्ति है। गमेरिट् परस्मैपदेषु सूत्र से इट्

(1/1) की अनुवृत्ति है। न वृदभ्यश्चतुर्भ्यः सूत्र से न अव्ययपद की अनुवृत्ति है। धातु से थल् का विधान है। अतः धातोः (5/1) का आक्षेप किया जाता है। तासौ इव तास्वत् इति सप्तम्यात् वति प्रत्ययः। पदयोजना होती है - उपदेशे ऋतः धातोः तासि नित्यम् अनिटः तास्वत् थलि इट् न। ऋतः धातोः यहां ऋत् धातु का विशेषण है। अतः तदन्त विधि से ऋदन्त धातु से यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - उपदेश में जो धातु ऋदन्त है, वह तास् में नित्य अनिट् हो जैसे तास में इट् आगम नहीं होता वैसे ही उस धातु से थल् को इट् नहीं करना चाहिए।

समुदित अर्थ - अचस्तास्वत् थल्यनिटो नित्यम् सूत्र से तास् में नित्यानिट अजन्त धातु से परे थल् को इट् का निषेध होता है। इसी सूत्र से ऋदन्त धातु से भी इट् निषेध किया जाता है। इस प्रकार इट् का निषेध सिद्ध होता है। सिद्ध होने पर भी सूत्रारम्भ किया गया। अर्थात् सिद्ध होने पर भी कोई बात दोहराई जाये तो नियम बन जाता है। उससे नियम होता है कि भारद्वाज के मत में यदि तास् में नित्य अनिट् धातु से इट् आगम का निषेध तो वह ऋदन्त से ही होता है अन्य धातुओं से इट् निषेध नहीं होता अर्थात् इट् आगम होता है। भारद्वाज से भिन्न पाणिनी आदि मुनि के मत में अचस्तास्वत् थल्यनिटो नित्यम् एवं उपदेशेऽत्वतः सूत्रों से इट् निषेध किया जाता है। ऋदन्त से ही निषेध किया गया है। परन्तु भारद्वाज के मत में ऋदन्त से निषेध है, अन्य से नहीं। इस प्रकार विकल्प फलित होता है कि अचस्तास्वत् थल्यनिगे नित्यम् एवं उपदेशेऽत्वतः से विकल्प होता है। इस सन्दर्भ में कारिका दी गई है -

अजन्तोऽकारवान् वा यस्तास्यनिट् थलि वेडयम्।
ऋदन्त ईदृङ् नित्यानिट् क्राद्यन्यो लिटि सेड् भवेत्॥

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय -पूर्वोक्त सूत्रों से क्षि धातु उपदेश में अजन्त है एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उससे परे थल् को इट् का निषेध प्राप्त, भारद्वाज नियम से विकल्प से इट् आगम। उससे इडागम पक्ष में क्षि इ थ स्थिति में द्वित्व, अभ्यास कार्य चिक्षि इ थ।गुण एवं अयादि होकर चिक्षयिथ रूप सिद्ध होता है। इडागम अभाव पक्ष में द्वित्व, अभ्यास कार्य चि क्षि थ स्थिति में गुण होकर चिक्षेथ रूप सिद्ध होता है।

चिक्षियथुः- क्षि धातु मध्यमपुरुष द्विवचन में थस्, थस् को अथुस् द्वित्व, अभ्यास कार्य चिक्षि अथुस्। उसके बाद इकार को इयङ् एवं सकार को रुत्व विर्सग आदेश होकर चिक्षियथुः रूप सिद्ध होता है।

चिक्षिय- क्षि धातु मध्यमपुरुष बहुवचन में थ, थ को अ, द्वित्व, अभ्यास कार्य चिक्षि अ। उसके बाद इकार को इयङ् आदेश होकर चिक्षिय रूप सिद्ध होता है।

चिक्षाय, चिक्षय - क्षि धातु उत्तमपुरुष एकवचन में मिप्, मिप् को णल् ञ्णति से अजन्त अंग को वृद्धि प्राप्त। तब

टिप्पणियाँ

17.12 णलुत्तमो वा॥ (7.1.91)

सूत्रार्थ - उत्तम पुरूष को णल् विकल्प से णित् हो।

सूत्र व्याख्या - यह अतिदेश सूत्र है। इस सूत्र से णित्त्व का विधान किया जाता है। इस सूत्र में तीन पाद हैं। णल् उत्तमः वा सूत्रगत पदच्छेद है। णल् (1/1) उत्तमः (1/1), वा अव्ययपद है। गोतो णित् सूत्र में णित् (1/1) पद की अनुवृत्ति है। सूत्रार्थ होता है - उत्तम पूरूष संज्ञक णल् को विकल्प से णित् होता है और पक्ष में णकार नहीं होता है। अतः णित्व भी नहीं होता।

उदाहरण -चिक्षाय, चिक्षय

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से क्षि धातु से णल् में चिक्षि अ स्थिति में वृद्धि प्राप्त किन्तु इस सूत्र से णित् पक्ष में वृद्धि होकर चिक्षै अ तथा अयादि होकर चिक्षाय रूप सिद्ध होता है। णित् अभव पक्ष में गुण होकर चिक्षे अ तथा अयादि होकर चिक्षय रूप सिद्ध होता है।

चिक्षियिव - क्षि धातु उत्तमपुरुष द्विवचन में वस्, नित्यं ङितः से सकार लोप, क्रादि नियम से इट् क्षि इव स्थिति में द्वित्व, अभ्यास कार्य चिक्षि इव। उसके बाद इकार को इयङ् आदेश होकर चिक्षियिव रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार क्षि धातु उत्तमपुरुष बहुवचन में चिक्षियिम रूप सिद्ध होता है।

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	चिक्षाय	चिक्षियतुः	चिक्षियुः
मध्यपुरुषः	चिक्षयिथ, चिक्षेय,	चिक्षियिम	चिक्षियिम
उत्तमपुरुषः	चिक्षाय,चिक्षय,	चिक्षियिव	चिक्षियिम

पाठगत प्रश्न 17.2

1. एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र का अर्थ लिखिए।
2. किस लक्षण से धातु से परे आर्धधातुक को इट् नहीं होता है?
3. ऊद्दन्तैयौति .... कारिकास्थ धातु अनुदात्ता अथवा।
4. हलन्त की कितनी धातु अनुदात्त हैं?
5. क्रादिनियम क्या है?
6. उपदेशेऽत्वतः सूत्र का अर्थ लिखिए?

7. भारद्वाज के मत में किस को इट् नहीं होता?

8. णलुत्तमो वा सूत्र से क्या किया जाता है?

9. क्षि धातु का लिट् में मित् के कितने और कौनसे रूप है?

10. चिक्षिय धातु रूप में कौन तिङ् प्रत्यय है?

1. तिप् 2. सिप् 3. थस् 4. थ

20. चिक्षाय, चिक्षय में लकार एवं तिङ् प्रत्यय कौन है?

1. लिट् सिप् 2. लुट् मिप् 3. लिट् मिप् 4. लुङ् थ

पाठ का सार

इस पाठ में लिट् लकार के कुछ मुख्य सूत्रों की समालोचना की गई है। लिट् लकार में गणीय निवारण नहीं होता है। अपना भी कोई विकरण नहीं है। धातु को द्वित्व करना इसका वैशिष्ट्य है। इसी प्रकार धातु के अभ्यास का लोप करना दूसरी विशेषता है। इट् आगम की व्यवस्था थोड़ा कठिन है। पूर्व पाठ में लिट् के रूपों को सिद्ध किया गया था। इस पाठ में तो उन सूत्रों को प्रस्तुत किया गया जिससे इट् का आगम या निषेध होता है। अभ्यास के आदि में यदि अत् हो तो उसको दीर्घ, अत आदेः सूत्र से, तथा अचोञ्णिति से अजन्त अंग को वृद्धि तथा अत उपधायाः से उपधा के अत् को वृद्धि णित् या णित् प्रत्यय परे हो तो।

इकः इसषष्ठ्यन्त पद को लेकर जहां गुण वृद्धि का विधान किया जाता है वह गुण इग्लक्षण गुण कहा जाता है और वृद्धि इग्लक्षण वृद्धि कही जाती है। क्ङिति च सूत्र से कित् गित् ङित प्रत्यय पर रहते इग्लक्षण गुण और वृद्धि का निषेध किया जाता है। अतः पाणिनी मुनि ने कहीं प्रत्ययों के स्वकीय कित्त्व, गित्त्व और ङित्त्व करते है। और कहीं अतिदेश। स्वकीय कित्त्व जैसे क्त प्रत्यय, क्तवतु प्रत्यय, यक् प्रत्यय आदि। असंयोगाल्लिट् किट् सूत्र से असंयोग से परे जो अपित् लिट् है उसको कित्त्व का विधान किया जाता है। कहीं कित्त्व या ङित्त्व के प्राप्ति के लिए जो अपित्त्व है वह हि अतिदेश है जैसे सेर्ह्यपिच्च आडुत्तमस्य पिच्च आदि। लिट् में कित्त्वातिदेश का सूत्र जैसे - सार्वधातुकमपित् यह सूत्र अपित् सार्वधातुक का ङित्त्व विधान करता है। अतः उन उन स्थलों में पाणिनी ने प्रत्यय को पित् या अपित् करता है।

धातु से तिङ् और कृत् दो प्रकार के प्रत्ययों का विधान किया जाता है। यहां दोनों प्रकार के प्रत्ययों में इट् आगम प्रसंग होता है। तिङ् और कृत् प्रत्ययों में आर्धधातुकस्येड् वलादेः सूत्र से वलादि आर्धधातुक को इट् का आगम का विधान किया जाता है। जिस धातु के एकाच् अनुदात्त होने पर उस धातु परे वलादि आर्धधातुक को इट् का आगम नहीं होता है। इस निषेधक का सूत्र है एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात्। इस सूत्र से धातु के परे तिङ् एवं कृत् प्रत्ययों में लादि आर्धधातुक को

इट् का आगम नहीं होता है। जिस धातु से परे इट् नहीं होता उस धातु को अनिट् कहा जाता है। जिस धातु परे इट् होता है उसे सेट् कहते हैं। जिस धातु से परे इट् विकल्प से होता है उसे वेट् कहते हैं।

एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से निषेध किया। लिट् लकार में क्रादि आठ धातुओं से यह निषेध प्रवृत्त होता है। अन्य धातुओं से इट् का आगम होता है। लिट् लकार को छोड़कर अन्यत्र उन धातुओं से इट् आगम नहीं होता किन्तु लिट् में होता है।

यहाँ थल् प्रत्यय विशिष्ट है। जिन धातुओं से तास् प्रत्यय का नित्य इट् नहीं होता उनमें ऋदन्तादि धातुओं को थल् से इट् नहीं होता है। अन्य अजन्त या अकारवान् धातु को विकल्प से इट् होता है। अर्थात् अजन्त अथवा अकार धातु यदि तास् प्रत्यय में अनिट् है तो थल् में वेट् होती है। ऋदन्त धातु तो तास् में अनिट् हो तो थल् भी अनिट् होता है। लिट् में थल् को छोड़कर अन्यत्र क्रादि से भिन्न सेट् होती है।

पाठांत प्रश्न

1. अचो ञ्णिति सूत्र की व्याख्या करें।
2. कुहोश्चुः सूत्र की व्याख्या करें।
3. आत, आतुः, चिक्षाय, चिक्षियतुः, चिक्षयिथ, चिक्षेथः को ससूत्र सिद्ध कीजिए।
4. एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् का वर्णन कीजिए।
5. भारद्वाजनियम का वर्णन कीजिए।
6. णलुत्तमो वा सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. चिक्षेथ, चिक्षयिथ, चिक्षाय, चिक्षय, चिक्षिय की ससूत्र व्यख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

17.1

1. अत आदेः सूत्र से।
2. अत सातत्यगमनम्।
3. अत उपधायाः।

4. द्वित्वनिमित्तक अच् को मानकर अच् के स्थान पर आदेश नहीं होता द्वित्व करना हो तो।
5. कुहोश्चुः।
6. अचो ञ्णिति।
7. असंयोगाल्लिट् कित् सूत्र से अतुस् की कित् की संज्ञा होने से।
8. अचिश्नुधातुभ्रुवां "वोरियङुवङौ सूत्र से।
9. 2

17.2

1. उपदेश में जो धातु एकाच् अनुदात्त है उससे आर्धधातुक को इट् नहीं होता।
2. उपदेश में जो धातु एकाच् अनुदात्त है उससे आर्धधातुक को इट् नहीं होता।
3. नहीं
4. 103
5. क्रादि से ही लिट् में इट् नहीं होता है अन्य अनिट् से भी इट् आगम होता है यह क्रादिनियम है।
6. उपदेश में अकारवत् तास् में नित्य अनिट् से पर थल को इट् नहीं हो।
7. भारद्वाज के मत में तास् में नित्य अनिट् ऋदन्त से थल् को इट् नहीं होता।
8. णलुत्तमो वा सूत्र से उत्तम णल् को णित्त्व अतिदेश किया जाता है।
9. क्षि धातु के लिट् में मिप् प्रत्यय से चिक्षाय एवं चिक्षय दो रूप बनते हैं।
10. 4
11. 3

18

भ्वादिप्रकरण में - लिट् लकार का सूत्रशेष

तिङन्त प्रकरण में भू धातु को प्रस्तुत करके लकारशः सूत्र उपस्थित किये गये हैं। इसमें लिट् लकार में मुख्य विषय इट् आगम व्यवस्था का पूर्वपाठ में सविस्तार वर्णन किया गया है। इस पाठ में लिट् लकार के कुछ शेष सूत्रों का समावेश किया है। कुछ धातुओं के अभ्यास लोप, अकार का एत्व होता है।

मूल धातु से दूसरे प्रत्यय का विधान करके सनाद्यन्ता धातवः सूत्र से समुदाय की धातु संज्ञा होती है। वे सन् आदि 12 (बारह) है। इस प्रकार यदि धातु अनेकाच् होती है तो लिट् में धातु से कृ भू अस् इन तीन धातुओं का अनुप्रयोग होता है। यह अनुप्रयोग ही लिट् लकार की दूसरी विशेषता है। इस प्रकार अन्य कुछ सूत्र है जो अग्रिम प्रकरण में उपस्थापित है वे भी इस पाठ में प्रस्तुत किये गये हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप-

- तिङन्त प्रकरण के लिट् लकार में मुख्य सूत्रों का जानेंगे;
- विभिन्न धातुओं को लिट् में सिद्ध कर सकेंगे;
- विविध सूत्रों की व्याख्या करने में समर्थ होंगे;
- पूर्व पाठ में कि गई सार्वधातुक, आर्धधातुक संज्ञा के रूप में प्रभाव को जानेंगे;
- भू धातु रूप को सिद्ध करके शेष बहुत से लकार में विशेषकर लिट् में प्रयुक्त सूत्रों को जानेंगे;
- रहस्यमयी इट् आगम प्रकरण को इस पाठ में जानेंगे।

18.1 अत एकहल्मध्येऽनादेशादिर्लिटि॥ (6.4.120)

सूत्रार्थ - लिट् को निमित्त मानकर जिस अंग के आदि में कोई आदेश नहीं हुआ उस अंग के, असंयुक्त हलों के मध्य में स्थित अत् के स्थान पर एकार आदेश हो जाता है और साथ ही अभ्यास का लोप भी हो जाता है कित् लिट् परे हो तो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से अभ्यास का लोप और अत् को एकार का विधान किया जाता है। इस सूत्र में चार पद हैं। अतः, एक, हल्मध्ये, अनादेशादेः, लिटि यह सूत्रगत पदच्छेद है। अतः (6/1), एकहल्मध्ये (7/1), अनादेशादेः (6/1), लिटि (7/1)। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। ध्वसोरेद्धावभ्यासलोपश्च सूत्र से एत् (1/1), अभ्यासलोपः (1/1), च अव्ययपद इन तीन पदों की अनुवृत्ति है। गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि सूत्र से किति (7/1) पद आता है। नास्ति आदेशः आदिः यस्य तद् अनादेशादि अंगम्, तस्य अनादेशादेः इति बहुब्रीहिसमासः। एकयोः हलोः मध्ये इति एकहल्मध्ये इति षष्ठीतत्पुरूष समासः। यहाँ लिटि पद् की आवृत्ति होती है। पदयोजना होती है-लिटि अनादेशादेः अंगस्य एकहल्मध्ये अतः, एत् अभ्यासलोपः च किति लिटि। सूत्रार्थ होता है - लिट् को मानकर जिसके आदि में कोई आदेश न हुआ हो ऐसे अंग के अवयव, असंयुक्त हलों के मध्य में रहने वाले अत् के स्थान पर एकार आदेश हो जाता है तथा अभ्यास का लोप भी हो जाता है, कित् लिट् परे हो तो।

अभ्यास का लोप और अकार को एकार ये दो कार्य इस सूत्र से होते हैं। अंग के अत् से पूर्व अथवा परे यदि संयोग न हो तो उस अत् को एत् होता है। लिट् को निमित्त करके अंग को आदेश न हो। लिट् परे रहते जो कार्य होते हैं उनमें हलादि शेष यहां गणनीय है। इसी प्रकार अभ्यासे चर्च से यदि आदेश में होने पर भी विरूप नहीं होता है तो वह आदेश नहीं गणनीय है। जैसे तप् धातु से अभ्यास में तप् तप् स्थिति में अभ्यासे चर्च से तकार को तकार ही करता है। अतः उससे वैरूप्य नहीं होता है। अतः इस प्रकार का आदेश, आदेश नहीं है।

उदाहरण - नेदतुः। नेदुः।

सूत्रार्थ समन्वय - णद अव्यक्ते शब्दे धातु में णोपदेश धातु को धात्वादेः णो नः सूत्र से नकार होकर नद् होता है। उसके बाद लिट् में तिप्, तिप् के स्थान पर णल् तथा अनुबन्ध लोप होकर नद्+अ स्थिति में धातु को द्वित्व तथा अभ्यास कार्य होकर न+नद्+अ स्थिति में अत उपधायाः से उपधा को वृद्धि होकर **ननाद** रूप सिद्ध होता है।

लिट् लकार में प्रथमपुरूष द्विवचन के तस् प्रत्यय के स्थान परे अतुस् होकर नद्+अतुस् स्थिति बनती है। द्वित्व होकर नद्+नद्+अतुस् स्थिति में अभ्यास संज्ञा और हलादि शेष होकर न+नद्+अतुस् यहां लिट् के निमित्त कोई आदेश नहीं है। अनभ्यास के नद् को अत् असंयुक्तहल्मध्यस्थ है। अर्थात् अत् से पूर्व एवं परे में संयोग नहीं है। अतः प्रकृत सूत्र से अभ्यास लोप एवं अत् का एकार होकर नेद्+अतुस् तथा सकार को विसर्ग होकर **नेदतुः** रूप सिद्ध होता है। अन्य रूप इसी प्रकार बनेंगे।

इसी प्रकार पठ् से पठेतुः, चर् से चेरतुः, चल् से चेलतुः, तप् से तेपतुः, तन् से तेनतुः, पत् से पेततुः, नद् से नेदतुः, नम् से नेमतुः, एवं जप् से जेपतुः रूप बनता है। अन्य रूप इसी प्रकार बनेंगे।

टिप्पणियाँ

18.2 थलि च सेटि॥ (6.4.121)

सूत्रार्थ - सेट् थल् परे होने पर लिट् निमित्तिक आदेश नहीं होता है उस अंग के अवयव को असंयुक्तहल्मध्यस्थ अत् को एकार एवं अभ्यास लोप हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से एकार एवं अभ्यास लोप होता है इस सूत्र में तीन पद है। थलि (7/1), च अव्ययपद, सेटि (7/1)। अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि सूत्र से अतः (6/1) एकहल्मध्ये (7/1) अनादेशादेः (6/1) लिटि (7/1) पदों की अनुवृत्ति है। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। ध्वसोरेद्धावभ्यासलोपश्च सूत्र से एत् (1/1), अभ्यासलोपः (1/1), च अव्ययपद इन तीनों पदों की अनुवृत्ति होती है। इटा सह वर्तते स सेट् तस्मिन् सेटि। नास्ति आदेशः आदिः यस्य तद् अनादेशादि अंगम्, तस्य अनादेशादेः इति बहुव्रीहिसमासः। एकयोः हलोः मध्ये इति एकहल्मध्ये इति षष्ठीपुरूष समासः। पदयोजना - लिटि अनादेशादेः अगंस्य एकहल्मध्ये अतः एत् अभ्यासलोपः च सेटि थलि। सूत्रार्थ होता है - लिट् को मानकर जिस के आदि में कोई आदेश नहीं हुआ ऐसा जो अंग, उस के अवयव असंयुक्त हलों के मध्य में स्थित अत् के स्थान पर एकार आदेश और अभ्यास का लोप हो जाता है यदि इट् सहित थल् परे हो तो। थल् कित् नहीं अतः पूर्वसूत्र से एत्व तथा अभ्यासलोप प्राप्त नहीं होता। इसलिए यह सूत्र बनाना पड़ा।

उदाहरण - नेदिथ

सूत्रार्थ समन्वय - इस प्रकार पूर्वोक्त सूत्र से नद् धातु से लिट् में सिप् प्रत्यय उसके स्थान पर थल् को इट् आगम होकर द्वित्व एवं अभ्यास कार्य होकर न+नद्+इथ स्थिति में इस सूत्र में अत् को ए एवं अभ्यासलोप होकर नेद्+इथ **नेदिथ** रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 18.1

1. नेद रूप में एकार किस सूत्र से होता है?
2. नेदिथ रूप में एकार किस सूत्र से होता है?
3. थलि च सेटि सूत्र का अर्थ लिखिए।
4. नेदिथ में कौनसा लकार एवं तिङ् है।

   1. लिट् थस् 2. लट् थ 3. लिट् सिप् 4. लट् थस्।

18.3 गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः॥ (3.1.28)

सूत्रार्थ - गुप्, धूप्, विच्छ्, पण् और पन धातुओं से स्वार्थ मे आय प्रत्यय हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से आय प्रत्यय होता है। इस सूत्र में दो पद है। गुपधूपविच्छिपणिपनिभ्यः (5/3), आयः (1/1)। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमाभिहारे यङ् सूत्र

से धातोः यह पद आता है। उसका पंचमीबहुवचनान्त से विपरिणाम होता है। प्रत्ययः (3.1.1) और परश्च (3.1.2) का अधिकार है। गुपूः च धूपः च विच्छिः च पणिः च पनिःच इति गुपूधूपविच्छिपणि पनयः। तेभ्यः गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्यः इति इतरेतरयोग द्वन्द्वसमासः। यह सूत्र प्रत्यय के अधिकार में पढ़ा गया है उससे आय प्रत्यय होता है। पदयोजना - गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्यः धातुभ्यः आयः प्रत्ययः परः। सूत्रार्थ होता है - गुप्, धूप्, विच्छ् पण् एवं पन् इन धातुओं से परे आय प्रत्यय होता है। आय प्रत्यय अदन्त है। धातु से विहित तिङ् भिन्न और शित् भिन्न है। अतः आर्धधातुकं शेषः से उसकी आर्धधातुक संज्ञा होती है।

इस प्रत्यय का कोई अर्थ निर्दिष्ट नहीं है। अतः यह अनिदिर्ष्टार्थ प्रत्यय है। जिन प्रत्ययों के अर्थ का निर्देश नहीं किया जाता वे प्रत्यय स्वार्थ में होते हैं। उससे आय प्रत्यय स्वार्थ है। यह गुप् धातु से आय विहित उसकी प्रकृति गुप् धातु ही हो, जो अर्थ गुप् धातु का उसी अर्थ में आय प्रत्यय होता है।

सूत्र में गुपू रक्षणे - गोपायति (भ्वादिग, प.प.) धूप सन्तापे- धूपायति (भ्वादिगण, प.प.), विच्छ गतौ- विच्छायति (तुदा. प.प.) पण व्यवहारे स्तुतौ च (भ्वादिगण, आ.प.) यहां स्तुति अर्थक ही ग्राह्य है, पन स्तुतौ (भ्वादिगण, आ.प.) पणायते।

उदाहरण - गोपायति

सूत्रार्थसमन्वय- गुपू रक्षणे रक्षणार्थक ऊदित गुप् धातु से गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः सूत्र से आय प्रत्यय होकर गुप्+आय। आर्धधातुकं शेषः से आय की आर्धधातुक संज्ञा होने से पुगन्तलघूपधस्य च सूत्र से गकारोत्तर उकार को गुण ओकार होकर गोप्+आय=गोपाय शब्द बनता है। आय प्रत्यय सन् आदि है अतः सनाद्यन्ता धातवः सूत्र से समुदाय की धातु संज्ञा होती है।

उसके बाद वर्तमाने लट् से लट्, तिप्, शप् आदि होकर गोपाय+अ+ति अतोगुणे से पररूप होकर गोपायति रूप सिद्ध होता है। अन्यरूप भी इसी प्रकार सिद्ध होते है कोई विशेष कार्य नहीं होता।

गुप् धातु से लट् में रूप- गोपायति, गोपायतः, गोपायन्ति। गोपायसि, गोपायथः, गोपायथ। गोपायामि, गोपायावः, गोपायामः।

18.4 आयादय आर्धधातुके वा॥ (3.1.31)

सूत्रार्थ - आर्धधातुक प्रत्यय कहने की इच्छा हो तो आय आदि प्रत्यय विकल्प से हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से विकल्प से आय प्रत्यय होता है। इस सूत्र में तीन पद है। आयादयः (1/3), आर्धधातुके (7/1), वा अव्ययपद। आयः आदिः येषां ते आयादयः इति बहुव्रीहिसमासः। आय, ईयङ्, णिच् ये तीन आयादि है। यह सूत्र प्रत्यय के अधिकार में पठित है। अतः प्रत्यय पद आता है। प्रत्यये इस सप्तम्यन्त से विपरिणमत है। सूत्रार्थ होता है - आर्धधातुक प्रत्यय की विवक्षा में आयादि प्रत्यय विकल्प से होते है।

टिप्पणियाँ

आय विधान से पूर्व आर्धधातुक का विधान नहीं होता है। आर्धधातुक के बिना आर्धधातुक परे आय विधान को कहना व्याघात है। अतः यहां आर्धधातुके यह परसप्तमी न होकर विषयसप्तमी है। उससे आगे आर्धधातुक विधेय यह विवक्षा हो तो आयादि विकल्प से होते हैं।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय -गुप् धातु से अनद्यतन भूत परोक्ष वृत्ति की विवक्षा में परोक्षे लिट् से लिट्, लिट् च सूत्र से लिट् आदेश तिङ् आर्धधातुक संज्ञक है। अतः गुप् धातु से आर्धधातुक विधान की विवक्षा है। अतः आयादय आर्धधातुके वा सूत्र से विकल्प में आय प्रत्यय होकर गुप्+आय यहां आय की आर्धधातुक संज्ञा तथा पुगन्तलघूपधस्य च से गकारोत्तर उकार को गुण ओ होकर गोपाय बनता है। सनाद्यन्ता द्यातवः से धातु संज्ञा, इसके बाद परोक्षे लिट् से गोपाय धातु से लिट् प्रत्यय होकर गोपाय+लिट् स्थिति बनती है। तब -

कास्यनेकाच् आम् वक्तव्यः ॥ (वार्तिक)

वार्तिकार्थ - लिट् परे हो तो कास् धातु तथा अनेकाच् धातु को आम् प्रत्यय होता है।

वार्तिक व्याख्या - इस वार्तिक से कास् धातु तथा अनेकाच् धातु से परे आम् प्रत्यय का विधान होता है यदि लिट् परे हो तो। आम् मान्त है। यदि हलन्त्यम् से मकार की इत्सज्ञा होती है तो मिदचोऽन्त्यात् परः से अन्त्य अच् कास् का आ परे होकर का+आ+स् तथा सवर्ण दीर्घ होकर कास् स्थिति बनती है। जिससे आम् विधान का कोई लाभ नहीं हुआ। अतः कहा जाता है कि आम् के म् की इत्संज्ञा नहीं होती। उसमें मिद्चोडन्त्यात् परः परिभाषा भी प्रवृत्त नहीं होती। जैसा कि उक्ति से कहा है - लिटि आस्कासोराम्विधानान्मस्य नेत्त्यम्।

उदाहरण - पूर्वोक्त सूत्र से गोपाय+लिट् स्थिति में गोपाय अनेकाच् धातु से लिट् है अतः प्रकृत वार्तिक से आम् प्रत्यय होकर गोपाय+आम्+लिट् स्थिति बनती है। तब -

18.5 अतो लोपः॥ (6.4.48)

सूत्रार्थ - आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर, आर्धधातुक प्रत्यय के उपदेश के समय जो अदन्त अंग उसके अन्त्य अत् का लोप हो जाता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र से अत् के लोप का विधान किया गया है। इस सूत्र में दो पद है। अतः (6/1), लोपः (1/1)। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादी नामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति सूत्र से उपदेश पद की अनुवृत्ति करके उसका सप्तम्यन्त से विपरिणाम किया जाता है। आर्धधातुके (7/1) का अधिकार है। उसकी दो बार आवृत्ति कि गई है। सूत्रार्थ होता है - जब आर्धधातुक का उपदेश किया जाता है अर्थात् विधान किया जाता है तब अदन्त अंग का लोप होता है यदि अंग से पर आर्धधातुक हो। अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से अन्त्य अंग के अत् का लोप होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त सूत्रों से गोपाय+आम्+लिट् स्थिति में आम् आर्धधातुक की उपदेश करते हुए विधान किया गया है। तब गोपाय अदन्त अंग है। उस अदन्त अंग से परे

लिट् आर्धधातुक है। अतः अतो लोपः सूत्र से अन्त्य अंग अल् अत् का लोप होकर गोपाय्+आम्+लिट् स्थिति बनती है। उसके बाद गोपायाम्+लिट् प्राप्त होता है।

(अत् का लोप करने या न करने पर गोपायाम् रूप प्राप्त होता है। अतः यहां अत् के लोप फल स्पष्ट नहीं है अन्य उदाहरण में फल होता है।)

18.6 आमः॥ (2.8.81)

सूत्रार्थ - आम् से परे का लुक् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र से आम् से लुक् का विधान होता है। इस सूत्र में आमः (5/1) एक पद है। ण्यक्षत्रियार्षितो यूनि लुगणिोः सूत्र से लुक् इस प्रथमान्त की अनुवृत्ति है। सूत्रार्थ होता है - आम् से परे का लुक् होता है। प्रत्ययस्य लुक् श्लु लुपः से प्रत्यय के अदर्शन की लुक् संज्ञा होती है।

उदाहरण - गोपायाम्

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्रों से गोपायाम्+लिट् स्थिति में प्रकृतसूत्र आमः से परे लिट् का लुक् होकर गोपायाम् प्राप्त होता है। लिट् कृदतिङ् से कृत् संज्ञक है। गोपायाम् इससे लिट् के लोप में प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् सूत्र से प्रत्यय लक्षण करके गोपायाम् यह कृदन्त रूप है। उसकी कृत्तद्धितसमासाश्च से प्रतिपादिक संज्ञा उसके बाद स्वौजस.कृ सूत्र से सुप् उत्पत्ति में गोपायाम् सु स्थिति में आमः सूत्र से सु का लोप होकर गोपायाम् शेष रहता है और इसका पुनः प्रत्ययलक्षण करके सुबन्त होने पर सुप्तिङन्तं पदम् से पदसंज्ञा सिद्ध होती है। गोपायाम् इस अवस्था में-

18.7 कृञ् चानुप्रयुज्यते लिटि॥ (3.1.40)

सूत्रार्थ - आमन्त से परे लिट् परक कृञ्, भू, अस् धातुओं का अनुप्रयोग किया जाता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र से कृ, भू, अस् धातुओं का अनुप्रयोग किया जाता है। इस सूत्र में चाद पद हैं। कृञ् (1/1), च अव्ययपद, अनुप्रयुज्यते (तिङन्तपद) और लिटि (7/1)। कास्प्रत्ययाद् आम् अमन्त्रे लिटि सूत्र से आम् (1/1) पद की अनुवृत्ति है। आम का पंचम्यन्तता से विपरिणाम होता है। पदयोजना-आमः कृञ् च अनुप्रयुज्यते लिटि। आमः प्रत्ययत्वात् प्रत्ययग्रहणे तदन्ता ग्राह्य परिभाषा से आमन्तात् प्राप्त होता है। कृञ् प्रत्याहार है। अष्टाध्यायी में कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यर्त्तरि च्विः सूत्र में स्थित कृ, से लेकर कृञो द्वितीयतृतीयशम्बजीवात् कृषौ सूत्र में स्थिति ञकार से कृञ् प्रत्याहार होता है। कृञ् प्रत्याहार में कृञ्, भू, अस् ये तीन धातु हैं। सूत्रार्थ होता है - आमन्त से परे लिट् परक कृञ्, लिट्परक भू तथा लिट्परक अस् धातुओं का अनुप्रयोग होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व गोपायाम् स्थिति में गोपायाम् आमन्त शब्द से इस सूत्र द्वारा लिट् परक कृञ् अनुप्रयुक्त हो तो गोपायाम्+कृ+लिट् स्थिति बनती है। गोपायाम् शब्द से लिट् का

टिप्पणियाँ

लुक् हो गया था। अब पुनः कृ धातु से परे लिट् का आगम। प्रथम पुरूष एकवचन की विवक्षा में लिट् के स्थान पर तिप् उसको णल् होकर गोपायाम्+कृ+अ स्थिति तथा धातु को द्वित्व होकर गोपायाम्+कृ+कृ+अ स्थिति है। तब–

18.8 उरत्॥ (7.4.66)

सूत्रार्थ - प्रत्यय परे होने पर अभ्यास के ऋकार के स्थान पर अत् आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र से अभ्यास के ऋकार को अत् किया जाता है। इस सूत्र से दो पद हैं। उः (6/1) (ऋकार की षष्ठी), अत् (1/1)। लोपोऽभ्यासस्य सूत्र से अभ्यासस्य (6/1) पद आता है। यहां अंगस्य का अधिकार है। प्रत्यय परे होने पर अंग संज्ञा उत्पन्न होती है। प्रत्यये से सप्तम्यन्त पद का आक्षेप किया। इसे अंगाक्षिप्त कहा जाता है। पदयोजना - अंगस्य अभ्यासस्य उः अत् प्रत्यये। सूत्रार्थ होता है - प्रत्यय परे होने पर अभ्यास के ऋकार के स्थान पर अत् (ह्रस्व अ) होता है। ऋकार के स्थान पर उरण्परपरः सूत्र से रपर होता है। अतः अर् आदेश होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय -पूर्व में गोपायाम्+कृ+कृ+अ स्थिति में यहां णल् प्रत्यय परे होने पर कृ अभ्यास के ऋकार के स्थान पर अत् तथा उरण्परपरः से रपर अर् तथा हलादि शेषः होकर गोपायाम्+क+कृ+अ स्थिति बनी। यहां अभ्यास के ककार को कुहोश्चुः सूत्र से ककार को चकार करके गोपायाम्+च+ कृ+अ। णल् णित् होने से अचोर्णिति सूत्र से कृ के; को वृद्धि आर् होकर गोपायाम्+च+कार्+अ तथा मोऽनुस्वारः सूत्र में मकार को अनुस्वार होकर **गोपायांचकार** तथा अनुस्वार को विकल्प से पदसवर्ण होकर **गोपायाञ्चकार** रूप सिद्ध होता है।

गोपायांचक्रतुः- लिट् प्रथमपुरुष द्विवचन की विवक्षा में पूर्ववत् गोपायाम् कष्ट अतुस् स्थिति में द्वित्व का बाधकर इको यणचि से यण् प्राप्त किन्तु द्विवचनेऽचि से निषेध उसके बाद द्वित्व व अभ्यासकार्य होकर गोपायाम् चकष्ट अतुस्। इस स्थिति में इको यणचि से यण्, सकार को रुत्व विसर्ग गोपायाम् चक्रतुः तथा मोऽनुस्वारः सूत्र में मकार को अनुस्वार होकर **गोपायांचक्रतुः** तथा अनुस्वार को विकल्प से पदसवर्ण होकर **गोपायाञ्चक्रतुः** रूप सिद्ध होता है।

गोपायांचक्रतुः- लिट् प्रथमपुरुष बहुवचन की विवक्षा में पूर्ववत् प्रक्रिया से **गोपायांचक्रुः**, **गोपायाञ्चक्रुः** रूप सिद्ध होते हैं।

गोपायांचक्रर्थः :- लिट् मध्यमपुरुष एकवचन की विवक्षा में पूर्ववत् गोपायाम् कष्ट थ। स्थिति में आर्धधातुकस्येड् वलादेः से थल् को इट् का आगम प्राप्त एकाच् उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से निषेध। उसके बाद द्वित्व व अभ्यासकार्य होकर गोपायाम् चकष्ट थ । सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त को गुण एवं उरण्परपरः से रपर होकर गोपायाम् चकर्थ तथा मोऽनुस्वारः सूत्र में मकार को अनुस्वार होकर **गोपायांचक्रर्थः** तथा अनुस्वार को विकल्प से पदसवर्ण होकर **गोपायाचक्रर्थः** रूप सिद्ध होता है।

गोपायांचक्रथुः- लिट् मध्यमपुरुष द्विवचन की विवक्षा में पूर्ववत् गोपायाम् कष्ट अथुस् स्थिति में द्वित्व व अभ्यासकार्य होकर गोपायाम् चकष्ट अथुस्। इस स्थिति में इको यणचि से यण्, सकार को रुत्व विसर्ग गोपायाम् चक्रथुः तथा मोऽनुस्वारः सूत्र में मकार को अनुस्वार होकर **गोपायांचक्रथुः** तथा अनुस्वार को विकल्प से पदसवर्ण होकर **गोपायाचक्रथुः** रूप सिद्ध होता है।

गोपायांचक्र- लिट् मध्यमपुरुष बहुवचन की विवक्षा में अ प्रत्यय में पूर्ववत् प्रक्रिया से **गोपायांचक्र, गोपायाञ्चक्र** रूप सिद्ध होते हैं।

गोपायांचकार- लिट् उत्तमपुरुष एकवचन की विवक्षा में मिप् का णल् में पूर्ववत् प्रक्रिया से गोपायाम् कष्ट अ स्थिति में णलुत्तमो वा सूत्र से विकल्प में णित् होने से अचो ञ्णिति से वृद्धि आर् होकर **गोपायांचकार** तथा णित् अभाव में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इगन्त को गुण होकर **गोपायांचकार** रूप सिद्ध होता है।

गोपायांचकष्टव, गोपायांचकष्टम - लिट् उत्तमपुरुष द्विवचन व बहुवचन में पूर्ववत् प्रक्रिया से गोपायाम् कष्ट व स्थिति में असंयोगाल्लिट् कित् से द्विवचन व बहुवचन में गुण निषेध होकर **गोपायांचकष्टव, गोपायांचकष्टम** रूप सिद्ध होता है।

अस् धातु से अनुप्रयोग- अस् धातु से अनुप्रयोग में गोपायाम् अस् अ स्थिति में द्वित्व एवं हलादि शेषे से गोपायाम् अ अस् अ स्थिति बनती है। इस स्थिति में अत आदेः से आदि अत् को दीर्घ होकर गोपायाम् आ अस् अ तथा अकः सवर्णे दीर्घः से दीर्घ होकर **गोपायामास** रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार अस् धातु से अनुप्रयोग में रूप -

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	गोपायामास	गोपायामासतुः	गोपायामासुः
मध्यपुरुषः	गोपायामासिथ	गोपायामासथु	गोपायामास
उत्तमपुरुषः	गोपायामास	गोपायामासिव	गोपायामासिम

भू धातु से अनुप्रयोग में रूप -

	एकवचनम्	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमपुरुषः	गोपायांबभूव, गोपायाम्बभूव	गोपायांबभूतुः, गोपायाम्बभूतुः	गोपायांबभूवुः, गोपायाम्बभूवुः
मध्यपुरुषः	गोपायांबभूविथ, गोपायाम्बभूविथ	गोपायांबभूवतुः, गोपायाम्बभूवतुः	गोपायांबभूव, गोपायाम्बभूव
उत्तमपुरुषः	गोपायांबभूव, गोपायाम्बभूव	गोपायांबभूविव, गोपायाम्बभूविव	गोपायांबभूविम, गोपायाम्बभूविम

टिप्पणियाँ

आयाभावपक्ष में गुप् धातु के रूप-

जुगोप- गुप् धातु से आयादय आर्धधातुके वा सूत्र से विकल्प में आयाभावपक्ष में गुप् लिट्, तिप् को णल्। द्वित्व गुप् गुप् अ अभ्यास संज्ञा में हलादिः शेषे ,कुहोश्चुः से गकार को जकार जु गुप् अ एवं पुगन्तलघूपधस्य से लघूपधा को गुण होकर **जुगोप** रूप सिद्ध होता है। द्विवचन व बहुवचन में असंयोगाल्लिट् कित् से क्ङिति च गुण निषेध होता है अन्य रूपों में पूर्ववत् कार्य होते है।द्विवचन में **जुगुपतुः** व बहुवचन में **जुगुपुः** रूप सिद्ध होते हैं।

गुप् धातु से मध्यमपुरुष एकवचन की विवक्षा में लिट् में सिप्, सिप् को थल्, स्थिति में आर्धधातुकस्येड् वलादेः से थल् को इट् का आगम प्राप्त। गुप् धातु अननुदात्त होने से इट् आगम का निषेध नहीं होता । तब-

18.9 स्वरतिसूतिसूयतिधूदितो वा॥ (7.2.44)

सूत्रार्थ - स्वरति आदि और ऊदित धातुओं से परे वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र से विकल्प से इट् का विधान होता है। इस सूत्र में दो पद है। स्वरतिसूतिसूगतिधूञूदितः (5/1), वा अव्ययपद। आर्धधातुकस्येड् वलादेः समग्र सूत्र की अनुवृत्ति है। ऊत् इति यस्य स ऊदित्। स्वरतिः च सूतिः च सूयतिः च धुञ् च ऊदित च इति स्वरतिसूतिसूयतिधूदित् इति समाहारद्वन्द्वसमासः। तस्मात् स्वरतिसूतिसूयतिधूदितः। सूत्रार्थ होता है - स्वरति, सूति, सूयति, धू और ऊदित् धातुओं से परे वलादि आर्धधातुक को विकल्प से इट् का आगम होता है।

स्वरति-स्वृ ष्टाब्दोपतापयोः (भ्वादि, प.प.)। सूति-षूङ् प्राणिगर्भनिमोचने (अदा, आ.प.)। सूयति-षूङ् प्राणिप्रसवे (दिवा. आ.प.)। धूञ्-धूञ् (कम्पने) (स्वादि-क्यादि उ.प.)। ऊदित-गुपूँ गाहूँ, आदि धातुओं का ग्रहण होता है।

उदाहरण - जुगोपिथ। जुगोप्थ।

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व सूत्रों के अनुसार लिट् में गुप्+थ स्थित में आर्धधातुकस्येड् वलादेः से थल् को इट् का आगम प्राप्त तथा इस सूत्र से विकल्प से इट् आगम होकर, इट् आगम पक्ष में गुप्+इ+थ द्वित्व, अभ्यास कार्य में जुगुप्+इथ तथा लघूपधा गुण करके जुगोपिथ रूप सिद्ध होता है। इट् अभाव पक्ष में गुप्+थ स्थिति में द्वित्व, अभ्यासकार्य तथा लघु उपधा को गुण करके जुगोप्थ रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार अन्य रूप समझने चाहिए।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरूष	जुगोप	जुगुपतुः	जुगुपुः
मध्यम पुरूष	जुगोपिथ/जुगोप्थ	जुगुपथुः	जुगुप
उत्तम पुरूष	जुगोप	जुगुपिव/जुगुप्व	जुगुपिम/जुगुप्म

पाठगत प्रश्न 18.2

5. गोपायति रूप में आय प्रत्यय किस सूत्र से आया?
6. गोपायति रूप में सनाद्यन्त धातु कौन है?
7. गोपायति रूप में भूवादयो धातुव से धातु संज्ञा किसकी होती है?
8. आय आदि का विकल्प कहाँ होता है?
9. कास्यनेकाच आम् वक्तव्यः से आम् की इत्संज्ञा है या नहीं।
10. गोपायाम् में गाम् किससे होता है?
11. अतो लोप सूत्र की वृत्ति लिखिए।
12. कृञ् का अनुप्रयोग किस सूत्र से होता है?
13. गोपायाम्बभूव यहाँ भू धातु का अनुप्रयोग किस सूत्र में हुआ?
14. गुप् धातु लिट् लकार का रूप नहीं है।

    1. जुगोपिथ 2. जुगुप्थ 3. जुगुप्म 4. जुगोप्थ

15. गुप् धातु लिट् लकार का रूप नहीं है।

    1. जुगोपिम 2. जुगुप्व 3. जुगुप्म 4. जुगुपिम

18.10 आदेच उपदेशेऽशिति॥ (6.1.45)

सूत्रार्थ - उपदेश में एजन्त धातु के अन्त्य अल् के स्थान पर आकार आदेश होता है परन्तु शित् प्रत्यय का विषय हो तो नहीं होता।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र आत् का विधान होता है। इस सूत्र में चार पद है। आत् (1/1), एचः (6/1), उपदेशे (7/1), अशिति (7/1)। लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से धातोः (1/1) पद आता है। ष्ट् इत् शित् इति कर्मधारम समासः। न शित् अशित्, तस्मिन् अशिति इति नञ् तत्पुरूषः समासः। यहां प्रसज्य प्रतिषेध है। उससे शित् में नहीं प्राप्त होता है। धातोः से प्रत्यय में आक्षिप्त किया है। शित् प्रत्यय में नहीं इस विधि से इत्संज्ञक ष्टाकारदि प्रत्यय परे न हो यह अर्थ प्राप्त होता है। आत् से परे करण है। केवल आ टाप् है। एचः धातोः से एच् धातु का विशेषण है। अत तदन्त विधि से एजन्त धातु यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है। उपदेश में जो एजन्त धातु है, उसके स्थान पर आत् (आकार) आदेश होता है। परन्तु शित् का विषय हो तो नहीं होता। अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से यह आदेश एजन्त धातु के अन्त्य अत् के स्थान पर होता है।

टिप्पणियाँ

उदाहरण - ग्लायति।

सूत्रार्थ समन्वय - ग्लै हर्षक्षये धातु से लिट्, लिट् के स्थान पर तिप्, टाप् आगम, शित् होने से यह सूत्र प्रवृत्त नहीं होता। उसके बाद ग्लै+अ+ति स्थिति में अयादि आदेश होकर ग्ल्+आय्+अ+ति=ग्लायति रूप सिद्ध होता है।

ग्लै धातु से लिट्, तिप् के स्थान पर गल् होकर ग्लै+अ स्थिति में यहां शित् न होने से प्रकृत सूत्र से ऐकार को आ होकर ग्ला+अ रूप बनता है, द्वित्व-ग्ला-ग्ला+अ-अभ्यास कार्य हलादि टोप्- ज ग्ला+अ स्थिति होती है। तब

18.11 आत औ णलः॥ (7.1.34)

सूत्रार्थ - आकारान्त धातु से परे णल् के स्थान पर औकार आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से औकार आदेश का विधान किया जाता है। इस सूत्र में तीन पद है। आतः (5/1), औ (1/1), णलः (6/1)। अंगस्य का अधिकार आता है। अंगात् से पंचम्यन्त से विपरिणमत है। आतः अंगात् से आत् अंग का विशेषण है।अतः तदन्त विधि से आदन्त अंग अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - आदन्त अंग से परे णल् के स्थान पर औकार आदेश होता है। णल् परे होने पर आदन्त अंग धातु ही हो सकता है। अतः आदन्ताद् धातोः कह सकते है।

उदाहरण - जग्लौ

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त सूत्रों से जग्ला+अ स्थिति में आदन्त धातु ग्ला है। अतः प्रकृत सूत्र से णल् को आकार आदेश होकर जग्ला+औ तथा वृद्धिरेचि से वृद्धि होकर जग्लौ रूप सिद्ध होता है।

18.12 गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि॥ (6.4.98)

सूत्रार्थ - गम्, हन्, जन्, खन् और घस् इन पाँच धातुओं की उपधा का लोप हो जाता है अङ् से भिन्न अजादि कित् ङित् प्रत्यय परे हो तो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र से उपधा लोप होता है। इस सूत्र में चार पद है। गमहनजनखनघसाम् (6/3), लोपः (1/1), क्ङिति (7/1), अनङि (7/1)। अचिष्टश्नुधातुभ्रुवां वोरियङुवङौ सूत्र से अचि (1/1) पद की अनुवृत्ति है। ऊदुपधाया गोह सूत्र से उपाधायाः (6/1) पद आता है। अंगस्य का अधिकार है। इससे अंगाक्षिप्तं प्रत्यय पद प्राप्त होता है। क् च् ङ च क्ङौ। क्ङौ इतौ यस्य स क्ङित्, तस्मिन् क्ङिति इति द्वन्द्वगर्भबहुव्रीहिसमासः। गमः च हनः च जनः च खनः च घस् च इति गमहनजनखनघसः तेषा गमहनजनखनघसाम् इति इतरेतयोगद्वन्द्वसमासः। गमादि में अकार उच्चाराणार्थ है। सूत्रार्थ होता है -गम् हन् जन् खन् घस् इन की उपधा का लोप होता है अजादि अङ् प्रत्यय भिन्न कित् ङित् प्रत्यय परे हो तो।

उदाहरण - जग्मतुः।

सूत्रार्थ समन्वय - गम्लृष्ट गतौ धातु से लिट् को तिप्, तिप् को णल् होकर गम्+अ स्थिति में द्वित्व अभ्यास कार्य होकर जगम्+अ स्थिति में उपधा वृद्धि होकर **जगाम** रूप सिद्ध होता है।

गम् धातु से लिट्, लिट् को तस्, तस् को अतुस् होकर गम्+अतुस्, द्वित्व, अभ्यास आदि कार्य होकर जगम्+अतुस्। यहां अतुस् अपित् होने से असंयोगात् लिट् कित् से कित् होता है। अङ भिन्न अजादि अतुस् प्रत्यय है। अतः प्रकृत सूत्र से उपधा लोप तथा स् को विसर्ग होकर **जग्मतुः** रूप सिद्ध होता है।

पाठगत प्रश्न 18.3

1. ग्लापति में धातु क्या है?
2. जग्लौ में औकार कैसे हुआ?
3. जग्मतुः में उपधा लोप किस सूत्र से है?
4. गम् धातु से लिट् में तस् में क्या रूप होता है?

पाठ का सार

इस पाठ में लिट् लकार को कुछ सूत्र उपस्थित किये है। उसमें अभ्यास लोप, अकार को एत्व आदि कार्यों के सूत्र दिये गये। अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि सूत्र से कित् लिट् प्रवृत्त होता है थल् के कित्वाभाव से यह प्रवृत्त नहीं होता। पाणिनी मुनि ने अत् से थल् में इट् का विधान सूत्रों से किया है।

गुपूधूपविच्छिपणिनिभ्यः आयः सूत्र से गुप् आदि धातु से स्वार्थ में आय प्रत्यय का विधान है। उस से नवीन शब्द स्वरूप निष्पन्न होते हैं। उसकी सनाद्यन्ता धातवः से धातु संज्ञा होती है। उसके बाद धातु संज्ञा आश्रित कार्यकलित होते हैं। जो धातु अनेकाच् होती है उससे आम् प्रत्यय कास्यनेकाच आम् वक्तव्यः सूत्र से होता है। आम् मित् नहीं है। इससे आमन्त होने से कृञ् चानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र से कृ भू एवं अस् का अनुप्रयोग किया जाता है। उससे गोपायो्चकार, गोपायामास गोपायाम्बभूव आदि रूप सिद्ध होते हैं।

आर्धधातुक को विकल्प से इट् विधायक सूत्र स्वरतिसूतिसूयतिधृदितो वा है। उपदेश में जो धातु एजन्त है उस के एच् को आकार होता है यदि शित् प्रत्यय पर नहीं हो। गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि सूत्र से अजादि में अङ् भिन्न कित् ङित् प्रत्यय परे गम् हन् जन् खन् घस् के उपधा का लोप होता है।

पाठांत प्रश्न

1. अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. नदेतुः तेदुः, नेदिथ, नेदिम को ससूत्र रूप सिद्ध कीजिए।
3. कष्टञ् चानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4. कास्यनेकाच आम् वक्तव्यः सूत्र की व्याख्या कीजिए।
5. गोपायति, गोपायामि, गोपायाञ्चकार, गोपायाम्बभूव, गोपायामास, जुगोप, जुगुपुः, जुगोपिथ को ससूत्र रूप सिद्ध कीजिए।
6. आदेच उपदेशेऽशिति सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. जग्लौ जग्मतुः जगम जगाम को ससूत्र रूप सिद्ध कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

18.1

1 अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि।

2 थलि च सेटि।

3 लिट् को निमित्त मानकर जिस अंग के आदि में कोई आदेश नहीं हुआ उस अंग के, असंयुक्त हलों के मध्य में स्थित अत् के स्थान पर एकार आदेश हो जाता है और साथ ही अभ्यास का लोप भी हो जाता है कित् लिट् परे हो तो।

4 3

18.2

1. गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः।
2. गोपाय।
3. गुपू रक्षणे।
4. आर्धधातुक की विवक्षा में विकल्प से आय होता है।
5. 5

6. कास्यनेकाच आम् वक्तव्यः।

7. आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर, आर्धधातुक प्रत्यय के उपदेश के समय जो अदन्त अंग उसके अन्त्य अत् का लोप हो जाता है।

8. कष्टञ् चानुप्रयुज्यते लिटि।

9. कष्टञ् चानुप्रयुज्यते लिटि।

10. 2

11. 1

18.3

1. ग्लै हर्षक्षये।

2. टात औ णलः सूत्र से णल् को औकार।

3. ग्महनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि।

4. जग्मतुः।

19

भ्वादिप्रकरण में - लिङ् लुङ् के सूत्रशेष

पूर्व पाठ में भू धातु को लेकर रूप सिद्ध किये गये। उसके बाद धातुक्रम को छोड़कर मुख्य प्रक्रिया के आधार पर सूत्र प्रदर्शित किये गये। इस पाठ में लिङ् लकार के उदाहरण लेकर अकृत्सार्व-धातुकयोर्दीर्घः सूत्र को उपस्थित किया गया। इसका अन्य सूत्रों में प्रयोग परिलक्षित होता है।

लुङ् लकार सर्वविधभूतकाल को प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इसमें ईट् आगम, इट् आगम, सिच् लोप आदि कुछ विशेष कार्य होते हैं। इस प्रकार लुङ् में च्लि, च्लि को सिच्, अङ् चङ् आदेश होते हैं। सिच् परस्मैपद परे हो तो वृद्धि होती है। इस पाठ में यह वृद्धि प्रकरण मुख्य रूप से उपस्थित है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप -

- तिङन्त प्रकरण के लुङ् लिङ् के सूत्रों को जानेंगे;
- लुङ् के धातुरूपों को सिद्ध करने में समर्थ होंगे;
- लुङ् लकार के सूत्रों की व्याख्या जानेंगे;
- लुङ् में वृद्धिप्रकरण के स्पष्ट ज्ञान को जानेंगे;
- वृद्धि प्रकरण में बहुत से सूत्रों में बाध्यबाधकभाव को जानेंगे;
- लुङ् लकार के रूपों का व्यवहार में प्रयोग कर सकेंगे।

लिङ्

19.1 अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः॥ (7.4.25)

सूत्रार्थ - यकार जिस के आदि में हो ऐसे प्रत्यय के परे होने पर अजन्त अंग को दीर्घ हो जाता है परन्तु कृत् और सार्वधातुक प्रत्यय में नहीं होता।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से अजन्त को दीर्घ किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। अकृत्सार्वधातुकयोः (7/2), दीर्घः (1/1)। अयङ् यि क्ङिति सूत्र से यि (7/1) पद आता है। अगंस्य (6/1) का अधिकार है। इस सूत्र में स्थानी का साक्षात् उल्लेख नहीं है। कृत् च सार्वधातुक च कृत्सार्वधातुके इति इतरेतरद्वन्द्वसमासः। न कृत्सार्वधातुके अकृत्सार्वधाके तयोः अकृत्सार्वधातुकयोः नेतत्पुरूषः समासः। प्रत्यय परे होने से ही अंग संज्ञा उत्पन्न है। प्रत्यये से सप्तम्यन्त पद का आक्षेप किया जाता है। पद योजना होती है। अचः अंगस्य दीर्घः यि प्रत्यये अकृत्सार्वधातुकयोः। अचः अंगस्य यहां अचः विशेषण है। अतः तदन्तविधि से अजन्तांगस्य अर्थ प्राप्त होता है। अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से अन्त्य अल् के स्थान पर आदेश होता है।

यि प्रत्यये ये दोनों सप्तम्यन्त पद है। अतः तदादि विधि होती है। जिससे यकारादि प्रत्यय परे हो पर अर्थ प्राप्त होता है।

सूत्रार्थ होता है - य् से शुरू होने वाला प्रत्यय परे हो तो अजन्त अंग को दीर्घ होता है। परन्तु यह दीर्घ कृत् एवं सार्वधातुक प्रत्यय परे हो तो नहीं होता।

उदाहरण - क्षीयात्।

सूत्रार्थसमन्वय - क्षयार्थक क्षि धातु से आशिषिलिङ्लोटौ सूत्र से आशीर्लिङ् में तिप् को यासुट् आगम, इतश्च से तिप् के इकार का लोप होकर क्षि+यास्+त्, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण प्राप्त किन्तु किदाशिषि से कित् होने से क्ङिति च से गुण निषेध। लिङाशिषि से तिप् की आर्धधातुक संज्ञा। यासुट् सहित तिप् प्रत्यय यास्त् प्रत्यय है और वह यकारादि भी है। अतः अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः सूत्र से षकारोत्तर इकार को दीर्घ होकर क्षी+यास्+त् तथा संयोग के सकार का लोप होकर क्षीयात् रूप सिद्ध होता है।

आशीर्लिङ् में क्षिधातु के रूप - **क्षीयात् क्षीयास्ताम्, क्षीयासुः। क्षीयाः क्षीयास्तम् क्षीयास्त। क्षीयासम्, क्षीयास्व, क्षीयास्म।**

19.2 अस्तिसिचोऽपृक्ते॥ (7.3.96)

सूत्रार्थ - विद्यमान सिच् तथा अस् धातु से परे अपृक्त हल् को ईट् का आगम होता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस से ईट् का विधान किया जाता है। इस सूत्र में दो पद है। अस्तिसिचः (5/1) अपृक्ते (7/1)। उतो वृद्धिर्लुकि हलि सूत्र से हलि (7/1) पद की अनुवृत्ति

टिप्पणियाँ

है। ब्रुव ईट् सूत्र से ईट् पद आता है। अस्तिश्च सिच् च अस्तिसिच्, तस्माद् अस्तिसिचः इति समाहारद्वन्द्वसमासः। अस्ति से इक् श्तिपौ धामुनिर्देशे से असभुवि ये अदादिगणीय धातु का निर्देश है। अपृक्त एकाल् प्रत्ययः सूत्र से एकालात्मक प्रत्यय की अपृक्त संज्ञा का विधान किया जाता है। सूत्रार्थ होता है - विद्यमान सिच् और अस् धातु से परे एकाल् प्रत्यय अपृक्त हल् को ईट् का आगम होता है। तथा ईट् टित् होने से आद्यन्तौटकितौ की परिभाषा से आदि अवयव होता है।

इस सूत्र में अस्तिसिचः पंचम्यन्त पद है अपृक्ते सप्तम्यन्त पद है। अतः पर का कार्य होगा या पूर्व का, यह अनियम हो जाता है। अनियमे नियम कारिणी अस्ति परिभाषा से उभयनिर्देश में पंचमी बलवान होती हे। अर्थात् पंचमी निर्देश होने से पर कार्य होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - अत् धात्वर्थ व्यापार के भूतकाल की विवक्षा में लुङ् सूत्र से कर्ता अर्थ में लुङ् होकर अत्+ल् तथा प्रथमपुरुष एकवचन की विवक्षा में तिप् होकर अत्+ति। उसके बाद इतश्च से ति के इकार का लोप अत्+त्। कर्त्तरिशप् से शप् आगम प्राप्त, लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय होकर अत्+च्लि+त्। च्लेः सिच् सूत्र से च्लि को सिच् होकर अत्+स्+त्। उसके बाद आडजादीनाम् से आट् का आगम, आटश्च से वृद्धि होकर आत्+स्+त् सिच् आर्धधातुक वलादि होने से इट् आगम, अनुबन्ध लोप आत्+इ+स्+त्। यहां तिप् का तकार एकाल् प्रत्यय होने से अपृक्त संज्ञक है और विद्यमान सिच् से परे है। अतः प्रकृत सूत्र से ईट् आगम तथा अनुबन्धलोप होकर आत्+इस्+ईत् स्थिति बनती है। तब-

19.3 इट ईटि॥ (8.2.28)

सूत्रार्थ - इट् से परे सकार का लोप हो यदि ईट् परे हो तो।

सूत्रव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से सकार लोप होता है। इस सूत्र में दो पद है। इटः (5/1), ईटि (7/1)। रात्सस्य सूत्र से सस्य (6/1) पद आता है। संयोगान्तस्य लोपः सूत्र से लोपः (1/1) पद की अनुवृत्ति है। सूत्रार्थ होता है - इट् से परे सकार का लोप हो यदि उससे पर ईट् हो तो। अर्थात् इट् एवं ईट् के मध्य सकार का लोप होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व में आत्+इस्+ईत् स्थिति में इट् से परे सकार है और उस से परे ईट् है अतः इस सूत्र 'इट ईटि' से सकार का लोप होकर आत्+इ+ईत् बनता है। यहां अकः सवर्णे दीर्घः से दीर्घ प्राप्त है किन्तु ईट ईटि (8/2/28) सूत्र असिद्धकाण्डीय है। क्योंकि अकः सवर्णदीर्घः सपादसप्ताध्यायीस्थ सूत्र के प्रति इट ईटि सूत्र असिद्ध है। अतः सिज्लोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः वार्तिक से एकादेश करना चाहिए यदि इट ईटि सूत्र से सिच् का लोप सिद्ध मानना चाहिए। इस प्रकार आत्+इस्+ईत् स्थिति में सवर्णदीर्घ होकर आत्+ईत् आतीत् रूप सिद्ध होता है।

आतिष्ठाम् - अत् धातु से पूर्ववत् लुङ् में प्रथमपुरूषद्विवचन की विवक्षा में तस् प्रत्यय, तस् को ताम् आदेश, शप् को च्लि, चिल का सिच्, इट् आगम तथा अंग को आट् होकर आ+अत्+ताम् = वृद्धि, आदेशप्रत्यययोः से सकार को षकार, ष्टुत्व आत्+इष्+टाम्=आतिष्टाम् रूप सिद्ध होता है।

आतिषुः - पूर्ववत् अत् धातु लुङ् में प्रथमपुरूषबहुवन में झि प्रत्यय, च्लि, च्लि को सिच्, इट् आगम, अंग को आट् आगम्, वृद्धि होकर आत्+इ+स्+सि स्थिति में -

19.4 सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च॥ (3.4.109)

सूत्रार्थ - सिच् अभ्यस्त तथा विद् धातु से परे ङित् लकार में झि को जुस् आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र से जुस् होता है। इसमें दो पद है। सिजभ्यस्तविदिभ्यः (5/1) च अव्ययपद। नित्यं ङितः सूत्र से ङितः (6/1) की अनुवृत्ति होती है। लस्य (6/1) का अधिकार है। झेर्जुस् इस सूत्र की अनुवृत्ति होती है। झेः (6/1), जुस् (1/1)। सिच् च अभ्यस्तं च विदिश्च सिजभ्यस्तविदयः, तेभ्यः सिजभ्यस्तविदिभ्यः इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। सूत्रार्थ होता है - सिच् अभ्यस्तसंज्ञक और विद् धातु से परे ङित् लकारों में झि को जुस् आदेश होता है।

विद् धातु धातु पाठ में पांच स्थलों पर विद्यमान है जैसे

विद ज्ञाने (अदादि. प.प.)	वेत्ति वित्तः विदन्ति,
विद सत्तायाम् (दिवादि. आ.प.)	विद्यते विद्येते विद्यन्ते,
विद विचारणे (रुधादि आ.प.)	विन्ते विन्दाते विन्दते,
विद्लृलाभे (तुदादि. उ.प.)	विन्दति। विदन्ते,
विद चेतनाख्यानविवासेषु (चुरादि. आ.प.)	वेदयते।

इसमें से विद ज्ञाने धातु ही ग्राह्य है।

उदाहरण - क्षीयात्।

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व में आत्+इस्+झि स्थिति में झि के स्थान पर सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च सूत्र से जुस् अनुबन्ध लोप आत्+इस्+उस्। आदेशप्रत्यययोः से सकार को षकार एवं सकार को विसर्ग होकर आातिषुः रूप सिद्ध होता है।

अत धातु के अन्यरूप स्वयं अभ्यास करे।

लुङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	आतीत्	आतीष्टाम्	आतीषुः
मध्यपुरुषः	आतीः	आतीष्टम्	आतीष्ट
उत्तमपुरुषः	आतीषम्	आतीष्व	आतीष्म

पाठगत प्रश्न 19.1

1. क्षीयात् में ईकार दीर्घ किस सूत्र से होता है?
2. अस्तिसिचोऽपृक्ते सूत्र का अर्थ लिखो?
3. इट् व ईट् के मध्य सकार का लोप किस से होता है?
4. अत् धातु से लुङ् में अत्+इस्+ईत् स्थिति में सिच् का लोप किस से होता है?
5. आतिषुः में झि को जुस् किस सूत्र से होता है?
6. क्षीयात् में कौन सा लकार है?

   1. विधिलिङ 2. लृट् 3. आशीर्लिङ 4. लट्

7. अत् धातु से लुङ् मे रूप नहीं है।

   1. आतिषुः 2. आतीत 3. आतीषुः 4. आतीः

8. विद् धातु कितनी है।

   1. 3 2. 4 3. 5 4. 6

19.5 सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु ॥ (7.2.1)

सूत्रार्थ - परस्मैपद प्रत्यय जिस से परे हो ऐसे सिच् के परे रहते इगन्त अंग के स्थान पर वृद्धि हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से वृद्धि होती है। इस सूत्र में तीन पद हैं। सिचि (7/1) वृद्धिः (1/1), परस्मैपदेषु (3/1)। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। साक्षात् स्थानी का निर्देश नहीं किन्तु वृद्धि विधेयपरे से वृद्धि पद का उच्चार्य होने से वृद्धि का विधान है। अतः इको गुणवृद्धि इस परिभाषा से इकः इस षष्ठ्यन्त पद उपस्थापित किया गया। प्रत्यय परे होने से अंग संज्ञा उत्पन्न होती है। अतः प्रत्यये सप्तम्यन्त पद का आक्षेप किया जाता है। यह अंगाक्षिप्त कहा जाता है। उसका प्रत्ययों में सप्तमीबहुवचनान्तता से विपरिणाम किया जाता है। पद योजना होती है इकः अंगस्य वृद्धिः सिचि पदस्मैपदेषु प्रत्ययेषु इति।

यहां इकः अंगस्य दोनों समान विभक्ति पद है। अंगस्य पद विशेष्य है और इकः पद उसका विशेषण है। इससे तदन्तविधि से इगन्तागंस्य अर्थ प्राप्त होता है। इगन्त अंग का अल्समुदायबोधक होने से स्थान षष्ठी सुनी जाती है। इस प्रकार वृद्धि आदेश एकाल् है। अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से इगन्त अंग अन्त्य इक् को वृद्धि होती है। उससे अर्थ होता है - परस्मैपद प्रत्यय जिस से परे हो ऐसे सिच् के परे रहते इगन्त अंग के स्थान पर वृद्धि होती है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - क्षयार्थक क्षि धातु से लिङ् में तिप्, अनुबन्ध लोप, इतश्च से इकार लोप, च्लि प्रत्यय तथा च्लि को सिच् होकर क्षि+स्+त् स्थिति में लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात: सूत्र से अंग को अट् आगम, आर्धधातुकस्येड्वलादे: सूत्र से सिच् को इट् का आगम प्राप्त किन्तु क्षि धातु उपदेश में अनुदात्त एकाच् होने से इट् आगम निषेध होकर अक्षि+स्त्। विद्यमान सिच् से परे अपृक्तस्य अस्तिसिचोऽपृक्ते सूत्र से ईट् आगम होकर अक्षि स् ईत् स्थिति में इगन्त अंग अक्षि, उसके बाद सिच्, उसके बाद, परस्मैपद है अत: सिचि वृद्धि: परस्मैपदेषु से वृद्धि होकर अक्षै+स्+ईत् तथा आदेश प्रत्यययो: से सकार को षकार होकर अक्षैषीत् रूप सिद्ध होता है।

क्षि धातु से लुङ् में रूप-

लुङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	अक्षैषीत्	अक्षैष्टाम्	अक्षैषु:
मध्यपुरुष:	अक्षैषी:	अक्षैष्टम्	अक्षैष्ट
उत्तमपुरुष:	अक्षैषम्	अक्षैष्व	अक्षैष्म

19.6 वदव्रजहलन्तस्याच:॥ (7.2.3)

सूत्रार्थ -परस्मैपदपरक सिच् परे हो तो वद् व्रज् तथा हलन्त अंगों के अच् के स्थान पर वृद्धि आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से वृद्धि किया जाता है। इस सूत्र में दो पद हैं। वदव्रजहलन्तस्य (6/1), अच: (6/1)। सिचि वृद्धि: परस्मैपदेषु सूत्र से सिचि (7/1), वृद्धि: (1/1), परस्मैपदेषु (7/3) इन तीन पदों की अनुवृत्ति होती हे। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। वदश्च व्रजश्च हलन्तश्च वदव्रजहलन्तम् इति समाहारद्वन्द्वसमास:। तस्य वदव्रजहलन्तस्याच: इति। वद व्रज इन में अन्त्य अकार उच्चारणार्थ है। अंगाक्षिप्तम प्रत्यये इसका प्रत्ययेषु में सप्तमी बहुवचनान्त से विपरिणाम होता है। सूत्रार्थ होता है - वद् व्रज् धातु एवं हलन्त को अंग अच् के स्थान पर वृद्धि होती है। यदि सिच् परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो। यह वृद्धि हलन्तलक्षणा वृद्धि कही जाती है।

वद व्रज का सूत्र में उपादान का प्रयोजन - वस्तुत हलन्त अच् को वृद्धि कहने पर वद् वज्र ये दो भी हलन्त धातु कहने पर वृद्धि हो। अत: सूत्र में दोनों की पृथक् कहने का क्या प्रयोजन है-इसक विषय में कहा जाता है कि यह वृद्धि सिच् इट् आदि है। यदि इडादि नहीं है तो भी होती है। परन्तु आगे नेटि सूत्र से इडादि सिच् में हलन्त अच् को वृद्धि का निषेध होता है। वद् एवं व्रज् दोनों सेट् धातु है। अत: यहां इडादि सिच् प्राप्त होता है। उससे नेटि सूत्र से वृद्धि निषेध प्रसज्य है। परन्तु वद् वज्र दोनों धातुओं को वृद्धि इष्ट है न की वृद्धि निषेध। इस विशेषता के कारण सूत्र में दोनों को ग्रहण किया है। इससे दोनों को निर्बाध वृद्धि होती है। अत: वद् व्रज् दोनों में नेटि सूत्र से वृद्धि निषेध रोकने के लिए दोनों का सूत्र में ग्रहण करना प्रयोजन था।

कटै वर्षावरणयो: - इस धातु के एकार की उपदेशेऽजनुनासिक इत् से इत्संज्ञा है। यह एदित् धातु हे। कट् शेष बचता है। मुखसुखार्थ के लिए अकार श्लेष किया गया है। उससे कट बहुधा

टिप्पणियाँ

अकारान्तत्व से प्रकटित दिखाई देती है। कटति। चकाट। कटिता। कटिष्यति। कटतु। अकटत्। कटेत्। कट्यात्।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - कट् धातु से लुड् में तिप्, तिप् के इकार का इतश्च से लोप, च्लि प्रत्यय, च्लि को सिच् होकर कट्+स्+त्। लुङ् में अट् का आगम, इट् आगम होकर अकट्+इस्+त् यहां विद्यमान सिच् से पर अपृक्त हल् तिप् के तकार को अस्तिसिचोऽपृक्ते सूत्र से ईट् आगम होकर अकट् इस्+ईत् यहां हलन्त अकट् है उससे इट् सहित सिच् और उससे परे परस्मैपद है। अतः वदव्रजहलन्तस्याचः सूत्र से अच् ककारोत्तर अकार को वृद्धि प्राप्त है तब।

19.7 नेटि॥ (7.2.8)

सूत्रार्थ - इडादि सिच् परे होने पर हलन्त धातु के स्थान पर वृद्धि नहीं होती।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र से वृद्धि का निषेध होता है। इस सूत्र में दो पद है। न अव्ययपद, इटि (7/1)। वदव्रजहलन्तास्याचः सूत्र से हलन्तस्य (6/1) पद आता है। सिचि वृद्धि परस्मैपदेषु सूत्र से सिचि (7/1), वृद्धि (1/1) परस्मैपदेषु (7/3) इन तीन पदों की अनुवृत्ति होती है। अंगस्य का अधिकार है। अंगाक्षिप्तम् प्रत्यये इसका प्रत्ययेषु से सप्तमीबहुवचनान्ता से विपरिणाम होता है। पद योजना होती है - इटि सिचि परस्मैपदेषु प्रत्ययेषु हलन्तस्य अंगस्य वृद्धिः न। इटि सिचि ये दो सप्तम्यन्त पद है। इट् यह अल् बोधक शब्द होने से सप्तमी सुनी गई है। उससे तदादिधि होती है। इस प्रकार इडादि सिच् में यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - इडादि सिच् परे होने पर हलन्त धातु के स्थान पर वृद्धि नहीं होती है। अर्थात् इस प्रकार की स्थिति में हलन्त लक्षणा वृद्धि का निषेध किया जाता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय- पूर्व अकट्+इस्+ईत् स्थिति में हलन्तलक्षणा वृद्धि प्राप्त परन्तु यहां सिच् इडादि है। अतः नेटि सूत्र से वृद्धि निषेध प्राप्त हो तब।

19.8 अतो हलादेर्लघोः॥ (7.2.7)

सूत्रार्थ -हलादि अंग को लघु अकार के स्थान पर विकल्प से वृद्धि होती है। परस्मैपदपरक इडादि सिच् परे हो तो।

सूत्रार्थव्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से विकल्प से वृद्धि होती है। इस सूत्र में तीन पद हैं। अतः (6/1) हलादेः (6/1) लघोः (6/1)। नेटि सूत्र से नेटि (7/1) की अनुवृत्ति है। सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु सूत्र से सिचि (7/1) वृद्धिः (1/1) परस्मैपदेषु (7/1) इन तीनों पदों की अनुवृत्ति है। ऊर्णोतेर्विभाषा सूत्र से विभाषा (1/1) पद आता है। अंगस्य (6/1) का अधिकार है। अंगाक्षिप्तम प्रत्यये इसका प्रत्ययेषु में सप्तमी बहुवचनान्त से विपरिणाम होता है। पदयोजना है - इटि सिचि परस्मैपदेषु प्रत्ययेषु हलादेः अंगस्य लघोः अतः वृद्धिः विभाषा। इटि सिचि यहां तदादिविधि से इडादि सिच् में यह अर्थ प्राप्त होता है। उससे अर्थ होता है। इडादि सिच् परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो हलादि लघु अंग के अकार के स्थान पर विकल्प से वृद्धि होती है।

ह्रस्व लघु सूत्र से लघु संज्ञा का विधान किया जाता है। इस प्रकार संयोग परे न होने पर पूर्व ह्रस्व लघुसंज्ञक होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय- पूर्व अकट्+इस्+ईत् स्थिति में हलन्तलक्षणा वृद्धि प्राप्त परन्तु नेटि से वृद्धि निषेध प्राप्त। यहां हलादि अंग है, ककरोत्तर अकार लघु संज्ञक है। इडादि सिच् परे है। अतः अतो हलादेर्लघोः सूत्र से लघु अकार को विकल्प से वृद्धि प्राप्त। तब-

19.9 ह्म्यन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदिताम्॥ (7.2.5)

सूत्रार्थ - हकारान्त, मकारान्त, यकारान्त, क्षण्, श्वस्, जागृ, वि प्रत्ययान्त, श्वि तथा एदित् अंगों को वृद्धि नहीं होती परस्मैपदपरक इडादि सिच् प्रत्यय परे हो तो।

सूत्र व्याख्या - यह निषेध सूत्र है। इस सूत्र से वृद्धि का निषेध होता है। इस सूत्र में एक षष्ठी बहुवचनान्त पद है। ह् च म् च् य् च इति ह्मयः इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। ह्मयन्तो येषां ते ह्मयन्ताः इति बहुव्रीहिसमास। एत् इत् यस्य स एदित् इति बहुव्रीहिसमासः। ह्मयन्ताः च क्षण् च श्वस् च जागृ च णिश्च श्विश्च एदित् च इति ह्मयन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदितः तेषाम् इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। यहाँ णि प्रत्ययग्रहणेन प्रत्ययग्रहणे तदन्तग्रहणम् परिभाषा से तदन्तविधि से ण्यन्त का ग्रहण होता है। सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु सूत्र से तीनों पदों का ग्रहण होता है। अंगस्य का अधिकार है। उसका षष्ठीबहुवचनान्त से विपरिणाम होता है। अंगाक्षिप्तम् प्रत्यये इसका प्रत्ययेषु से सप्तमी बहुवचनान्त से विपरिणाम होता है तब सूत्रार्थ होता है - हकारान्त, मकारान्त, यकारान्त, क्षण् धातु, श्वस् धातु, जागृ धातु, ण्यन्त, श्वस् धातु तथा एदित् अंग को वृद्धि नहीं होती यदि इडादि सिच् परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो। अर्थात् जिस अंग के अन्त में हकार मकार यकार क्षण् श्वस् जागृ ण्यन्त धातु श्वि धातु एदित् धातु होती है। उस अंग को वृद्धि नहीं होती यदि उससे परे इडादि सिच् परस्मैपद प्रत्यय परे हो।

उदाहरण - अकटीत्

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व अकट्+इस्+ईत् स्थिति में अतो हलादेर्लघोः सूत्र से लघु अकार को विकल्प से वृद्धि प्राप्त। यहां कट् धातु एदित् है अतः प्रकृत सूत्र से वृद्धि का निषेध होता है। वहां इट् ईटि सूत्र से इट् से परे सकार का लोप होकर अकट्+इ+ईत् तथा सवर्ण दीर्घ होकर अकटीत् रूप सिद्ध होता है।

कट् धातु से लुङ् में रूप-

लङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	अकटीत्	अकटीष्टाम्	अकटीषुः
मध्यपुरुषः	अकटीः	अकटीष्टम्	अकटीष्ट
उत्तमपुरुषः	अकटीषम्	अकटीष्व	अकटीष्म

टिप्पणियाँ

इडादि या अनिडादि सिच् हो तो सिचिवृद्धिः परस्मैपदेषु सूत्र से इगन्त अंग को वृद्धि की जाती है।

उसी प्रकार हलन्त धातुओं के अच् को वृद्धि वदव्रजहलन्तस्याचः से होती है। यहाँ भी इडादि अथवा अनिडादि सिच् हो तो।

इडादि सिच् परस्मैपद परे हो तो हलन्तलक्षणा वृद्धि का नेटि से वृद्धि निषेध किया जाता है। अतो हलादेर्लघोः सूत्र से हलादि लघु के अकार को विकल्प से वृद्धि होती है। नेटि से इसका निषेध किया जाता है, वह यदि हलादि लघु अकार वत् हो तो। उसको विकल्प से वृद्धि होती है।

इस प्रकार हलन्त लक्षणा और इगन्तलक्षणा वृद्धि होती है। पुनः इडादि सिच् परे हलन्तलक्षणा वृद्धि का निषेध होता है। कुछ को विकल्प से वृद्धि होती है। इनमें जिन अंगों के अन्त में हकार मकार यकार क्षण् श्वस् जागृ ण्यन्त धातु श्विस् धातु एदित् धातु है उनके अंगो को वृद्धि को निषेध होता है।

वहां हलन्तस्य अचः सूत्र से वद्व्रज् धातुओं को वृद्धि सिद्ध होती है। फिर भी पृथक् उपादान किया गया है। नेटि सूत्र से इडादि सिच् परे हलन्त को वृद्धि का निषेध होता है। उससे वद्व्रज् को भी सेट होने से वृद्धि निषेध प्राप्त है। अतो हलादेर्लघोः सूत्र से विकल्प से लघु अत् को वृद्धि प्राप्त है। उससे वद्व्रज् को विकल्प में वृद्धि प्राप्ति में वद्व्रज्हलन्तस्याचः सूत्र उपादान है। उससे दोनों को नित्य वृद्धि होती है।

19.10 पुषादिद्युताद्यॄलृदितः परस्मैपदेषु॥ (3.1.55)

सूत्रार्थ - श्यन् विकरण वाले पुष् आदि धातु और द्युत् आदि तथा लृदित् धातुओं से परे च्लि के स्थान पर अङ् आदेश हो जाता है परस्मैपद प्रत्ययों के परे होने पर।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र से अङ् का विधान है। इस सूत्र में दो पद हैं। पुषादिद्युताद्यॄलृदितः (5/1), परस्मैपदेषु (7/1)। पुष आदिः येषा ते पुषादयः इति बहुव्रीहिसमासः। द्युत् आदि येषां ते द्युतादयः इति बहुव्रीहिसमासः। लृत् इत् यस्य स लृदित् इति बहुव्रीहिसमासः। पुषादयश्च द्युतादयश्च लृदित् च एषां समाहारः पुषादिद्युताद्यॄलृदित् इति समाहारद्वन्द्वसमासः। तस्मात् पुषादिद्युताद्यॄलृदितः। च्लेः सिच् सूत्र से च्लेः (6/1) पद की अनुवृत्ति है। अस्यतिवक्तिव्यातिभ्योऽङ् सूत्र से अङ् (1/1) पद की अनुवृत्ति है। सूत्रार्थ होता है। पुषादि, द्युतादि और लृदित् धातुओं से परे च्लि के स्थान पर अङ् आदेश हो यदि परस्मैपद परे हो तो।

पुषादि धातु भ्वादिगण, दिवादिगण, क्र्यादिगण और चुरादिगण में पठित हैं परन्तु व्याख्यानाधारणे अर्थ में केवल श्यन् विकरण वाली दिवादिवाण की धातु ही ग्राह्य है।

उदाहरण - अगमत्

सूत्रार्थ समन्वय - गम्लृ गतौ धातु लृदित् गत्यार्थ गम् धातु से लुङ् में प्रथम पुरूष एकवचन की विवक्षा में तिप् प्रत्यय, च्लिलुङि से शप् के अपवाद से च्लि प्रत्यय, चिल् को सिच् आदेश होकर

गम् धातु लृदित् होने से पुषादिद्युताद्यृलृदितः परस्मैपदेषु सूत्र से सिच् के अपवाद से अङ् प्रत्यय। अङ् के ङ् की हलन्त्यम् से इत् संज्ञा और लोप होकर गम्+अ+ति स्थिति में इतश्च से ति के इ का लोप, लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः से अंग को अट् आगम होकर अ+गम्+अ+त् तथा वर्णमेल होकर **अगमत्** रूप सिद्ध होता है।

गम् धातु के लुङ् में रूप- अगमत्, अगमताम्, अगमन्। अगमम्, अगमतम्, अगमत। अगमम्, अगमाव, अगमाम।

नीचे कुछ धातुएँ दी गई हैं, उनका रूप इन्हीं के समान कुछ सूत्रों का प्रयोग करके सिद्ध कर सकते हैं।

1. **पठ व्यक्तायां वाचि** - (वृद्ध्यभावपक्ष में) अपठीत्, अपठीष्टाम्, अपठीषुः। अपठीः, अपठीष्टम्, अपठीष्ट। अपठीषम्, अपठीष्व, अपठीष्म। (वृद्धि) पक्ष में) अपाठीत्, अपाठीष्टाम्, अपाठीषुः। अपाठीः, अपाठीष्टम्, अपाठीष्ट। अपाठीषम्, अपाठीष्व, अपाठीष्म।

2. **जप व्यक्तायां वाचि** - (वृद्ध्यभावपक्ष में) अजपीत्, अजपीष्टाम्, अजपीषुः। अजपीः, अजपीष्टम्, अजपीष्ट। अजपीषम्, अजपीष्व, अजपीष्म। (वृद्धि) पक्ष में) अजापीत्, अजापीष्टाम्, अजापीषुः। अजापीः, अजापीष्टम्, अजापीष्ट। अजापीषम्, अजापीष्व, अजापीष्म।

3. **गद व्यक्तायां वाचि** - (वृद्ध्यभावपक्ष में) अगदीत्, अगदीष्टाम्, अगदीषुः। अगदीः, अगदीष्टम्, अगदीष्ट। अगदीष्म्, अगदीष्व, अगदीष्म। (वृद्धि) पक्ष में) अगादीत्, अगादीष्टाम्, अगादीषुः। अगादीः, अगादीष्टम्, अगादीष्ट। अपगदीषम्, अगादीष्व, अगादीष्म।

4. **टु नदिँ समृद्धौ** - अनन्दीत्, अनन्दीष्टाम्, अनन्दीषुः। अनन्दीः, अनन्दीष्टम्, अनन्दीष्ट। अनन्दीष्म्, अनन्दीष्व, अनन्दीष्म।

5. **व्रज गतौ** - अव्राजीत्, अव्राजीष्टाम्, अव्राजीषुः। अव्राजीः, अव्राजीष्टम्, अव्राजीष्ट। अव्राजीष्म्, अव्राजीष्व, अव्राजीष्म।

पाठगत प्रश्न 19.2

1. इडादि सिच् परस्पैपद परे इगन्तांग को वृद्धि किस सूत्र से होती है?
2. अनिडादि सिच् परस्पैपद परे इगन्तांग को वृद्धि किस सूत्र से होती है?
3. अनिडादि सिच् परस्पैपद परे अदन्तांग को वृद्धि किस सूत्र से होती है?
4. इडादि सिच् परस्पैपद परे हलन्त अच् को वृद्धि किस धातु को होती है?
5. इडादौ सिचि परस्पैपदेषु का अपवाद कौन है?

6. इडादि सिच् परस्मैपद परे हलन्त अच् को वृद्धि किस सूत्र से निषेध होता है?

7. नेटि से वृद्धिनिषेध का नित्यापवाद किस सूत्र से होता है?

8. कट् धातु का अर्थ क्या है?

9. अगमत् में च्लि को अङ् किस सूत्र से होता है?

10. अगमत् रूप किस लकार में होता है?

    1. लङ् 2. लृङ् 3. लृङ् 4. लुट्

11. अगमत् रूप में च्लि के स्थान पर क्या होता है?

    1. अङ् 2. चङ् 3. सिच् 4. सक्

12. अकटीत् रूप में च्लि के स्थान पर क्या होता है?

    1. अङ् 2. चङ् 3. सिच् 4. सक्

पाठ का सार

इस पाठ में लिङ् लकार और लुङ् लकार के चुने हुए सूत्रों को उपस्थित किया है। आदि में अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः सूत्र से यकारादि प्रत्यय परे अन्त्य अजन्त अंग को दीर्घ किया गया है। यह दीर्घ कृत्प्रत्यय परे और सार्वधातुक परे नहीं होता। उससे क्षीयात् रूप सिद्ध होता है।

लुङ् लकार में विद्यमान पर सिच् के, अस् धातु के अपृक्त हल् को ईट् का आगम अस्तिसिचोऽपृक्ते सूत्र से होता है। इट् व ईट् के मध्य सिच् हो तो उसका लोप इट ईटि सूत्र से होता है। सिज्लोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः वार्तिक से सिच् लोप सिद्ध होने से अकः सवर्णे दीर्घः सूत्र प्रवृत्त होता है। झेर्जुस् सिजभ्यतविदिभ्यश्च सूत्र प्रवृत्त होते हैं। इसप्रकार विविध कार्य इस पाठ में प्रदर्शित किये गये हैं।

पाठांत प्रश्न

1. अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः सूत्र की व्याख्या कीजिए।

2. अस्तिसिचोऽपृक्ते सूत्र की व्याख्या कीजिए।

3. क्षीयात्, क्षीयास्ताम्, क्षीयासुः। आतीः, आतीत्, आतीषुः, आतीष्टाम् को ससूत्र सिद्ध कीजिए।

4. सिचिवृद्धिः परस्मैपदेषु सूत्र की व्याख्या कीजिए।

5. वदव्रजहलन्तस्याच: सूत्र की व्याख्या कीजिए।
6. अतो हलादेर्लघो: सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. लिङ् सिच् में वृद्धि प्रकरण का सार लिखिए।
8. अकटीत् अकटिष्टाम् कटी: अकटीष्म को ससूत्र सिद्ध कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1. अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घ:।
2. विद्यमान पर सिच् के, अस् धातु के अपृक्त हल् को ईट् का आगम होता है।
3. इट ईटि ।
4. इट ईटि।
5. सिजभ्यतविदिभ्यश्च।

6. 3 7. 3 8. 3

19.2

1. सिचिवृद्धि: परस्मैपदेषु। 2. सिचिवृद्धि: परस्मैपदेषु।
3. न केनापि सूत्रेण।
4. परस्मैपदपरक सिच् परे हो तो वद् व्रज् तथा हलन्त अंगों के अच् के स्थान पर वृद्धि आदेश हो।
5. हकारान्त, मकारान्त, यकारान्त, क्षण् धातु, श्वस् धातु, जागृ धातु, ण्यन्त, श्वस् धातु तथा एदित् अंग को वृद्धि नहीं होती यदि इडादि सिच् परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो।
6. नेटि। 7. ह्म्यन्तक्षणश्वसजागृणिश्व्येदिताम्।
8. वर्षावरणयो: कट। 9. पुषादिद्युताद्युलृदित: परस्मैपदेषु।

10. 2 11. 1 12. 3

20

भ्वादिप्रकरण में आत्मनेपद प्रकरण

धातु दो प्रकार की होती है, परस्मैपद एवं आत्मनेपद। परस्मैपदी धातुओं को पूर्व में पढ़ चुके हैं। इस पाठ में आत्मनेपदी एध् धातु को उपस्थित किया गया है। एध् नायक धातु है। इसके सभी लकारों में रूप प्रदर्शित किये जायेंगे। उसके ज्ञान से आत्मनेपदी की अन्य धातुओं के रूप सिद्ध कर सकेंगे। आत्मनेपद के पूर्व प्रकरण में पढ़ चुके सूत्रों को छोड़कर शेष आवश्यक सूत्रों को यहां उपस्थिति किया गया है। यहां पूर्व के समान सूत्र व्याख्या में प्रत्येक पद की विभक्ति समासादि को स्पष्ट किया गया है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप –

- तिङन्त प्रकरण के आत्मनेपद प्रकरणस्थ सूत्रों को जानेंगे;
- धातु के बाद आत्मनेपद प्रत्ययों का प्रयोग कर सकेंगे;
- एध् धातु के समान अन्य धातु रूपों को सिद्ध कर सकेंगे;
- सूत्रों की व्याख्या करने में समर्थ होंगे;
- आत्मनेपद धातुओं के रूप, विशेषता को जानेंगे;
- आत्मनेपद धातु रूपों को अपनी भाषा में प्रयोग कर सकेंगे।

एध् धातु - लट् लकार

धातु प्रकरण में मूलरूप एध् वृद्धौ धातु पठित है। यह वृद्धि अर्थक धातु है। यह धातु अनुदात्तेत् (अनुदात्त इत्) है। अतः अनुदात्तङित आत्मनेपदम् सूत्र से आत्मनेदपदी है। यह धातु भ्वादिगणपठित, वृद्धयर्थकवाची, आत्मनेपदी, अकर्मक, अनुदात्तेत् सेट् है।

20.1 टित आत्मनेपदानां टेरे॥ (3.4.79)

सूत्रार्थ - टित् लकार के स्थान पर होने वाले आत्मनेपद प्रत्ययों की टि के स्थान पर एकार आदेश हो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में चार पद हैं। टितः (6/1) आत्मनेपदानाम् (6/3), टेः (6/1), ए (1/1)। लस्य का अधिकार है। अचोऽन्त्यादि टि सूत्र से टि संज्ञा का विधान होता है। सूत्रार्थ होता है - टित् लकार के स्थान पर होने वाले आत्मनेपद प्रत्ययों की टि के स्थान पर एकार आदेश होता है। दशलकारों में टित् लकार छः हैं। लट्, लिट्, लुट्, लृट्, लेट् एवं लोट्। इन लकारों में टि को एकार होता है।

उदाहरण - एधते

सूत्रार्थ समन्वय - वृद्धि अर्थक एध् धातु से वर्तमाने लट् से लट्, अनुदात्तेत होने से अनुदात्तङित आत्मनेपदम् सूत्र से आत्मनेपद संज्ञक प्रत्ययों में प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में 'त' प्रत्यय होकर एध्+त्, ङित् त प्रत्यय की तिङ् शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा होकर कर्तरि शप् से कर्ता अर्थ में शप् का आगम तथा अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+त यहां प्रकृत सूत्र टित आत्मनेपदानां टेरे सूत्र से त् के 'अ' टि संज्ञक को ए होकर एधते रूप सिद्ध होता है।

एधेते - एध् धातु से लट् में प्रथमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में आत्मनेपद संज्ञक आताम् प्रत्यय एवं कर्तरिशप् से शप् का आगम एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+आताम् स्थिति बनती है। तब-

20.2 आतो ङितः॥ (7.2.89)

सूत्रार्थ - अदन्त अंग से परे ङितों के आकार के स्थान पर इय् आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। आतः (6/1) ङितः (6/1)। अतः (5/1), इयः (1/1) इन दो पदों की अनुवृत्ति होती है, ङकार इत् यस्य स ङित्। अंगस्य का अधिकार आता है। अगंस्य इस पंचम्यन्त पद से विपरिणमत है। पद योजना - अतः अंगात् ङितः आतः इय्। अतः अंगात् पद का विशेषण है। उससे अदन्तात् अंगात् यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है- अदन्त अंग से परे ङितों के आकार के स्थान पर इय् आदेश होता है। यहां आताम् इत्यादि प्रत्ययों की स्वयं ङित् संज्ञा नहीं है तथापि सार्वधातुकमपित् सूत्र से उसकी ङित् संज्ञा होती है।

उदाहरण - एधेते।

टिप्पणियाँ

सूत्रार्थसमन्वय – एध्+अ+आताम् स्थिति में सार्वधातुकमपित् से आताम् की ङित् संज्ञा होकर प्रकृत सूत्र आतोङितः से आताम् के आ को इय् होकार एध्+अ+इय्+ताम् तथा लोपो व्योर्वलि से इय् के य् का लोप एवं अकार एवं इकार के स्थान पर गुण एकादेश होकर एधेताम् स्थिति में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि ताम् के आम् को ए होकर **एधेते** रूप सिद्ध होता है।

एधन्ते – एध् धातु से लट् में प्रथमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में आत्मनेपद झ प्रत्यय, झोऽन्तः से अन्त आदेश एवं कर्तरिशप् से शप् का आगम एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+अन्त स्थिति बनती है। अतोगुणे से पररूप एकादेश होकर एध्+अन्त यहां टित आत्मनेपदानां टेरे सूत्र से त् के 'अ' टि संज्ञक को ए होकर एधन्ते रूप सिद्ध होता है।

एधसे – एध् धातु से लट् में मध्यमपुरूष एकवचन की विवक्षा में आत्मनेपद थास् प्रत्यय। तब–

20.3 थासः से॥ (3.4.80)

सूत्रार्थ – टित् लकार के स्थान पर हुए थास् को से आदेश हो।

सूत्रव्याख्या– यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में दो पद हैं। थासः (6/1) से (1/1) टित् आत्मनेपदानां टेरे सूत्र से टितः (6/1) की अनुवृत्ति है। लस्य का अधिकार है। सूत्रार्थ होता है – टित् लकार के स्थान पर हुए थास् को से आदेश होता है। से आदेश अनेकाल् होने से सर्वादेश होता है।

उदाहरण – एधसे

सूत्रार्थ समन्वय – एध्+अ+थास् स्थिति में प्रकृत सूत्र थासः से सूत्र से थास् को सर्वादेश से होकर एधसे रूप सिद्ध होता है।

एधेथे – एध् धातु से लट् में मध्यमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में आत्मनेपद संज्ञक आथाम् प्रत्यय एवं कर्तरिशप् से शप् का आगम एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+आथाम् स्थिति में सार्वधातुकमपित् से आथाम् की ङित् संज्ञा होकर आतोङितः से आथाम् के आ को इय् होकार एध्+अ+इय्+थाम् तथा लोपो व्योर्वलि से इय् के य् का लोप एवं अकार एवं इकार के स्थान पर गुण एकादेश होकर एधेथाम् स्थिति में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि थाम् के आम् को ए होकर **एधेथे** रूप सिद्ध होता है।

एधध्वे – एध् धातु से लट् में मध्यमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में ध्वम् प्रत्यय, कर्तरिशप् से शप् का आगम, टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि ध्वम् के अम् को ए होकर **एधेध्वे** रूप सिद्ध होता है।

एधे – एध् धातु से लट् में उत्तमपुरूष एकवचन की विवक्षा में इट् प्रत्यय, कर्तरिशप् से शप् का आगम, टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि इ को ए होकर एध्+अ+ए स्थिति में अतोगुणे से पररूप एकादेश होकर एधे रूप सिद्ध होता है।

एधावहे -एध् धातु से लट् में उत्तमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में वहि प्रत्यय, कर्तरिशप् से शप् का आगम, टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि वहि के इ को ए होकर एध्+अ+वहे स्थिति में अतो दीर्घो यञि से दीर्घ होकर एधावहे रूप सिद्ध होता है।

एधामहे -एध् धातु से लट् में उत्तमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में महि प्रत्यय, कर्तरिशप् से शप् का आगम, टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि महि के इ को ए होकर एध्+अ+महे स्थिति में अतो दीर्घो यञि से दीर्घ होकर एधामहे रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार अन्य धातुओं के रूप लट् लकार में सिद्ध कर सकते है। एध् धातु से लट् में रूप-

लट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधते	एधेते	एधन्ते
मध्यमपुरुषः	एधसे	एधेथे	एधध्वे
उत्तमपुरुषः	एधे	एधावहे	एधामहे

पाठगत प्रश्न 20.1

1. एध् धातु का अर्थ क्या है?
2. एध् धातु का धातुपाठ में कैसा पाठ है?
3. एध् धातु उदात, अनुदात्त या स्वरित है?
4. एध् धातु आत्मनेपदी या परस्मैपदी?
5. एध् धातु को आत्मनेपद प्रमाणित करने वाला सूत्र है?
6. एध् धातु से तिप् आदि नो प्रत्यय कहाँ नहीं होते?
7. एध् धातु सेट् है अनिट्?
8. एध् धातु सकर्मक है या अकर्मक?
9. एध् धातु के एधत रूप में त का ते करना वाला सूत्र है?
10. टि संज्ञा किसकी होती है?
11. एध् धातु का लट् में रूप लिखिए?
12. आताम् प्रत्यय किस सूत्र से ङित् होता है?
13. आताम् के आकार को इय् किस सूत्र से होता है?
14. आतोङितः सूत्र का अर्थ क्या है?

टिप्पणियाँ

एध धातु - लिट् लकार

20.4 इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः॥ (3.1.36)

सूत्रार्थ - ऋच्छ् से भिन्न ऐसी इजादि धातु जो गुरूवर्ण से युक्त हो, उस से परे आम् प्रत्यय हो जाता है लिट् परे हो तो।

सूत्रव्याख्या - यह विधिसूत्र है। इस सूत्र में इजादेः (5/1), च अव्यय, गुरुमतः (5/1), अनृच्छः (5/1)ये चार पद है। धातोरेकाचो हलादेः क्रिया समभिव्याहारे यङ् सूत्र से धातोः इस पंचम्यन्त पद की अनुवृत्ति होती है। आम् (1/1) विधेयबोधकपद, लिटि(7/1) पद की कास्प्रत्ययादामन्त्रणे लिटि सूत्र से अनुवृत्ति है। प्रत्ययः और परश्च इन दो सूत्रों का अधिकार है। इच् आदिर्यस्य स इजादिः, तस्माद् इजादेः इति बहुव्रीहिसमासः। गुरूः अस्ति अस्मिन् इति गुरूमान्, तस्माद् गुरूमतः। न ऋच्छ, अनृच्छ, तस्माद अनृच्छः। पद योजना - इजादेः च गुरूमतः अनृच्छः धातोः आम् प्रत्यय पर च लिटि। सूत्रार्थ होता है - इजादि जो धातु गुरूमान है, ऋच्छ नहीं है, उस धातु को आम् प्रत्यय होता है, लिट् परे हो तो।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - एध् धातु को अनद्यतन परोक्षभूतार्थ क्रियावृत्ति का परोक्षे लिट् से लिट् लकार होकर एध्+लिट् स्थिति में एध् धातु एकारादि होने से इजादि है। दीर्घ च सूत्र से एकार गुरूसंज्ञक है। अतः एध् धातु गुरूमान् भी है। अतः इस धातु को प्रकृत सूत्र से आम् प्रत्यय होता है। उससे एध्+आम्+लिट् स्थिति में वर्णमेल होकर एधाम्+लिट् रूप बनता है। तब आमः सूत्र से लिट् का लुक् होता है। लिट् कृदतिङ् सूत्र से कृतसंज्ञक है एधाम् से लिट् का लोप में प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् सूत्र से प्रत्ययलक्षण करके एधाम् कृदन्त है। उसकी कृत्तद्धितसमासाश्च सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होती है। स्वौजसौट ... सूत्र से सु सुबन्त में एधाम्+सु स्थिति में आमः सूत्र से सु का लोप होकर एधाम् शेष रहता है। इसका पुनः प्रत्यय लक्षण करके सुबन्त होने से सुप्तिङन्तं पदम् से पद संज्ञा होती है।

एधाम् इस आमन्तत्व से कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र से लिट् परक को कृ, भू, अस् धातुओं प्रयोग होता है। सर्वप्रथम कृ धातु का प्रयोग प्रस्तुत है।

सूत्रावतरण - एधाम्+कृ+लिट् इस स्थिति में ल् के स्थान पर आत्मनेपद या परस्मैपद हो यह शंका उपस्थित होती है। वहां आत्मनेपद विधायक यह सूत्र प्रवृत्त होता है।

20.5 आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य॥ (1.3.63)

सूत्रार्थ - जिस से आम् प्रत्यय का विधान किया जाता है आम् की उस प्रकृति को आत्प्रत्यय कहते है। आम्प्रत्यय अर्थात् आम् की प्रकृति के समान अनुप्रयुज्यमान कृञ् धातु से भी आत्मनेपद हुआ करता है।

सूत्र व्याख्या - यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में चार पद है। आम्प्रत्ययवत् अव्ययपद कृञ्: षष्ठ्यन्त पद, अनुप्रयोगस्य षष्ठ्यन्त पद है। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् इस सूत्र से आत्मनेपदम् इस प्रथमान्त

पद की अनुवृत्ति है। आम्प्रत्ययः यस्मात् स आम्प्रत्ययः इस शब्द से जिससे आम् प्रत्यय का विधान किया गया है उसी का ही ग्रहण करना चाहिए न कि आम् प्रत्यय सहित का। सूत्रार्थ होता है – आम्प्रत्यय का विधान जिससे किया जाता है आम् की प्रकृति समान अनुप्रयुज्य कृञ् धातु आत्मनेपदी होती है।

यहां एध् धातु से आम् प्रत्यय विहित है। उससे एधाम् प्राप्त है। आम्प्रत्यय पद से एध् आम् की प्रकृति की ग्रहित है आम् की प्रकृति से यदि आत्मनेपद होता है तो आमन्तात् से परे जो अनुप्रयुज्य कृ धातु है उससे परे लिट् के स्थान पर आत्मनेपद होता है।

सूत्रार्थ समन्वय – एधाम्+कृ+लिट् स्थिति में एधाम् में आम् प्रत्यय एध् धातु से विहित है। अतः आम् प्रकृति एध् धातु है। एध् धातु से आत्मनेपद होता है। अतः अनुप्रयुक्त कृ धातु को प्रकृत सूत्र से आत्मनेपद का विधान होने से प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+त स्थिति सम्पन्न हुई।

20.6 लिटस्तझयोरेशिरेच्॥ (3.4.89)

सूत्रार्थ – लिट् के स्थान पर आदेश हुए 'त' और अ प्रत्ययों को क्रमशः एश् और इरेच् हो।

सूत्र व्याख्या – यह विधि सूत्र है। इसमें लिटः (6/1) तझयोः (6/2), एशिरेच् (1/1) ये तीन पद है। तश्च अश्च तझौ तयो तझयोः, इतरेतरयोगद्वन्द्व। एश् च इरेच् च इति एशिरच् इति समाहारद्वन्द्व समासः। यहां यथा संख्यमनुदेशः समानाम् की परिभाषा प्रवृत है। उससे त के स्थान पर एश् और झ के स्थान पर इरेच् होता है। एश् शित् होने से तथा ईरच् अनेकाल् होने से सम्पूर्ण के स्थान पर होते है। सूत्रार्थ होता है – लिट् के स्थान पर विहित त को एश् तथा झ को इरेच् आदेश होता है। इरेच् के च् की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा तथा तस्य लोपः से लोप होता है।

उदाहरण – एधाञ्चक्रे।

सूत्रार्थ समन्वय – एधाम्+कृ+त स्थिति में प्रकृत सूत्र से त को एश् आदेश तथा अनुबन्ध लोप होकर एधाम्+कृ+ए। लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व, अभ्यास कार्य में उरत् सूत्र से अ, रपरः से रपर, हलादिःशेषः से हलादि शेष, कुहोश्चुः से अभ्यास के ककार को चकार होकर एधाम् च कृ+ए तथा इकोयणचि से यण् होकर एधाम् चक्रे स्थिति बनती है तथा मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चक्रे रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधाञ्चक्रे रूप बनता है।

एधांचक्राते – एध् धातु को अनद्यतन परोक्षभूतार्थ क्रियावृत्ति का परोक्षे लिट् से लिट् लकार होकर एध्+लिट् स्थिति में इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः सूत्र से आम्, एध्+आम्+लिट्, आमः सूत्र से लिट् का लुक् होकर एधाम् इस आमन्तत्व से कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र से लिट् परक को कृ धातु का प्रयोग एधाम् कृ+लिट् आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य सूत्र से आत्मनेपद एध् धातु प्रथमपुरूष

टिप्पणियाँ

द्विवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+आताम् स्थिति में लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व, अभ्यास कार्य में एधाम् च कृ+आताम् तथा इकोयणचि से यण् होकर एधाम् चक्राताम् स्थिति में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि ताम् के आम् को ए होकर एधाम् चक्राते तथा मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चक्राते रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधांचक्राते रूप बनता है।

एधांचक्रिरे - एध् धातु को अनद्यतन परोक्षभूतार्थ क्रियावृत्ति का परोक्षे लिट् से लिट् लकार होकर एध्+लिट् स्थिति में इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः सूत्र से आम्, एध्+आम्+लिट्, आमः सूत्र से लिट् का लुक् होकर एधाम् इस आमन्तत्व से कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र से लिट् परक को कृ धातु का प्रयोग एधाम् कृ+लिट् आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य सूत्र से आत्मनेपद एध् धातु प्रथमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+झ स्थिति में लिटस्तझयोरेशिरेच् से झ को इरेच्, अनुबन्ध लोप एधाम् कृ+इरे लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व, अभ्यास कार्य में एधाम् च कृ+इरे तथा इकोयणचि से यण् होकर एधाम् चक्रिरे स्थिति में तथा मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चक्रिरे रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधांचक्रिरे रूप बनता है।

एधांचकृषे- एध् धातु लिट् में आम् कृ अनुप्रयोग से एधाम्+कृ+लिट् आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य सूत्र से आत्मनेपद एध् धातु मध्यमपुरूष एकवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+थास् स्थिति में थासःसे से थास् को से एधाम्+कृ+से इडागम प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध, लिटस्तझयोरेशिरेच् से झ को इरेच्, अनुबन्ध लोप एधाम् कृ+इरे लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व, अभ्यास कार्य में एधाम् च कृ+से तथा आदेशप्रत्यययोः से सकार को षकार तथा मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चकृषे रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधांचकृषे रूप बनता है।

एधांचक्राथे - एध् धातु लिट् में आम् कृ अनुप्रयोग से एधाम्+कृ+लिट् आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य सूत्र से आत्मनेपद एध् धातु मध्यमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+आथाम् स्थिति में द्वित्व, अभ्यास कार्य में एधाम् च कृ+आथाम् तथा इकोयणचि से यण् होकर एधाम् चक्राथाम् स्थिति में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि थाम् के आम् को ए होकर एधाम् चक्राथे तथा मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चक्राथे रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधांचक्राथे रूप बनता है।

एधांचकृढ्वे - एध् धातु से पूर्ववत् लिट् में आम् कृ अनुप्रयोग से एधाम्+कृ+लिट्, मध्यमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+ध्वम् स्थिति में

20.7 इणः षीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात्॥ (8.3.78)

सूत्रार्थ - इणन्त अंग से परे षीध्वम् (आ. लिङ्) शब्द के तथा लुङ् और लिट् के धकार को ढकार (मूर्धन्य) आदेश हो।

सूत्र व्याख्या – यह विधि सूत्र है। इण्: (5/1) षीध्वम् लुङ् लिटाम् (6/3), ध: (6/1), अंगात् (5/1) ये चार पद है। अपदान्तस्य मूर्धनस्य सूत्र से मूर्धन्य: इस प्रथमान्त की अनुवृत्ति है। षीध्वं लुङ् च लिट् च इति षीध्वंलुङ्लिट:, तेषां षीध्वंलुङिलटाम् इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमाहार:। पद योजना – इण: अंगात् षीध्वंलुङिलटां ध: मूर्धन्य:। यहां इण: यह विशेषण पद है। तदन्तविधि से इण्णन्तात् अंगात् यह अर्थ आता है। सूत्रार्थ होता है – इणन्त अंग से परे षीध्वम् (आ. लिङ्) शब्द के तथा लुङ् और लिट् के धकार को ढकार (मूर्धन्य) आदेश होता है।

उदाहरण – एधाञ्चकृढ्वे।

सूत्रार्थ समन्वय – पूर्व सूत्रों से एधाम्+च कृ+ध्वम् स्थिति में इणन्त अंग चकृ है उससे लिट् का धकार है प्रकृत सूत्र से धकार से मूर्धन्य ढकार होकर एधाम् च कृढ्वम् स्थिति में टित् आत्मनेपदानां टेरे सूत्र सेटि अम् को ए होकर एधाम् चकृढ्वे रूप सिद्ध होता है। अनुस्वार एवं परसवर्ण होकर एधांचकृढ्वे तथा एधाञ्चकृढ्वे रूप सिद्ध होता है।

एधांचक्रे – एध् धातु से पूर्ववत् लिट् में आम् कृ अनुप्रयोग से एधाम्+कृ+लिट् उत्तमपुरूष एकवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+इ स्थिति में द्वित्व, अभ्यास कार्य में एधाम् च कृ+इ तथा इकोयणचि से यण् होकर एधाम् चक्रि स्थिति में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि इ को ए होकर एधाम् चक्रे तथा मोऽनुस्वार: से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चक्रे रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधांचक्रे रूप बनता है।

एधांचकृवहे, एधांचकृमहे, – एध् धातु से पूर्ववत् लिट् में आम् कृ अनुप्रयोग से एधाम्+कृ+लिट् उत्तमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में एधाम् कृ+वहि स्थिति में द्वित्व, अभ्यास कार्य में एधाम् च कृ+वहि स्थिति में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि इ को ए होकर एधाम् च कृ वहे तथा मोऽनुस्वार: से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर एधाञ्चकृवहे रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में एधांचकृवहे रूप बनता है। इसी प्रकार उत्तमपुरूष बहुवचन में **एधाञ्चकृमहे, एधांचकृमहे** रूप सिद्ध होता है।

एध् धातु से आम् मे भू धातु के अनुप्रयोग में परस्मैपद होता है। भू धातु से लिट में रूप साधन प्रक्रिया पूर्ववत् होती है। इसी प्रकार अस् धातु के अनुप्रयोग में होता है।

कृ भू अस् धातुओं के अनुप्रयोग से रूप –

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	एधांचक्रे	एधांचक्राते	एधांचक्रिरे
मध्यमपुरुष:	एधांचकृषे	एधांचकृाथे	एधांचकृढ्वे
उत्तमपुरुष:	एधांचक्रे	एधांचकृवहे	एधांचकृमहे

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधाम्बभूव	एधाम्बभूतुः	एधाम्बभूवुः
मध्यमपुरुषः	एधाम्बभूविथ	एधाम्बभूवथुः	एधाम्बभूव
उत्तमपुरुषः	एधाम्बभूव	एधाम्बभूविव	एधाम्बभूविम

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधामास	एधामासतुः	एधामासुः
मध्यमपुरुषः	एधामासिथ	एधामासथुः	एधामास
उत्तमपुरुषः	एधामास	एधामासिव	एधामासिम

पाठगत प्रश्न 20.2

1. इजादेश्च गुरूमतोऽनृच्छ सूत्र की वृत्ति लिखिए।
2. इजादेश्च गुरूमतोऽनृच्छ सूत्र से क्या होता है?
3. आम्प्रत्यय किस प्रकार का बहुव्रीहि है?
4. एध् धातु से भू का प्रयोग होने पर परस्मैपद है या आत्मनेपद?
5. आमः सूत्र से किसका लुक् होता है?
6. लिटस्तझयोरेशिरेच् सूत्र से त को एश्, झ को इरेच् किस नियम से होता है?
7. एध् धातु लिट् प्रथम पुरूष एकवचन में रूप क्या होता है?
8. एध् धातु से लिट् में अस् का प्रयोग करके रूप लिखिए।
9. एधोऽचकृढ्वे में ध्वम् के ध् को ढ् किस सूत्र से होता है?

एध् धातु - लुट् लकार

एध् धातु से लुट् में प्रथमपुरूष के रूप में कोई विशेष कार्य नहीं है। वे रूप पूर्व सूत्र से ही होते है। वहां स्यतासी लृलुटोः, लुटः प्रथमस्य डारौरसः, तासस्त्योर्लोपः रि च सूत्र प्रयुक्त होते हैं जैसे-

एधिता - एध् धातु से लुट् में प्रथम पुरूष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय-एध्+त स्थिति में कर्तरिशप् से शप् प्राप्त किन्तु शप् के स्थान पर तास् होकर एध्+तास्+त् आर्धधातुक होने से वलादि को इट् का आगम, अनुबन्ध लोप एध्+इ+तास्+त। लुटः प्रथमस्य डारौरसः सूत्र से त प्रत्यय को

डा सर्वादेश एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+इतास्+आ, डित् होने से टि का लोप होकार एधिता रूप सिद्ध होता है।

इसी प्रकार अन्य रूप समझने चाहिए। मध्यमपुरूषबहुवचन में ध्वम् प्रत्यय में एध् इतास् ध्वम् स्थिति में-

20.8 धि च॥ (8.2.25)

सूत्रार्थ - धकारादि प्रत्यय परे हो तो सकार का लोप हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में धि सप्तम्यन्त और च अव्ययपद ये दो पद है। रात्सस्य सूत्र से सस्य यह षष्ठ्यन्त पद आता है। संयोगान्तस्य लोपः से लोपः इस प्रथमान्त पद की अनुवृत्ति होती है। यहां प्रत्यये का अध्याहार करना चाहिए। धि प्रत्यये इस तदादिविधि से धकारादि प्रत्यये यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - धकारादि प्रत्यय परे हो तो सकार का लोप होता है।

उदाहरण - एधिताध्वे

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्रों से एधितास्+ध्वम् स्थिति में ध्वम् धकारादि प्रत्यय परे है। अतः धि च सूत्र से सकार का लोप होकर एधिताध्वम् स्थिति में टि को एकार होकर एधिताध्वे रूप सिद्ध होता है।

पूर्ववत् एध् धातु से उत्तमपुरूष एकवचन में एध्+इतास्+इ स्थिति में टित आत्मपेदानां टेरे सूत्र से टि इ को ए होकर एधितास्+ए।

20.9 ह एति॥ (7.2.52)

सूत्रार्थ - तास् और अस् के सकार को हकार हो जाता है, एकार परे हो तो।

सूत्रव्याख्या- इस विधि सूत्र में ह(1/1) और इति(7/1) दो पद है। तासस्त्योर्लोपः सूत्र से तासस्त्योः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। सः स्यार्धधातुके सूत्र से सः इस षठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। तासस्त्योः सः यह अवयव षष्ठी है। उससे तासस्त्योरवयवस्य यह अर्थ आता है। सूत्रार्थ होता है - तास् और अस् धातु के अवयव जो सकार है उसको हकार होता है। यदि एकार परे हो तो।

उदाहरण - एधिताहे

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्रों से एधितास्+ए स्थिति में सकार को ह इति सूत्र से हकार होकर **एधिताहे** रूप सिद्ध होता है।

अन्य रूपों में भी इसी प्रकार समझने चाहिए

एधितास्वहे, एधितास्महे- पूर्ववत् एध् धातु से उत्तमपुरूष द्विवचन में एध्+इतास्+वहि स्थिति में टित आत्मपेदानां टेरे सूत्र से टि इ को ए होकर एधितास्+वहे वर्ण मेल होकर **एधितास्वहे** रूप सिद्ध होता है। उत्तमपुरूष बहुवचन में **एधितास्महे** रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

एध् धातु से लुट् में रूप-

लुट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधिता	एधितारौ	एधितारः
मध्यमपुरुषः	एधितासे	एधितासाथे	एधिताध्वे
उत्तमपुरुषः	एधिताहे	एधितास्वहे	एधितास्महे

एध् धातु - लिट् लकार

एध् धातु से लिट् में के रूप में कोई विशेष कार्य नहीं है। वे रूप पूर्व सूत्र से ही होते है। इस लकार में स्यतासी लृलुटोः से स्य, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इडागम, आदेशप्रत्यययोः से सकार को षकार, टित आत्मपेदानां टेरे सूत्र से टि को एकार होता है।

एधिष्यते- एध् धातु से भविष्यत्काल में लृट्, शप् को बाधकर स्य, इडागम,सकार का षकार होकर एधिष्यत तथा टित आत्मपेदानां टेरे सूत्र से टि अकार को एकार होकर एधिष्यते रूप सिद्ध होता है। अन्य रूप इसी प्रकार समझने चाहिए।

एध् धातु से लिट् में रूप-

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधिष्यते	एधिष्येते	एधिष्यन्ते
मध्यमपुरुषः	एधिष्यसे	एधिष्यथे	एधिष्यध्वे
उत्तमपुरुषः	एधिष्ये	एधिष्यावहे	एधिष्यामहे

एध् धातु लोट् में रूप

एध् धातु से लोट् में प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय शप् का आगम, तथा टित आत्मपेदानां टेरे सूत्र से टि अकार को एकार होकर एध्+अ+ते।तब-

20.10 आमेतः (3.4.90)

सूत्रार्थ - लोट के एकार् को आम् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में आम् (1/1) एतः (6/1) ये दो पद है। लोटो लङ्वत् सूत्र से लोटः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। लोट् एत् का अवयव षष्ठी है। सूत्रार्थ होता है - लोट् के अवयव एकार को आम् होता है।

उदाहरण - एधताम् एधेताम् एधन्ताम् एधेथाम्।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्रों से एधते स्थिति में आमेतः सूत्र से लोट् के अवयव एकार को आम् होकर एधताम् रूप सिद्ध होता है। प्रथमपुरूष द्विवचन में एधन्ते स्थिति में आम् होकर एधन्ताम् रूप सिद्ध होता है। उसी प्रकार मध्यम पुरूष द्विवचन में एधेथे स्थिति में आम् होकर एधेथाम् रूप सिद्ध होता है।

एधस्व-एध् धातु से लोट् में मध्यमपुरूष एकवचन की विवक्षा में थास् प्रत्यय शप् का आगम, तथा थासः से सूत्र से थास् को से होकर एधसे। तब-

20.11 सवाभ्याम् वामौ॥ (3.4.91)

सूत्रार्थ - स् और व् से परे लोट् के एकार को क्रमशः व और अम् आदेश होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में सवाभ्याम् (5/2), वामौ (1/2) ये दो पद है। लोटो लङ्वत् सूत्र से लोटः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। आमेतः सूत्र से षष्ठ्यन्त एतः पद की अनुवृत्ति है। वश्च् अम् च वामौ इति इतरेतरयोगद्वन्द्वः। ताभ्याम् सवाभ्याम्। सूत्रार्थ होता है - सकार से और वकार से परे लोट् के एकार के स्थान पर क्रमशः व एव अम् आदेश होता है।

उदाहरण - एधस्व, एधध्वम्।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्र से एधसे स्थिति में से के एकार को प्रकृत सूत्र वकार होकर एधस्व रूप सिद्ध होता है।

एधध्वम्- -एध् धातु से लोट् में मध्यमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में ध्वम् प्रत्यय शप् का आगम, तथा टि को ए होकर एधध्वे। सवाभ्याम् वामौ से ए को अम् होकर एधध्वम् रूप सिद्ध होता है।

एधै- -एध् धातु से लोट् में उत्तम पुरूष एकवचन की विवक्षा में इट् प्रत्यय शप् का आगम, तथा टि को ए होकर एध+ए। तब-

20.12 एत ऐ॥ (3.4.93)

सूत्रार्थ - लोट् के उत्तमपुरूष के एकार को ऐकार हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में एतः (6/1) ऐ (1/1) ये दो पद है। लोटो लङ्वत् सूत्र से लोटः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। आङुत्तमस्य पिच्च सूत्र से उत्तमस्य इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। सूत्रार्थ होता है - लोट् के अवयव एकार को ऐकार होता है।

उदाहरण - एधै, एधावहै, एधामहै।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्र से एध ए स्थिति में एत ऐ सूत्र से एकार को ऐकार होकर एध ऐ, आङुत्तमस्य पिच्च सूत्र से आट् का आगम, एध आ ए तथा आटश्च से वृद्धि होकर एधै रूप

टिप्पणियाँ

सिद्ध होता है। उत्तम पुरूष द्विवचन एध् अ वहि में एकार को ऐकार, आट् का आगम, आटश्च से वृद्धि, अकः सवर्णे दीर्घः होकर एधावहै रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार एधामहै रूप सिद्ध होता है।

एध् धातु से लोट् में रूप-

लोट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधताम्	एधेताम्	एधन्ताम्
मध्यमपुरुषः	एधस्व	एधेथाम्	एधध्वम्
उत्तमपुरुषः	एधै	एधावहै	एधामहै

एध् धातु लङ् में रूप

एध् धातु लङ् रूपों को सिद्ध करने के लिए नवीन सूत्रों की आवश्यकता नहीं है। यहां प्रमुखरूप से एक रूप नीचे प्रदर्शित है। अन्यरूप स्वयं सिद्ध कर सकते हैं। लङ् के कार्य में डित् होने से टित्त्व का अभाव होने से टित् आत्मनेपदानां टेरे आदि कार्य नहीं होते हैं। आत्मनेपद विधान के शप् आदि कार्य होंगे। एध् धातु अजादि होने से लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से अट् आगम का बोध होकर आडजादीनाम् सूत्र प्रवृत होता है।

ऐधत - एध् धातु से अनद्यतन भूतार्थ में लङ् में एध्+ल् स्थिति में प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय, कर्त्तरिशप् से शपागम्, आडजादीनाम् सूत्र से अट् का बाध करके आट् आदि अवयव होकर आ+एध्+अ+त स्थिति में आटश्च से आकार एवं एकार का वृद्धि होकर ऐधत रूप सिद्ध होता है। अन्य रूपों में विशेकर उत्तमपुरूष एकवचन में इट्, शप् , आट होकर आ+एध्+अ+इ स्थिति में अकार एवं इकार को गुण तथा आटश्च से वृद्धि होकर ऐधे रूप बनता है। द्विवचन में आ+एध्+अ+वहि स्थिति में अतोदीर्घो यञि से अदन्त को दीर्घ होकर ऐधावहि रूप बनता है। इसी प्रकार ऐधामहि रूप सिद्ध होता है।

एध् धातु से लोट् में रूप-

लोट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	ऐधत	ऐधेताम्	ऐधन्त
मध्यमपुरुषः	ऐधथाः	ऐधेथाम्	ऐधध्वम्
उत्तमपुरुषः	ऐधे	ऐधावहि	ऐधामहि

एध् धातु विधिलिङ् में रूप

अब इस धातु के लिङ् में रूप प्रस्तुत किये जा रहे है। लिङ् विधिलिङ् और आशीर्लिङ् भेद से दो प्रकार का है। यहां आदि में विधिलिङ् रूप प्रदर्शित है।

20.13 लिङः सीयुट्।। (3.4.102)

सूत्रार्थ - लिङ् को सीयुट् का आगम हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में लिङः (6/1), सीयुट् (1/1) दो पद है। सीयुट् में उकार उच्चारणार्थक तथा ट् इत्संज्ञक है। आद्यन्तौ टकितौ के नियम से सीयुट् लिङ् का आदि अवयव होता है। परस्मैपदों में इस के अपवाद यासुट् का विधान कर चुके है अतः परिशेष्यात् ये आत्मनेपदों में ही प्रवृत्त होता है।

उदाहरण - एधेत। एधेयाताम्।

सूत्रार्थ समन्वय - एध् धातु से विधिलिङ् में प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय, लिङः सीयुट् सूत्र से त प्रत्यय को सीयुट् टित् होने से आदि अवयव होकर एध्+सीय्+त स्थिति बनती है। कर्तरिशप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+सीय्+त। लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य सूत्र से अनन्त्य सीयुट् के अवयव सकार का लोप तथा लोपो व्योर्वलि से यकार का लोप होकर एध्+अ+ई+त रूप बना। अकार एवं ईकार को गुण एकार होकर **एधेत** रूप सिद्ध होता है।

एधेयाताम्-एध् धातु से विधिलिङ् में प्रथमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में आताम् प्रत्यय, लिङः सीयुट् सूत्र से सीयुट् होकर एध्+सीय्+आताम् स्थिति बनती है। कर्तरिशप् से शप् एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+सीय्+आताम्। लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य सूत्र से अनन्त्य सीयुट् के अवयव सकार का लोप होकर एध्+अ+ईय+आताम् रूप बना। अकार एवं ईकार को गुण एकार होकर **एधेयाताम्** रूप सिद्ध होता है।

एध्-धातु से विधिलिङ् में प्रथमपुरूष बहुवचन में झ प्रत्यय होकर एध्+झ स्थिति में -

20.14 झस्य रन्।। (3.4.105)

सूत्रार्थ - लिङ् के झ को रन् आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में झस्य (6/1) रन् (1/1) ये दो पद है। लिङः सीयुट् से लिङः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। झस्य यह स्थान षष्ठी है। रन् अनेकाल् है। अतः अनेकाल्शित् सर्वस्य परिभाषा से सम्पूर्ण झ को रन् होता है। सूत्रार्थ होता है - लिङ् के स्थान पर विहित झ के स्थान पर रन् आदेश होता है।

उदाहरण - एधेरन्

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्र से एध्+झ स्थिति में प्रकृतसूत्र झस्य रन् से झ को रन् होकर एध्+रन् बना, लिङः सीयुट् से रन् को सीयुट्, कर्त्तरिशप् से शप् आगम्, अनुबन्ध लोप होकर एध्+अ+सीय्+रन् बना। यहां लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य से अनन्त्य सीयुट् के सकार का लोप, लोपो व्योर्वलि से यकार लोप, और अकार ईकार को गुणैकादेश होकर **एधरेन्** रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

एधेथाः - एध् धातु से विधिलिङ् में मध्यमपुरूष एकवचन की विवक्षा में थास् प्रत्यय, सीयुट्, शप्, सीयुट् के अवयव सकार का लोप होकर अकार एवं ईकार को गुण एकार तथा सकार को विसर्ग होकर **एधेथाः** रूप सिद्ध होता है।

एधेयाथाम् - एध् धातु से मध्यमपुरूष द्विवचन की विवक्षा में आथाम् प्रत्यय, सीयुट्, शप् , सीयुट् के अवयव सकार का लोप होकर अकार एवं ईकार को गुण एकार होकर **एधेथाताम्** रूप सिद्ध होता है।

एधेध्वम् - एध् धातु से मध्यमपुरूष बहुवचन की विवक्षा में ध्वम् प्रत्यय, सीयुट्, शप् , सीयुट् के अवयव सकार का लोप होकर अकार एवं ईकार को गुण एकार होकर **एधेध्वम्** रूप सिद्ध होता है।

एधेय - एध् धातु से उत्तम पुरूष एकवचन में इट् होकर एध्+इ स्थिति में -

20.15 इटोऽत्॥ (3.4.106)

सूत्रार्थ - लिङ् में इट् को अत् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में इटः (6/1), अत् (1/1) दो पद है। लिङः सीयुट् से लिङः इस षष्ठ्यन्त पद की अनुवृत्ति है। तकार उच्चारणार्थ है। इटः स्थानषष्ठी है सूत्रार्थ होता है - लिङ् के स्थान पर विहित इट् के स्थान पर अत् आदेश होता है।

उदाहरण - एधेय

सूत्रार्थसमन्वय - एध्+इ स्थिति में लिङ् के स्थान पर विहित इट् को अ होकर एध्+अ उसके बाद पूर्ववत् अ प्रत्यय को सीयुट्, शप् , सीयुट्, के स् का लोप, अ+ई को गुण कार्य होकर एधेय रूप बनता है।

एधेवहि-एध् धातु से उत्तमपुरूष द्विवचन में वहि प्रत्यय, पूर्ववत् सीयुट्, शप् , सीयुट् के अवयव सकार का लोप होकर अकार एवं ईकार को गुण एकार होकर **एधेवहि** रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार उत्तमपुरूष बहुवचन में **एधेमहि** रूप सिद्ध होता है। एध् धातु से विधिलिङ् में रूप-

विधिलिङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	एधेत	एधेयाताम्	एधेरन्
मध्यमपुरुषः	एधेथाः	एधेयाथाम्	एधेध्वम्
उत्तमपुरुषः	एधेय	एधेवहि	एधेमहि

एध् धातु - आशीर्लिङ् रूप

अब आशीर्लिङ् के रूप सिद्ध करते हैं। यहाँ बहुत सा कार्य विधिलिङ् के समान होता है। फिर भी लिङाशिषि सूत्र से लकार की आर्धधातुक संज्ञा होने से कुछ विशेष कार्य होते है।

एध् धातु से आशिषि लिङ्लोटौ सूत्र से आशीर्लिङ् के प्रथम पुरूष एकवचन में त प्रत्यय एध्+त, इस स्थिति में लिङ सीयुट् सूत्र से त प्रत्यय को सीयुट् आगम जो आदि अवयव होकर एध्+सीय्+त। तब-

20.16 सुट् तिथोः।। (3.4.107)

सूत्रार्थ - लिङ् के अवयव तकार एवं धकार का सुट् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में दो पद है। यहाँ सुट् विधेयबोधक प्रथमान्त पद है। तिथोः यह षष्ठीद्विवचनान्त पद है। तिश्च थ् च इति तिथौ तयोः तिथोः इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः। यहां अवयव षष्ठी है। अतः लिङ् के अवयव तकार एवं थकार यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - लिङ् के अवयव तकार एव थकार को सुट् का आगम होता है। सुट् टित्कारण से लिङ् से त एवं थ के आदि अवयव हो।

उदाहरण - एधिषीष्ट।

सूत्रार्थसमन्वय- एध् धातु से आशीर्लिङ् में त प्रत्यय होकर, एध्+सीय्+त। स्थिति में लिङ् के अवयव तकार को इस सूत्र से सुट् का आगम व अनुबन्ध लोप होकर एध्+सीय्+स्+त स्थिति होता है। यदागम परिभाषा से यहाँ सीय्+स्+त यह समुदाय तिङ् है। लिङाशिषि सूत्र से लिङ आदेश तिङ् की आर्धधातुक संज्ञा होती है। अतः आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् का आगम एवं अनुबन्ध लोप, एध्+इ+सीय्+स्+त स्थिति बनती है। लोपो व्यावलि से सीयुट् के यकार का लोप एध्+इ+सी+स्+त सीयुट् का एवं सुट् का स् एव ईकार से परे होने के कारण आदेश प्रत्ययथोः से मूर्धन्य होकर एधिषीष्त तथा ष्टुना ष्टुः सूत्र से तकार का टकार होकर एधिषीष्ट रूप सिद्ध होता है। इस लकार लिङादेश के आर्धधातुक होने से कर्तरिशप् से शप् नहीं होता। सकार आर्धधातुक अवयव नहीं है अतः लिङःसलोपोऽनन्त्यस्य से स् लोप नहीं होता।

एधिषीयास्ताम्- एध् धातु से आशीर्लिङ् में प्रथमपुरूष द्विवचन में आताम् प्रत्यय होकर, सीयुट् एवं सुट् आगम एध्+सीय्+आस्ताम्। आर्धधातुक संज्ञक होने से आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् का आगम एवं सीयुट् के सकार को षकार होकर एधिषीयास्ताम् रूप सिद्ध होता है।

एधिषीरन्- एध् धातु से आशीर्लिङ् में प्रथमपुरूष बहुवचन में झ प्रत्यय झस्य रन् झ को रन् होकर, सीयुट् इट् आगम एध्+इ+सीय्+रन्। लोपो व्यावलि से सीयुट् के यकार का लोप एवं सीयुट् के सकार को षकार होकर एधिषीरन् रूप सिद्ध होता है।

एधिषीष्ठाः- एध् धातु से आशीर्लिङ् में मध्यमपुरूष एकवचन में थास् प्रत्यय होकर, सीयुट्, इट्, सुट् आगम एध्+इ+सीय्+स्थास् एवं सीयुट् के सकार को षकार, थकार को ष्टुत्व तथा सकार को विसर्ग होकर एधिषीष्ठाः रूप सिद्ध होता है।

एधिषीयास्थाम्- एध् धातु से आशीर्लिङ् में मध्यमपुरूष द्विवचन में आथाम् प्रत्यय होकर, सीयुट् एवं सुट् आगम एध्+सीय्+आस्थाम्। आर्धधातुक संज्ञक होने से आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् का आगम एवं सीयुट् के सकार को षकार होकर एधिषीयास्थाम् रूप सिद्ध होता है।

टिप्पणियाँ

एधिषीध्वम्- एध् धातु से आशीर्लिङ् में मध्यमपुरूष बहुवचन में ध्वम् प्रत्यय होकर, सीयुट्, इट् आगम एध्+इ+सीय्+ध्वम्। सीयुट् के सकार को षकार होकर, यकार लोप एवं इण:षीध्वंलुङिलटां धोऽङात् से धकार को ढकार होकर एधिषीध्वम् रूप सिद्ध होता है।

एधिषीय- एध् धातु से आशीर्लिङ् में उत्तमपुरूष एकवचन में इट् प्रत्यय, इटोऽत् से अत्, सीयुट्, इट् का आगम, सीयुट् के सकार को षकार एधी+षीय् + अ एधिषीय रूप सिद्ध होता है।

एधिषीवहि , एधिषीमहि - एध् धातु से आशीर्लिङ् में उत्तमपुरूष द्विवचन में वहि प्रत्यय, सीयुट्, इट् का आगम, सीयुट् के सकार को षकार एधी+षीय्+वहि, यकार लोप होकर एधिषीवहि रूप सिद्ध होता है। उत्तमपुरूष बहुवचन में एधिषीमहि रूप सिद्ध होता है।

एध् धातु से आशीर्लिङ् में रूप-

आशीर्लिङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुष:	एधिषीष्ट	एधिषीयास्ताम्	एधिषीरन्
मध्यमपुरुष:	एधिषीष्ठा:	एधिषीयास्थाम्	एधिषीध्वम्
उत्तमपुरुष:	एधिषीय	एधिषीवहि	एधिषीमहि

एध् धातु - लुङ् रूप

ऐधिष्ट - भूतकाल में एध् धात्वर्थ व्यापार की विवक्षा में लुङ् सूत्र से लुङ् प्रत्यय, प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में त प्रत्यय होकर एध्+त। इस स्थिति में च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, च्लि को च्ले: सिच् सूत्र से सिच् प्रत्यय, तथा अनुबन्ध लोप होकर एध्+स+त। सिच् आर्धधातुक एवं वलादि होने से आर्धधातुकस्येड् वलादे: सूत्र से इट् का आगम एवं अनुबन्ध लोप होकर एध्+इ+स्+त। आडजादीनाम् सूत्र से आट् का आगम तथा अनुबन्ध लोप, आ+एध्+इ+स्+त। आकार एव एकार को आटश्च से वृद्धि ऐकार, आदेश प्रत्यययो: से सकार को मूर्धन्य होकर ऐधिष्+त तथा ष्टुना ष्टु: से तकार को टकार होकर ऐधिष्ट रूप सिद्ध होता है। प्रथमपुरूष द्विवचन में आताम् में ऐधिषाताम् रूप सिद्ध होता है।

20.17 आत्मनेपदेष्वनत:॥ (7.1.5)

सूत्रार्थ - अत् (ह्रस्व अकार) से भिन्न वर्ण परे हो तो आत्मनेपद प्रत्यय के अवयव झ को अत् (अ) आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में आत्मनेपदेषु (7/3), अनत: (5/1) ये दो पद है। झ: यह षष्ठ्यन्त पद झोऽन्त: सूत्र से आता है। अत: यह प्रथमान्त पद अदभ्यस्तात् सूत्र से अनुवृत्त है। न अत् इति

अनत्, तस्मात् अनतः इति न् तत्पुरूष समासः। सूत्रार्थ होता है - अत् (ह्रस्व अकार) से भिन्न वर्ण परे हो तो आत्मनेपद प्रत्यय के अवयव झ को अत् (अ) आदेश होता है। यह झोऽन्तः का अपवाद है। उससे केवल झकार के स्थान पर अकार होता है झकारोत्तर अकार यथावत् है।

उदाहरण - ऐधिषत।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व सूत्रों से एध्+इस्+झ स्थिति में झोऽन्तः से झ को अन्त प्राप्त किन्तु यहाँ झकार का अनकार सकार से परे है। अतः प्रकृत सूत्र से झ को अकार होकर एध् इस् अत्+अ। उसके बाद सकार को आदेश प्रत्यययोः सूत्र से मूर्धन्य आदेश होकर एधिष्+अत्+अ। आडजीदीनाम् से आट् एवं आटश्च से वृद्धि होकर ऐधिषत रूप सिद्ध होता है।

ऐधिष्ठाः - एध् धातु से लुङ् में मध्यमपुरूष एकवचन में थास् प्रत्यय ,च्लि लुङि सूत्र से च्लि प्रत्यय, च्लि को सिच्, इट् का आगम एवं आडजादीनाम् सूत्र से आट् का आगम होकर आ+एध्+इ+स्+थास् आकार एव एकार को आटश्च से वृद्धि ऐकार, आदेश प्रत्यययोः से सकार को मूर्धन्य होकर ऐधिष्+थास् तथा ष्टुना ष्टुः से थकार को ठकार तथा सकार को विसर्ग होकर ऐधिष्ठाः रूप सिद्ध होता है।

एध् धातु से लुङ् में रूप-

लृङ्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	ऐधिष्यत	ऐधिष्येताम्	ऐधिष्यन्त
मध्यमपुरुषः	ऐधिष्यथाः	ऐधिष्येथाम्	ऐधिष्यध्वम्
उत्तमपुरुषः	ऐधिष्ये	ऐधिष्यावहि	ऐधिष्यामहि

पाठगत प्रश्न 20.3

1. एधिता में इट् विधायक सूत्र कौन है?
2. धि च सूत्र में धादि प्रत्यय में अर्थ कैसे आता है?
3. धि च सूत्र प्रत्यय में किस सूत्र से आता है?
4. एधिताहे में तास् के स् को ह् किस से होता है?
5. लोट के एकार को आम् किस सूत्र से होता है?
6. एधताम् में आम् किस सूत्र से होता है?
7. एधस्व में एकार को व किस से होता है?

8. एध् धातु लोट् में उत्तम पुरूष एकवचन में एधे में कौन सा सूत्र प्रवृत्त होता है।
9. एध् धातु को आट् का आगम किस से होता है?
10. आ+एध्+ल् में वृद्धि किस सूत्र से होती है?
11. लिङ में झ को रन् किस सूत्र से होता है?
12. एधेरन् में झर्जुस् क्यों नहीं होता?
13. एधिषीष्ट में सकार को षकार किस से होता है?
14. एध् धातु लुङ् में ध्वम् में क्या बनता है?
15. आत्मनेपदेष्वनतः सूत्र से क्या होता है?

पाठ का सार

इस पाठ में मुख्य विषय आत्मनेपदी धातुओं के रूपों तथा आत्मनेपदी धातुओं को सिद्ध करने वाले सूत्र की व्याख्या अपेक्षित है। यहाँ एध् धातु प्रतीक रूप में उपस्थित है। इसके ज्ञान से इनके समान अन्य आत्मनेपदी धातुओं के रूप सिद्ध कर सकते हैं।

एध् धातु एधँ वृद्धौ यह धातु धातुपाठ में अकारादिक्रम से पठित है। वृद्धि अर्थक यह धातु अनुदात्तेत है उससे अनुदात्तङित आत्मनेपदम् सूत्र से धातु से परे आत्मनेपद संज्ञक प्रत्यय होते हैं। यह अकर्मक धातु है। अतः कर्ता एवं भाव में प्रत्यय होते हैं कर्म में नहीं। यह धातु सेट है। यहाँ प्रारम्भ से लट् आदि दशलकारों के रूप सिद्ध किये हैं। लट् में तीन नवीन सूत्र है। टित आत्मनेपदानां टेरे सूत्र से टित् लकार में प्रवृत्त होता है। आतोङितः सूत्र से ङितो के आकार को इय् आदेश होता है। तृतीय सूत्र थासः से से टित् लकारों में विद्यमान थास् को से होता है। अनेकाल्शित् सर्वस्य की सहायता से सम्पूर्ण के स्थान पर होता है। एध् धातु गुरूमान और इजादि है। इस विशेषता से लिट् में एध् धातु को आम् प्रत्यय होता है। उससे कृभ्वस्थातूनाम् अनुप्रयोग होता है। आम् प्रकृतिभूत धातु से यदि आत्मनेपद का विधान होता है तो अनुप्रयुज्यमान कृ आदि धातुओं से परे भी आत्मनेपद प्रत्यय होता है। यहाँ आम्प्रत्ययवत्कृञोऽनुप्रयोगस्य सूत्र विधायक है। आदेशौ लिटस्तझयोरेशिरेच् सूत्र से लिट् के स्थान विहित त प्रत्यय को एश् तथा झ प्रत्यय को इरेच् होता है। लिट् के मध्यम पुरूष बहुवचन में इणः षीध्वलुङिलटां धोऽङगात् सूत्र से धकार को मूर्धन्य आदेश (ढकार) होता है।

लृट् में स्यतासीलृलुटोः सूत्र से स्य प्रत्यय होता है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः सूत्र से इडागम होता है। अन्य कोई विशेष कार्य नहीं होता सभी साधारण है। लोट् में रूप सिद्ध करने के लिए तीन सूत्र आते हैं। आमेतः से एकार को आम् का विधान होता है। सवाभ्यां वामौ सूत्र से लोट् के स्थान पर विहित सकार से परे एकार के स्थान पर व एवं वकार से परे एकार के स्थाने अम् का विधान है। एत ऐ सूत्र से उत्तमपुरूष में एकार के ऐकार का विधान होता है। लुङ् में लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र का बाध होकर एध् धातु से आडजादीनाम् सूत्र प्रवृत्त होता है आटश्च को वृद्धि होती है।

विधिलिङ् में सीयुट् का आगम विशेष कार्य है। तथा अनन्त्य सकार का लिङ् सलोपोऽनन्त्यस्य से लोप होता है। झेर्जुस् सूत्र से झ प्रत्यय को जुस् का अपवाद होकर झस्य रन् सूत्र से रन् होता है। इटोऽत् सूत्र से लिङादेश के इट् को अ होता है।

आशीर्लिङ् में सुट तिथोः सूत्र से तकार व थकार को सुट् का आगम होता है। लुङ् लकार के झ को अत् का विधान होता है। सर्वत्र आट् आगम, च्लि प्रत्यय, च्लि का सिच्, सिच् को इट् का आगम सकार को मूर्धन्य आदि कार्य होते है। लृङ् में स्यतासीलृलृटोः सूत्र से स्य प्रत्यय अंग को अट् का आट् का विधान रूप को इट् का आगम तथा सकार को मूर्धन्य आदि कार्य होते हैं।

योग्यतावर्धन

इस पाठ में कुछ विशेष विषय सूत्रगत या प्रक्रियागत है वे यहाँ आलोच्य है। अचोऽन्त्यादि टि सूत्र से टि संज्ञा की जाती है। एक पद में बहुत से पद होते है। उन अचों में जो अन्तिम अच् जिसके आदि में हो, उसकी टि संज्ञा होती है। उससे परे कोई हल् वर्ण हो तो उन सभी की टि संज्ञा होती है। सार्वधातुकम् अपित् यह अतिदेशसूत्र है अपित अर्थात् पित् भिन्न जो सार्वधातुक है वह ङित् वत् होता है। अर्थात् अपित् सार्वधातुक ङित् नहीं होता है। फिर भी इस सूत्र से विशेष आदेश से वह डिन्त होता है। तद्गुण सविज्ञान बहुव्रीहि अतद्गुणसंविज्ञानबहुव्रीहि ये बहुव्रीहि समास के दो भाग अवश्य जानने चाहिए। उसे हमारे द्वारा आवश्यक रूप से समास प्रकरण में देख सकते हैं। बहुव्रीहि अन्य पदार्थ प्रधान होता है। फिर भी यहाँ समस्यमान पदों का अन्वय या सम्बन्ध अर्थों को प्राप्त किया जाता है वहाँ तद्गुण संविज्ञान बहुव्रीहि होता है। जहाँ वह सम्बन्ध नहीं प्राप्त होता वहाँ अतद्गुण संविज्ञान बहुव्रीहि होता है। अनेकाल्शित् सर्वस्य यह परिभाषा सूत्र है। इस सूत्र से जो अनेकाल् और शित् आदेश है वह सम्पूर्ण के स्थान पर होता है। यहाँ लिटस्तझयोरशिरेच् सूत्र से सम्पूर्ण तकार के स्थान पर एश् आदेश होता है क्योंकि एश् पद अनेकाल् है।

पाठांत प्रश्न

1. टित आत्मनेपदानां टेरे सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. टेरे ङितः सूत्र की व्याख्या कीजिए।
3. आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4. आमेतः सूत्र की व्याख्या कीजिए।
5. इटोऽत् सूत्र की व्याख्या कीजिए।
6. सुट् तिथोः सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. आत्मनेपदेष्वनतः सूत्र की व्याख्या कीजिए।

8. आत्मनेपद प्रकरण का सार लिखिए।

9. एधते एधाते एधन्ते एधे एधसे एधामहे। एधांचक्रे एधांचक्रषे एधांचक्रद्वे एधांचक्रमहे एधाम्बभूव एधामास एधिता एधिताध्वे एधिताहे एधिष्यते एधताम् एधस्व एधध्वम् एधै। ऐधत ऐधे ऐधामहि। एधेत एधेरन्एधेय एधिषीष्ट एधिषीष्ठाः एधिषीय। ऐधिष्ट ऐधिषत ऐधिषि। की ससूत्र सिद्ध कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

20.1

1. एध् धातु का अर्थ वृद्धि है।
2. धातु प्रकरण में मूलरूप एधँ् वृद्धौ धातु पठित है।
3. एध् धातु अनुदात्तेत् (अनुदात्त इत्) है।
4. अनुदात्तेत होने से आत्मनेदपदी है।
5. अनुदात्तङित आत्मनेपदम् सूत्र से आत्मनेदपदी है।
6. एध् धातु आत्मनेपदी है इसलिए तिपादि नौ प्रत्यय नहीं होते।
7. एध् धातु सेट् है।
8. एध् धातु अकर्मक है।
9. एधते में टित आत्मनेपदानां टेरे से एकार होता है।
10. अचों में जो अन्तिम अच्, जिसके आदि में हो, उसकी टि संज्ञा होती है।
11. एधते एधेते एधन्ते। एधसे एधेथे एधध्वे।एधे एधावहे एधामहे।
12. आताम् सार्वधातुकमपित् से ङित् है।
13. आताम् का आ आतो ङितः से इय् होता है।
14. आतो ङितः से अत् परे ङित् के आ को इय् होता है।

20.2

1. ऋच्छ् से भिन्न ऐसी इजादि धातु जो गुरूवर्ण से युक्त हो, उस से परे आम् प्रत्यय हो जाता है लिट् परे हो तो।
2. इजादि और गुरूमान धातु को आम् प्रत्यय होता है।
3. आम्प्रत्यय में आम् विधान अतद्गुण संविज्ञान बहुव्रीहि से होता है।

4. परस्मैपद।
5. आमः सेआम् से परे का लुक् होता है।
6. यथा संख्यमनुदेशः समानाम् की परिभाषा से।
7. पुस्तक में देखे।
8. पुस्तक में देखे।
9. इणः षीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात् से ध्वम् केधकार से मूर्धन्य ढकार होकर होता है।

20.3

1. एधिता में आर्धधातुके वलादेः से इट् का आगम होता है।
2. धि प्रत्यये में यस्मिन्विधिस्तदादावल्ग्रहणे परिभाषा से तदादिविधि से धकारादि प्रत्यये यह अर्थ प्राप्त होता है।
3. धि च से प्रत्ययः के अधिकार प्रत्यये यह अर्थ प्राप्त होता है।
4. एधिताहे में तास् के स को हकार ह एति सूत्र से होता है।
5. लोट् के एकार को आम् आमेत सूत्र से होता है।
6. एधिताम् में आमेत सूत्र से आम् होता है।
7. एधस्व में एकार को सवाभ्यांवामौ से व होता है।
8. एधे में एत ऐ सूत्र होता है।
9. एध् धातु में आडजादीनाम् से आट् होता है।
10. आ+एध्+ल् में आटश्च से वृद्धि होती है।
11. लिङ् में झ को रन् झस्यरन् से होता है।
12. एधेरन् में झस्यरन् का अपवाद झेर्जुस् नहीं होता।
13. एधिषीष्ट में आदेश प्रत्यययोः से षकार होता है।
14. एध् धातु से ध्वम् में ऐधिढ्वम् होता है।
15. आत्मनेपदेष्वनतः से झ को अत् होता है।

21

अदादि से दिवादि तक - अद्, हु, दिव् धातुएं

आप पूर्व में भ्वादिगण का परिचय प्राप्त कर चुके है। भ्वादिगण ही तिङन्त प्रकरण का हृदय है। क्योंकि धातु रूप प्रक्रिया में जो मूलस्थानीय सूत्र हैं वे भ्वादिगण में पढ़ चुके हैं। आप जानते है कि व्याकरण को सपोनक्रम में पढ़ना चाहिए। यदि भ्वादिगण को सम्यक् रूप पढ़ लिया तो अन्य गणों में कठिनाई नहीं होती। इस पाठ में अदादिगण, जुहोत्यादिगण और दिवादिगण की समालोचना करेंगे। प्राचीन आचार्यों का मत है कि तिङ् प्रत्यय परे रहते धातु को जिन शप् आदि प्रत्ययों का विधान होता है उनकी विकरण संज्ञा होती है। अत: शप् , श्यन्, श ये तीन विकरण है। प्रतिगण विकरण भेद है उनको जानना चाहिए। विकरण भेद से कैसे रूप भेद होता है इस आपको आगे दिखायेंगे। जैसे- अद्+शप् (लुक्) + ति=अत, हु+शप् (श्लु) + ति= जुहोति, दिव्+श्यन्+ति= दीव्यति। बहुत सी धातुओं के रूप बिना प्रक्रिया के लिखेंगे। वहां कारण यह है कि आप भ्वादिप्रकरण का ज्ञान लेकर उसकी प्रक्रिया में लिखने के लिए समर्थ होंगे। आपके बोधसौकर्म के लिए प्रतिगण प्रथम धातु के सभी रूप दिये गये है और उनको कष्ठस्थीकरण करने से गणपरिचय सरल होगा। अन्य धातु रूप अन्यग्रन्थों में देखे जाने चाहिए। यद्यपि पूर्वोक्त नवीन भ्वादिगण प्रकरण में जो सूत्र चर्चित है उनमें कुछ साधारण सूत्र होने से अग्रिम अदा आदि प्राण पाठ में अपेक्षा हो फिर भी उनकी व्याख्या पाठ विस्तार भय होने से नहीं करेंगे। प्रति धातु सभी रूप भी प्रदर्शित नहीं करेंगे। अप्रदर्शित रूप स्वयं सिद्ध करे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप -

- प्रतिगण विकरणों को जानेंगे;
- विकरण विधायक सूत्र को जानेंगे;

- विशेष सूत्रों को व्याख्या समझेंगे;
- अद् धातु के रूप सिद्ध कर सकेंगे;
- हु धातु के रूप सिद्ध कर सकेंगे;
- दिव् धातु के रूप सिद्ध कर सकेंगे;
- इन धातुओं को जानकर अन्य धातु रूप सिद्ध कर सकेंगे;
- प्रदर्शित वैकल्पिक रूप भी जानेंगे।

अदादिगण

अद् धातु भक्षणार्थ में विद्यमान होने से अदादिगण में पठित भूवादयो धावत से धातु संज्ञा, सकर्मक, अनिट् अन्ताकार उदात्तेत है। लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः सूत्र से कर्ता अर्थ में दश लकार प्राप्त होते हैं। वर्तमान क्रियावृत्ति की विवक्षा में वर्तमाने लट् से लट् प्रत्यय, उपदेशेऽजनुनासिक इत् से अकार की, हलन्त्यम् से टकार की इत्संज्ञा, तस्यलोपः से दोनों का लोप लकार शेष होकर अद्+ल् इस स्थिति में तिप्तस्झिसिप्थस्थ मिप्वस्मस् तातांझथासाथांध्वम् इड्वहिमहिङ् सूत्र से अष्टादश लादेश प्राप्त, उनमें से लः परस्मैपदम् सूत्र से परस्मैपद संज्ञा, उन सब में तिङ् प्रत्ययों में परस्मैपदसंज्ञक या आत्मनेपद संज्ञक हो इस सन्देह में अद् धातु से आत्मनेपद निमित्तहीन होने से शेषात् कर्त्तरि परस्मैपदम् सूत्र से कर्ता मं परस्मैपद संज्ञक नौ प्रत्यय प्राप्त और तिङ्स्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्ययोत्तमाः इस क्रम से तीनों प्रथम मध्यमोत्तम संज्ञा में मध्यमोत्तम का अविषय होने से शेषे प्रथमः सूत्र से प्रथम संज्ञक तीन प्राप्त, उनमें भी तान्येकवचनद्विवचन बहुवचनान्येकशः से प्राप्त प्रथमादि संज्ञक तीनों की एकवचन, द्विवचन बहुवचन संज्ञा होती है। वहाँ कर्ता की एकत्व की विवक्षा में द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने सूत्र से एकवचन संज्ञक तिप् प्रत्यय प्राप्त होता है। हलन्त्यम् से पकार की इत्संज्ञा तस्य लोपः से लोप होकर अद्+ति। तिप् की तिङत्व एवं धात्वधिकारोक्त होने से तिङ्शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा तथा कर्तरिशप् से शप् होकर अद्+शप्+ति स्थिति बनती है तब।

21.1 अदिप्रभृतिभ्यः शपः॥ (2.4.72)

सूत्रार्थ - अदादिगण की धातुओं से परे शप् का लुक् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में अदिप्रभृतिभ्यः (5/3), शपः (6/1) ये दो पद है। अदिः प्रभृतिः (आदिः) येषा ते आदिप्रभृतयः इति तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमासः तेभ्यः अदिप्रभृतिभ्यः। ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञोः सूत्र से लुक् (1/1) की अनुवृत्त है। दश धातुगणों में अदादि द्वितीय धातुगण है। सूत्रार्थ होता है - अदादिगण में पठित धातुओं से परे शप् का लुक् होता है। प्रत्ययस्य लुक्श्लुलुपः सूत्र से प्रत्यय के अदर्शन को लुक् होता है। लुक् एवं लोप दोनों प्रत्यय अदर्शन रूप समान फलित होने पर भी पाणिनी ने लोप नहीं कहा। लोप होता है यह कहते है

टिप्पणियाँ

तो प्रत्यय लोपे प्रत्यलक्षणम् (1.1.62) से प्रत्ययलक्षण से इतः वित्तः विदन्ति आदि शब्दों में शप् निमित्तक गुण प्राप्त होता है। अतः उसके कारण के लिए लुक् कहा गया है। न लुमतागंस्य (1.163) सूत्र से प्रत्यय लक्षण निषेध होने पर शब्द निमित्तक गुण नहीं होता।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - अद्+शप्+ति स्थिति में अदिप्रभृतिभ्यः शपः सूत्र से शप् का लुक् होकर अद्+ति स्थिति में खरि च सूत्र से दकार को चर्त्व तकार आदेश होकर **अत्ति** रूप बनता है। इसी प्रकार प्रथम पुरुष द्विवचन में तस्,शप् लोप, चर्त्व एवं सकार को विसर्ग होकर **अत्तः।** बहुवचन में झि को अन्ति होकर **अदन्ति।** सिप्, थस् और थ में चर्त्व। उत्तम पुरुष में खर् का अभाव होने से चर्त्व नहीं होता।

इस प्रकार **लट्** परस्मैपद में रूप- **अत्ति अत्तः अदन्ति। अत्सि अत्थः अत्थ। अद्मि अद्वः अद्मः।**

(सूत्रम् खरि च (8.4.55) खर् परे होने पर झलों को चर् हो।)

लिट् में अद्+लिट् इस स्थिति में अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है -

21.2 लिट्यन्यतरस्याम्।। (2.4.40)

सूत्रार्थ - लिट् परे होने पर अद् के स्थान पर घस्लृ आदेश विकल्प से हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में लिटि (7/1), अन्यतस्याम् सप्तमीविभक्ति प्रतिरूपक अव्यय ये दो पद है। अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति सूत्र से अदः (6/1) एवं लुङ्सनोर्घस्लृ सूत्र से घस्लृ (1/1) की अनुवृत्ति है। लृकार अनुनासिक होने से इत् संज्ञक है। घस् शेष रहता है अनेकाल् होने से सर्वादेश होता है। लृदित् करने का प्रयोजन पुष्पऋिद्युताघ्लृदितः सूत्र से च्लि को अङादेश विधान है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - अद् धातु से अनद्यतनभूत परोक्षार्थवृत्ति की विवक्षा में तिप् प्रत्यय, अनुबन्ध होकर अद्+ति स्थिति में परस्मैपदानां णलतुसुस् थलथुस णल्वमाः सूत्र से तिप् को णल् सर्वादेश एवं अनुबन्ध लोप होकर अद्+अ स्थिति में अनेकाल्शित् सर्वस्य की परिभाषा से सम्पूर्ण अद् को लिट्यन्यतस्याम् सूत्र से घस्लृ ओदश एवं अनुबन्ध होकर घस्+अ। लिटिधातोरनभ्यासस्य से द्वित्व पूर्व घस् की पूर्वोऽभ्यासः से अभ्यास संज्ञा, हलादि शेषः से अभ्यास के आदि हल् शेष होकर घ घस्+अ, कुहोश्चुः से घकार को झकार तथा अभ्यासे चर्च से झकार को चकार होकर चघस्+अ। अत उपधायाः से उपधासंज्ञक घकारोत्तर अकार को वृद्धि आकार होकर **जघास** रूप सिद्ध होता है।

लिट् में प्रथमपुरूष द्विवचन में तस् को अतुस्, अद् को घस्लृ, द्वित्व होकर घस् घस्+अतुस् स्थिति में गमहनजनखनघसा लोपः क्ङित्यनङि (6.4.98) सूत्र से आदि उपधा का लोप प्राप्त द्विवचनेऽचि से निषेध। कुहोश्चुः से अभ्यास के घ को झ, जश्त्व होकर जकार, हलादि शेषः से आदि हल् शेष ज घस्+अतुस् इस अवस्था में उपधा लोप होकर ज ध् स् अतुस् स्थिति में सकार प्रत्यय का अवयव या आदेश नहीं होने से आदेश प्रत्यययोः सूत्र प्रवृत्त नही होता तब।

21.3 शासिवसिघसीनां च।। (8.3.60)

सूत्रार्थ - इण् प्रत्याहार या कवर्ण से परे शास्, वस्, घस् के सकार का षकार आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में शासिवसिघसीनाम् (6/3), च अव्यय ये दो पद है। इण्कोः (5/1) का अधिकार है। सहेः साडः सः से सः (6/1), अदपदान्तस्य मूर्धन्यः से मूर्धन्य (1/1) की अनुवृत्ति है। इण् प्रत्याहार है। यहां णकार लण् से ग्रहित है न कि अइइण् से। कुः से कवर्ग का ग्रहण है। सूत्रार्थ होता है- इण् प्रत्याहार या कवर्ण से परे शास्, वस्, घस् के सकार का षकार आदेश होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व ज घ् स्+अतुस् स्थिति में प्रकृत्त सूत्र से सकार को षकार (मूर्धन्य) होकर ज घ् ष् अतुस्। इसके बाद खरि च से घकार को ककार होकर ज क् ष् अतुस् वर्ण सम्मेल तथा सकार का रुत्व एवं विसर्ग होकर **जक्षतुः** रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार **चक्षुः** की प्रक्रिया है।

लिट् के मध्यम पुरूष एकवचन की विवक्षा में सिप्, सिप् को थल् होकर घस्+थ, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् आगम प्राप्त किन्तु उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध। परन्तु क्रादिनियमानुसार नित्य इट् आगम में द्वित्व आदि कार्य होकर **जघसिथ** रूप बनता है। इसी प्रकार वस् और मस् में इट् आगम करना चाहिए।

तिप्-सिप् को छोड़कर अन्यत्र असंयोगाल्लिट् कित् से कित्वत् भाव होता है। अतः वहाँ गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि सूत्र से उपधालोप में **जक्ष** रूप बनता है। उत्तम पुरूष एकवचन में मिप्, णल्, णल् को विकल्प से णित् होने से अत उपधायाः से वृद्धि होकर **जघास** रूप सिद्ध होता है णित्व अभाव में वृद्धि न होकर **जघस** रूप सिद्ध होता है।

इस प्रकार लिट् परस्मैपद से घस्लृ आदेश के पक्ष में रूप **जघास, जक्षतुः, जक्षुः। जघसिथ्, जक्षथुः, जक्षः। जघास-जघस, जक्षिव, जक्षिम।** घस्लृ आदेश के अभाव पक्ष में अभ्यास के अकार को दीर्घ आकार होकर **आद, आदतुः आदुः** रूप सिद्ध होते है।

सूत्र - अत आदेः (7.4.70) अभ्यास के आदि अकार को दीर्घ हो।

सिप् में सिप् को थल् होकर अद्+थ स्थिति में अदः दकारान्तानुदात्त में पाठ होने से इट् निषेध होता है। किन्तु क्रादिनियम से पुनः इट् प्राप्त होता है। उससे उपदेशेऽत्वतः सूत्र से थल् में इट् निषेध में ;तो भारद्वाजस्य सूत्र से विकल्प से इट् प्राप्त होता है, किन्तु थल् में नित्य इट् विधान अभीष्ट है। अतः आगे सूत्र दिया है।

21.4 इडत्त्यर्तिव्ययतीनाम्।। (7.2.66)

सूत्रार्थ - अद्, ;, और व्येञ् इन तीन धातुओं से परे णल् को नित्य इट् का आगम हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में इट् (1/1), अत्तयर्तिव्ययतीनाम् (6/3) ये दो पद है। अचस्तास्वत्थल्यनिटो नित्यम् से थलि पद की अनुवृत्ति है। तस्य च षष्ठ्येकवचनान्त से विभिक्ति विपरिणाम है। अद्, ऋ व्येञ् इन से इक्श्तिपौ धातुनिर्देशे से शित् प्रत्यय है। उससे अत्तिश्च अर्तिश्च व्ययतिश्च तेषाम् अत्त्यर्तिव्ययतीनाम् इति इतरोतरयोगद्वन्द्वः। इट् का टकार इत्संज्ञक है। आद्यन्तौ टकितौ से आदि अवयव होता है। सूत्रार्थ होता है - अद्, ऋ, और व्येञ् इन तीन धातुओं से परे णल् को नित्य इट् का आगम होता है।

उदाहरण - ; धातु से आरिथ। व्येञ् धातु से विव्ययिथ। अद् धातु से **आदिथ।**

सूत्रार्थसमन्वय - पूर्व में अद्+थ स्थिति में अद् से परे थल् प्रत्यय है। अतः प्रकृत सूत्र से नित्य इडागम, द्वित्व, हलादिशेष, होकर अ अद् इ+थ तथा अत: आदेः से अभ्यास के अकार को दीर्घ एवं सवर्णदीर्घ तथा वर्ण सम्मेल होकर आदिथ रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार लिट् में घस्लृ आदेश के अभाव पक्ष में आद्, आदतुः, आदुः। आदिथ आदथुः आद। आद, आदिव, आदिम रूप होते है। पाठ विस्तार भय से सभी को सूत्र प्रयोग करके प्रदर्शित नहीं किया गया।

भविष्यत्यनद्यतनार्थ क्रियावृत्ति की विवक्षा में अनद्यत ने लुट् से कर्ता अर्थ में लुट्, प्रथमाएकवचन में तिप्, अनुबन्धलोप, तिङ्शित् सार्वधातुकम् से तिप् की सार्वधातुकसंज्ञा, कर्ता अर्थ में कर्तरिशप् से प्राप्त शप् का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे तासी प्रत्यय होकर अद् तास्+ति स्थिति में यथासख्यनुपदेशः समानाम् की परिभाषा से लुटः प्रथमत्य डारौरसः सूत्र से तिप् को डा आदेश अनुबन्धलोप होकर अद्+तास्+आ, हेः सूत्र से अभ्यस्त के टि आस् का लोप अद्+त+आ, खरिच से दकार को तकार होकर **अत्ता** रूप सिद्ध होता है।

लुट् परस्मैपद में रूप-**अत्ता अत्तारौ अत्तारः। अत्तासि, अत्तास्थः, अत्तास्थ। अत्तास्मि, अत्तास्वः अत्तास्मः।** लुट् में सर्वत्र एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से इट् निषेध होता है।

भविष्यद् अर्थ में अद् धातु से क्रियार्थ क्रिया के न होने पर लुट् शेषे च सूत्र से कर्ता अर्थ में लृट्, प्रथमपुरूषएकवचन में तिप्, अनुबन्धलोप, तिङ्शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा तथा कर्तरिशप् से शप् प्राप्त किन्तु स्यतासीलृलुटोः से स्य आदेश, सार्वधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होकर अद्+स्य+ति उसके बाद खरिच से दकार को तकार होकर **अत्स्यति** रूप सिद्ध होता है। अन्य रूप इसी प्रकार समझें। लृट् परस्मैपद में रूप-**अत्स्यति, अत्स्यतः अत्स्यन्ति। अत्स्यसि अत्स्यथः अत्स्यथ। अत्स्यामि अत्स्यावः, अत्स्यामः।**

विधिनिमन्त्रामन्त्राधीष्टसम्प्रश्न प्रार्थन आदि अर्थों में लोट् च से लोट्, प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में तिप्, सार्वधातुकसंज्ञा, कर्ता अर्थ में शप् आगम, शप् को लुक् होकर अद् ति। एरूः से ति के इ को उ तथा चर्त्व होकर **अत्तु** रूप सिद्ध होता है। पक्ष में ङिच्च सूत्र की अपेक्षा से परत्व से अनेकाल्शित् सर्वस्य की परिभाषा से तुह्योस्तातङ्ङाशिष्यन्यतरस्याम् सूत्र से तु को तातङ् सर्वादेश होकर **अत्ताम्** रूप सिद्ध होता है। तस् में लोटोलङ्वत् सूत्र से लङ् के समान तस्थस्थमिपाम् तन्तान्ताम: से ताम् होकर अत्ताम् रूप सिद्ध होता है। सि प्रत्यय में झकार के स्थान पर अन्त् आदि आदेश होकर अदन्तु रूप बनता है। मध्यपुरूष एकवचन में सिप्, अनुबन्ध लोप, सेर्ह्यपिच्च से सिप् को हि आदेश शप् को लुक् होकर अद्+हि तब-

21.5 हु झल्भ्यो हेर्धिः॥ (6.4.101)

सूत्रार्थ - हु तथा झलन्त धातु से परे हि को धि आदेश होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में हुझल्भ्यः (5/3), हेः (6/1), धिः (1/1) ये तीन पद है। हुश्च झलश्च तेषां इतरेतरयोगद्वन्द्व हुझलः तेभ्यः हुझल्भ्यः इति पंचमी बहुवचन। हेः षष्ठ्येकवचनान्त। धिः प्रथम एकवचनान्त है। अंगस्य का अधिकार है। उसका झल्भ्यः विशेषण है अतः तदन्त विधि में झलन्तेभ्यः अर्थ प्राप्त होता है। धि अनेकाल् है। अनेकाल्शित् सर्वस्य परिभाषा से हि के स्थान पर धि सर्वादेश होता है। हु (हवन करना) जुहोत्यादिगण की प्रथम धातु है सूत्रार्थ होता है- हु तथा झलन्त धातु से परे हि को धि आदेश होता है।

उदाहरण - हु धातु से उदाहरण आगे देखेंगे। यहा झलन्त का उदाहरण है। पूर्व में अद् हि स्थिति में प्रकृत सूत्र से धि सर्वादेश होकर **अद्धि** रूप सिद्ध होता है। पक्ष में तातङ् से अत्तात्। मध्यम पुरूष में रूप अद्धि-अत्ताम्, अत्तम् अत्त रूप बनते है।

उत्तम पुरूष एक वचन में मिप्, शप् लोप, मेर्निः से मि को नि आडुत्तमस्य पिच्च से आट् का आगम होकर अदानि रूप बनता है। वस् से अदाव, मस् से अदाम। नित्यं ङितः से सकार का लोप होता है।

अनद्यतनभूतक्रियावृत्ति की विवक्षा में अनद्यतने लङ से कर्ता अर्थ में आडजादीनाम् से आट् आगम होता है, प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, शप् को लुक्, इतश्च से ति के इकार का लोप होकर आ+अद्+त् स्थिति बनती है। तब-

21.6 अदः सर्वेषाम्॥ (3.4.111)

सूत्रार्थ - अद् धातु से परे अपृक्त सार्वधातुक को अट् का आगम हो सब आचार्यों के मत में।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में अदः 5/1, सर्वेषाम् (66/3) ये दो पद है। अस्तिसिचोऽपृक्ते से अपृक्ते पद की अनुवृत्ति है। उसका विभक्ति विपरिभाष से अपृक्तस्य षठ्यन्तिता से विपरिणाम है। अङ् गार्ग्यगालवयोः से अट् (1/1) पद की अनुवृत्ति है। सूत्रार्थ होता है- अद् धातु से उत्तर अपृक्त सार्वधातुक प्रत्यय को अट् का आगम होता है सभी आचार्यो के मत में। टित् होने से आदि अवयव होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व आ+अद्+त् यहाँ अपृक्त सार्वधातुक तकार है अतः प्रकृत्त सूत्र से अट् का आगम होकर अ+अद्+अ+त् तथा वर्ण सम्मेलन एवं आटश्च से वृद्धि होकर **आदत्** रूप सिद्ध होता है। तस् झि, थस्, थ, वस्, मस् में अट् नहीं क्योंकि एकाल् प्रत्यय का अभाव है। अद् धातु से झि में आट्+अद्+झि (अति) इकार लोप, वृद्धि, तथा संयोगन्तस्य लोपः होकर **आदन्** रूप बनता है। सिप् में आद्+अस्, स को रूत्व विसर्ग होकर **आदः** रूप बनता है। वस् एवं मस् में नित्यं ङितः से सकार का लोप होता है। लुङ् परस्मैपद में **आदत् आत्ताम्, आदन्। आदः आत्तम् आत्त। आदम् आद्व, अद्म** रूप बनता है।

टिप्पणियाँ

विधि निमन्त्रण आमन्त्रण अधीष्ट सम्प्रश्न प्रार्थना वृत्तितत्व की विवक्षा में विधिनिमन्त्रामन्णधीष्टसम्प्रश्न प्रार्थनेषु लिङ् से अद् धतु से प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, अनुबन्ध लोप, शप् लोप अद्+ति, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो ङिच्च सूत्र से यासुट् का आगम, अनुबन्धलोप अद्+यास्+ति, सुट् तियोः सूत्र में तकार को सुट् आगम, अनुबन्ध लोप अद्+यास्+स्+ति। लिङ सार्वधातुक होने से लिङ सलोपोऽनन्त्यस्य सूत्र से अनन्त्य दोनो सकारों का लोप होकर तथा इतश्च से इकार का लोप होकर **अद्यात्** रूप बनता है। झि में आद्या उस् अवस्था में उस्यपदान्तात् सूत्र से पररूप एवं सकार विसर्ग होकर **आदयुः**। तस्तस्थमिपां तान्तन्ताम: सूत्र से तस् को ताम्, थस् को तम् थ को त आदेश। वस्, मस् में नित्य सकार लोप, इस प्रकार लिङ में रूप **अद्यात् आद्याताम् अद्युः। अद्याः, अद्यातम् अद्यात। अद्याम्, अद्याव, अद्याम।**

आशीर्वाद अर्थ में आशिषिलिङ्लोटौ सूत्र से कर्ता अर्थ में आशीर्लिङ् में तिप्, यासुट्, सुट्, इतश्च से इकार लोप अद्+यास्+स्+त् स्थिति में लिङाशिषि से सकार का लोप नहीं। स्कोः संयोगाद्योरन्ते च सूत्र से संयोग के आदि सकार का लोप होकर अद्यास्+त् तथा पुनः संयोगादि सकार लोप होकर **अद्यात्** रूप बनता है। तस् में तस् का ताम् होकर **अद्यास्ताम्**, रूप बनता है - आशीर्लिङ में रूप-**अद्यात्, अद्यास्ताम्, अद्यासुः। अद्याः, अद्यास्तम्, अद्यास्त। अद्यासम्, अद्यास्व, अद्यास्म।**

लुङ में घस्लृ इत्यादि विधायक सूत्र होते है -

21.7 लृङ्सनोर्घस्लृ॥ (2.4.37)

सूत्रार्थ - लृङ् या सन् प्रत्यय परे होने पर अद् के स्थान पर घस्लृ आदेश होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में लुङ्सनोः (7/2), घस्लृ (1/1) ये दो पद है। लुङ् च सन् च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्व। लुङ्सनौ, तयोः लुङसनोः। अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति सूत्र से अदः (6/1) की अनुवृत्ति है। घस्लृ का लृकार अनुनासिक होने से इत्संज्ञा तथा घस् शेष रहता है। अनेकाल् होने से सम्पूर्ण के स्थान पर होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - अद् धातु से भूतार्थ क्रियावृत्ति की विवक्षा में लुङ् से कर्ता अर्थ में प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, इकारलोप, प्रकृतसूत्र से अद् के स्थान पर घस्लृ, सर्वादेश एवं अनुबन्ध लोप घस्+त। शप् का बाध कर च्लि, च्लौ पुषादिद्युतघ्लृदितः परस्मैपदेषु सूत्र से च्लि के स्थान पर अङ् आदेश लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वडुदात्तः सूत्र से घस् अंग को अट् आगम, अनुबन्ध लोप, होकर अ घस्+अ+त् वर्ष सम्मेलन होकर **अघसत्** रूप सिद्ध होता है। इस प्रकार लुङ में **अघसत् अघसताम्, अघसन्। अघसः अघसतम् अघसत। अघसम्, अघसाव अघसाम।**

क्रिया की अनिष्पत्ति में लिङ निमित्तेलृङक्रियातिपति से अद् से कर्ता अर्थ में लुङ्, आडजाडीनाम् सूत्र से आट् आगम, आटश्च से वृद्धि प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, इकार लोप, शप् का स्य होकर, आ+अद्+स्य+त् इट् निषेध एवं चर्त्व होकर **आत्स्यत्** रूप बनता है। लृङ में रूप **आत्स्यत् आत्स्यताम् आत्स्यन्। आत्स्यः आत्स्यतम्, आत्स्यत। आत्स्यम्, आत्स्याव, आत्स्याम।**

पाठगत प्रश्न 21.1

1. धातु गण कितने हैं?
2. शप् का लुक किससे होता है?
3. अघसत् यहा घस्लृ आदेश किससे होता है?
4. अदः सर्वेषाम् का अर्थ क्या है?
5. अद्धि में धि आदेश किससे होता है?
6. जक्षुः में षत्व किससे होता है?
7. जघास में घस्लृ आदेश किससे होता है?
8. अदिप्रभृतिभ्यः शपः यहाँ प्रभृति शब्द का अर्थ क्या है?
9. अद् धातु का क्या अर्थ है?
10. अद् धातु लिट प्रथम पुरूषैकवचन में कितने और कौन से रूप होते है?

जुहोत्यादिगणः

हुदानादनयोः इस सकर्मक परस्मैपद अनिट् जुहोत्यादिगणीय धातु से लट् के प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, सार्वधातुकसंज्ञा होने से कर्तरिशप् होकर हुः शप् +ति स्थिति बनती है तब-

21.8 जुहोत्यादिभ्यः श्लुः॥ (2.4.75)

सूत्रार्थ - जुहोत्यादिगण से शप् को श्लु (अदर्शन)हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में जुहोत्यादिभ्यः (5/3), श्लुः (6/1) ये दो पद है। जुहोतिः आदिः येषां ते जुहोत्यादयः तभ्यः जुहोत्यादिभ्यः। जुहोत्यदिगण दशगणो में से तृतीय है। जुहोति यह हु धातु धातु निर्देश के लिए इक् श्तिपौ धातुनिर्देशे वार्तिक से श्तिप् रूप होता है। सूत्रार्थ होता है- जुहोत्यादिगण से विहित शप् का श्लु होता है। श्लु की भी प्रत्यय अदर्शन संज्ञा होती है। जैसे अदादिगण में लुक् श्लु और लुप् संज्ञात्रय होती है। उससे हु आदि धातुओं से विहित शप् का अदर्शन ग्लित होता है। श्लु और लुप् दोनों का प्रत्ययादर्शन रूप समान फलकत्व होने पर भी यहाँ श्लु कहा है न कि लुप्। क्योंकि श्लु कहते है तो प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् से प्राप्त प्रत्ययलक्षण कार्य का न लुमतांगस्य सूत्र से निषेध होता है। किन्तु लोप होने पर स्थानिवद्भाव होता है। श्लु करण में स्थानिवद् भाव नहीं है। श्लु संज्ञा का फल अग्रिम सूत्र में ज्ञात करेंगे।

टिप्पणियाँ

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में हु+शप्+ति स्थिति में प्रकृत सूत्र से शप् को श्लु होकर हु+ति स्थिति बनती है।

21.9 श्लौ॥ (6.1.10)

सूत्रार्थ - श्लु परे होने पर धातु को द्वित्व हो।

सूत्र व्याख्या - इस सूत्र में श्लौ (7/1) एक पद है। यह विधि सूत्र है। लिटि धातोरनभ्यास्य से धातोः (6/1), एकाचो द्वे प्रथमस्य से द्वे (1/2) पदो की अनुवृत्ति होती है, अतः सूत्रार्थ होता है-श्लु परे होने पर धातु को द्वित्व होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में हु+ति स्थिति श्लु करने पर हुई। अतः प्रकृत सूत्र से द्वित्व होकर हु हु ति स्थित में पूर्वोऽभ्यासः से प्रथम भाग की अभ्यास संज्ञा तथा कुहोश्चुः से अभ्यास के हु को चवर्ग गुणत होने से झकार होकर झु हु ति, अभ्यासे चर्च से जश्त्य होकर जुहु+ति एवं तिप् सार्वधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से हु के उकार को गुण ओ होकर **जुहोति** रूप सिद्ध होता है।

तिप्, सिप्, मिप् इन पित् प्रत्ययों को छोड़कर अन्य सभी प्रत्ययों को सार्वधातुकमपित् से ङित्वद् होने से क्विङति च से गुण निषेध होकर तस् में **जुहुतः** रूप बनता है।

प्रथम पुरूष बहुवचन में झि प्रत्यय, शप् को श्लु, द्वित्व कार्य, अभ्यास चर्त्व, जश्त्व होकर जु हु झि स्थिति में झोऽन्तः से झ को अन्तादि प्राप्त किन्तु-

21.10 अदभ्यस्तात् ॥ (7.1.4)

सूत्रार्थ - अभ्यस्त से परे प्रत्यय के अवयव झ् को अत् आदेश

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में अत् (1/1), अभ्यस्तात् (5/1) ये दो पद है। आयनेयीनीयियः ढ्रढखछघां प्रत्ययादीनाम् सूत्र से अनुवृत्त प्रत्ययादिनाम् इस प्रत्ययादि से षष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणाम है। झोऽन्तः से झः (6/1) की अनुवृत्ति है। अभ्यस्तम् (6./5) सूत्र से अभ्यास संज्ञा होती है। सूत्रार्थ होता है - अभ्यास्त संज्ञक धातु से परे प्रत्यय के अवयव झकार के स्थान पर अत् आदेश होता है। विभक्तिसंज्ञक झि के झकार के स्थान पर विधीयमान अत् आदेश भी विभक्ति संज्ञक होता है। अतः हलन्त्यम् से प्राप्त तकार की इत्संज्ञा का न विभक्तौतुस्माः से निषेध होता है।

सूत्र - उभे अभ्यस्तम् (6/5) षाष्ठद्वित्वप्रकरण में जो दो पद होते है उन दोनों की समुदित रूप से अभ्यस्त संज्ञा होती है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्व में जु हु सि स्थिति में जुहु अभ्यस्त संज्ञक है अतः इससे परे प्रकृत सूत्र से झि के झ को अत् आदेश होकर जुहु अत्+इ स्थिति बनती है। इकोयणचि का बाध होकर अचि श्नु धातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से उवङ प्राप्त उसका भी बाध होकर हु श्नुवोः सार्वधातुके सूत्र से द्वितीय हु के उकार को वकार होकर जु ह् व् अति तथा वर्णसम्मेलन होकर

जुहूवति रूप सिद्ध होता है। तिप् सिप् मिप् में गुण होता है। अन्यत्र अपित् होने से गुण का निषेध होता है। हु धातु लट् परस्मैपद में रूप - **जुहोति, जुहुतः जुहूवति। जुहोषि, जुहुथः, जुहुथ। जुहोमि जुहुवः जुहुमः**।

लिट् में विशेषता के लिए सूत्र आरम्भ किये जाते है।

21.11 भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च॥ (3.1.39)

सूत्रार्थ - लिट् परे होने पर भी, ह्री, भृ तथा हु धातु से परे विकल्प से आम् प्रत्यय हो जाता है तथा आम् परे रहते श्लु की तरह कार्य भी हो जाते हैं।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में भी ह्री भृ हुवाम् (6/3), श्लुवत् 4 एवं च अव्ययपद में तीन पद है। भीश्च ह्रीश्च भा च हुश्च तेषाम् इतरेतरयोगद्वन्द्वे भीह्रीभृहुवः तेषाम् भीह्रीभृहुवाम्। भीह्रीभृहुवाम् यह पंचभ्यर्थ में षष्ठी प्रयोग है। श्लौ इव इति श्लुवत् यहा सप्तम्यन्त होने से वति प्रत्यय है। कास्प्रत्ययादाममन्त्रे लिटि सूत्र से लिटि (7/1) आम् (1/1) इन दो पदों की आवृत्ति है। तथा उषविदजागृभ्योऽन्यतरस्याम् सूत्र से अन्यतरस्याम् (7/1) की अनुवृत्ति है। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) इन दो का अधिकार है। सूत्रार्थ होता है - लिट परे भी, ह्री, भृ, हु धातु से परे आम् प्रत्यय होता है वह आम् प्रत्यय श्लु वत् होता है अर्थात् श्लु परे रहते द्वित्व कार्य होता है उसी प्रकार आम् परे भी होगा यह तात्पर्य है। किन्तु ये सभी कार्य विकल्प से होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - प्रसंगवश यहाँ हु धातु का उदाहरण प्रदर्शित किया जा रहा है। अन्य उदाहरण दूसरे ग्रन्थों में देखने चाहिए। पूर्वोक्त प्रकार से हु धातु से लिट् अनुबन्ध लोप होकर हु+ल् प्रकृत सूत्र से आम् प्रत्यय उसको श्लुवद् भाव में श्लौ सूत्र से द्वित्व कार्य अभ्यास को कुहोश्चः से चुत्व तथा झकार को अभ्यासे चर्च से जश्त्व होकर जु हु आम्+ल यहाँ आम् की तिङ्शित् भिन्न होने से आर्धधातुकं शेषः से आर्धधातुक संज्ञा सार्वधातुकार्धधातुकयोः से हकारोत्तरवर्ति उकार को गुण ओकार तथा अयादि होकर **जुहवाम्** बनता है। आमः सूत्र से आम् से परे लिट् का लुक् धात्वधिकार में विहित होने से कृदतिङ् सूत्र से कृत् संज्ञा में जुहवाम् की प्रत्ययलक्षण से कृदन्तत्व होने पर कृतद्धितसमासाश्च सूत्र से प्रातिपदिकसंज्ञा तथा ङ्याप्प्रातिपदिकात् सूत्र से सु प्रत्यय होकर जुहवाम्+सु इस स्थिति में आमः सूत्र से सु का लोप होकर सुप्तिङन्तं पदम् से पद संज्ञा होती है। उसके बाद जुहवाम् इसको आमन्त होने से कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र से लिट् परक कृञ् धातु के अनुप्रयोग में जुहवाम् कृ+लिट् अनुबन्ध लोप होकर जुहवाम्+कृ+ल् बनता है। प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्तसि. सूत्र से तिप् प्रत्यय एवं अनुबन्धलोप, जुहवाम्+कृ+ति, परस्मैपदानां णलतुसुस् थलथुस णल्वमाः से सूत्र से तिप् को णल् सर्वादेश, अनुबन्धलोप जुहवाम्+कृ+अ। लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से अनभ्यासधातु के अवयव एक अच् कृ को द्वित्व होकर जुहवाम् कृ कृ+अ उरत् सूत्र से अभ्यास के ऋकार को उरण्रपरः की सहायता से अर् तथा हलादिशेषः से आदि हल् शेष होकर जुहवाम् क कृ+अ, कहोश्चुः से ककार को चकार होकर जुहवाम् च कृ+अ स्थिति में णल् णित् होने से अचोञ्णिति सूत्र से कृ के ऋकार को वृद्धि आर् होकर जुहवाम् च+कार्+अ। मोऽनुस्वर

से अपदान्त म् को अनुस्वार होकर जुहवांचकार। तथा पदान्तस्य से अनुस्वार को परसवर्ण होकर जुहवाञ्चकार रूप सिद्ध होता है।

विशेष - आम्प्रतयय की प्रकृति हु धातु परस्मैपदी है इस हेतु से लिट् में अनुप्रयुज्यमान कृ धातु भी परस्मैपदी ही होती है। भू धातु, एवं अस् धातु से अनु प्रयोग में भी दोनों का परस्मैपद होता है न कि आत्मनेपद। यहाँ भू धातु के अनुप्रयोग में जुहवाम्बभूव, जुहवांबभूव दो रूप बनते हैं। अस् धातु से अनुप्रयोग में जुहवामास एक रूप बनता है। आगे कृ, भू, अस् इनका अनुप्रयोग से निष्पन्न रूप प्रदर्शित किये जायेंगे।

अभावपक्ष में। हु धातु से लिट् में तिप्, णल् अनुबन्धलोप होकर हु+अ स्थिति में लिटि धातोरनभ्यसस्य सूत्र से द्वित्व, अभ्यास के हु के हकार को चुत्व, झकार को जश्त्व, होकर जुहु+अ अचोञ्णिति से से हु के उ को वृद्धि औ तथा अवादेश होकर जुहाव रूप बनता है। अजादि प्रत्ययों परे हो तो अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से हु के उकार के स्थान पर उवङ् आदेश होकर जुहुवतुः, जुहुवः, जुहुवथुः आदि रूप सिद्ध होते है। हु धातु से सिप् में सिप् को थल्, आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इड् आगम प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उसका निषेध प्राप्त उसको भी बाध करके क्रादिनियमानुसार नित्य इट् प्राप्त उसका भी अचस्तास्वल्थल्यलिटो नित्यम् से निषेध प्राप्त है। तब उसका बाध करके भारद्वाज नियम से वैकल्पिक इट् में जुहोथ/ जुहविथ दो रूप सिद्ध होते हैं। उत्तमपुरूष एकवचन में णलुत्तमो वा सूत्र से विकल्प से णल् का णित्त्व होने से वृद्धि अभाव पक्ष में जुहव, अचोञ्णिति से वृद्धिपक्ष में जुहाव दो रूप बनते हैं। वस् और मस् क्रादिनियमानुसार नित्य इट् आगम में उवङ्, जुहुविव, जुहुविम रूप बनते है।

आमभावपक्ष में लिट् में रूप जुहाव, जुहुवतुः, जुहुवुः। जुहोथ/जुहविथ, जुहुवथुः, जुहुव। जुहाव/जुहव, जुहुविव, जुहुविम।

इस प्रकार लिट् में प्रथमपुरूषैकवचन में तिप् में सम्पूर्ण छः रूप है - जुहाव, जुहवांचकार/ जुहवाञ्चकार, जुहवांबभूव/जुहवाम्बभूव, जुहवामास।

मिप् में सम्पूर्ण 9 नौ रूप है - जुहाव/जुहव, जुहवांचकार/ जुहवाञ्चकार, जुहवांचकर/जुहवाञ्चकर, जुहवांबभूव/जुहवाम्बभूव, जुहवामास। कृ, भू अस् इनके अनुप्रयोग से निष्पन्न रूप प्रदत्त है।

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	जुहवाञ्चकार	जुहवाञ्चक्रतुः	जुहवाञ्चक्रुः
मध्यपुरुषः	जुहवाञ्चकर्थ	जुहवाञ्चक्रथुः	जुहवाञ्चक्र
उत्तमपुरुषः	जुहवाञ्चकार जुहवाञ्चकर	जुहवाञ्चक्रव	जुहवाञ्चक्रम

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	जुहवांचकार	जुहवांचक्रतुः	जुहवांचक्रुः
मध्यपुरुषः	जुहवांचकर्थ	जुहवांचक्रथुः	जुहवांचक्र
उत्तमपुरुषः	जुहवांचकार जुहवांचकर	जुहवांचक्रव	जुहवांचक्रम

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	जुहवाम्बभूव	जुहवाम्बभूतुः	जुहवाम्बभूवुः
मध्यपुरुषः	जुहवाम्बभूविथ	जुहवाम्बभूथुः	जुहवाम्बभूव
उत्तमपुरुषः	जुहवाम्बभूव	जुहवाम्बभूविव	जुहवाम्बभूविम

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	जुहवांबभूव	जुहवांबभूतुः	जुहवांबभूवुः
मध्यपुरुषः	जुहवांबभूविथ	जुहवांबभूथुः	जुहवांबभूव
उत्तमपुरुषः	जुहवांबभूव	जुहवांबभूविव	जुहवांबभूविम

लिट्	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमपुरुषः	जुहवामास	जुहवामासतुः	जुहवामासुः
मध्यपुरुषः	जुहवामासिथ	जुहवामासथुः	जुह्वामास
उत्तमपुरुषः	जुहवामास	जुहवामासिव	जुह्वामासिम

लुट् के प्रथम प्रथमैकवचन में तिप्, शप् –अपवाद में तास्, तास् आर्धधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयो से हु के उकार को गुण ओकार, ति के स्थान पर डा आदेश, डा ङित् होने से तास् की टि आस् का लोप होकर **होता** रूप बनता है। इस प्रकार आगे के रूप छात्र स्वयं समझें।लुट् में रूप – **होता होतारौ होतारः। होतासि होतास्थः होतास्थ। होतास्मि होतास्वः होतास्मः।**

लृट् के प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, शप् अपवाद में स्य प्रत्यय, आर्धधातुक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से हु के उकार को गुण ओकार आदेश, आदेश प्रत्ययययोः से सकार को षकार होकर **होष्यति।** आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध। लृट् में रूप – **होष्यति होष्यतः होष्यन्ति। होष्यसि होष्यथः होष्यथ। होष्यामि होष्यावः होष्यामः।**

टिप्पणियाँ

लोट् के प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, शप्, शप् को श्लु, धातु को द्वित्व अभ्यासकार्य होकर जु हु ति, तिप् सार्वधातुक होने से सार्वधतुकार्धधातुकयोः से हु के उकार को गुण ओकार, एरूः से ति के इकार को उकार होकर **जुहोतु** रूप सिद्ध होता है। तातङ् पक्ष में **जुहुतात्** रूप बनता है। तस् में **जुहुताम्,** झि में **जुहुतु,** सिप् में जुझल्भ्योहर्धिः से हि को धि आदेश होकर **जुहुधि**, तातङ् पक्ष में **जुहुतात्। जुहुतम्, जुहुत।** उत्तम पुरूष में आङुत्तमस्य पिच्च सूत्र से आट्, अचि श्नु धातुभ्रुवां "वारियडुवङौ (6.4.77) से उवङ् आदेश की अपेक्षा हुश्नुवोः सार्वधातुके (6.4.87) से यण् प्राप्त उससे भी परे सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण ओकार तथा ओकार को अवादेश होकर **जुहवानि, जुहवाव, जुहवाम्** रूप होते है।

लङ् में अट् आगम में प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, शप् , शप् का श्लु, श्लौ से धातु को द्वित्व, अभ्यास कार्य, हु के उकार को गुण ओकार इतश्च से तिप् के इकार का लोप होकर **अजुहोत्** रूप सिद्ध होता है। तस् में **अजुहुतम्,** झि में झकार को अत् आदेश प्राप्त अभ्यस्तसंज्ञक होने से उसका बाध होकर सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च सूत्र से झि को जुस् आदेश, अनुबन्धलोप होकर अजुहु उस् स्थिति में हुश्नुवोः सार्वधातुके से यण् प्राप्त तव अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

(सूत्र सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च 3.4.109 अभ्यस्त से परे सि को जुस् आदेश होता है।)

21.12 जुसि च॥ (7.3.83)

सूत्रार्थ - अजादि जुस् परे होने पर इगन्त अंग को गुण हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में जुसि (7/1) और च अव्यय दो पद है। क्सस्याचि इत्यचः अचि (7/1) इसकी अनुवृत्ति है। मिदेर्गुणः से गुणः (1/1) पद की अनुवृत्ति है। अंगस्य का अधिकार है। इकोगुणवृद्धी परिभाषा से इकः पद प्राप्त होता है। उसका अंगस्य इसका विशेषण है। अतः तदन्तविधि में इगन्तस्य अंगस्य यह अर्थ प्राप्त है। अचि यह जुसि का विशेषण है। अतः यस्मिन्विधिस्तदादावल्ग्रहणे परिभाषा से तदादिविधि में अजादौ जुसि यह अर्थ प्राप्त है। सूत्रार्थ होता है - अजादि जुस् परे होने पर इगन्त अंग के स्थान पर गुण होता है। अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से यह गुण इगन्त अंग के अन्त्य इक् के स्थान पर होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से अ जुहु+उस् स्थिति में अजादि उस् परे है। अतः जुसि च सूत्र से इगन्त अंग के अन्त्य इक् उकार को गुण ओकार तथा अवादेश तथा सकार को रूत्व एव विसर्ग होकर **अजुहवुः** रूप सिद्ध होता है।

लङ् परस्मैपद में रूप - **अजुहोत्, अजुहुताम् अजुहवुः। अजुहोः अजुहुतम् अहुहुत। अजुहवम्, अजुहुव, अहुहुम।**

विधिलिङ् में हु धातु से तिप्, शप् , शप् की श्लु, श्लौ से धातु को द्वित्व, अभ्यासकार्य, यासुट् परस्मैपदेषूदात्तो डिच्च सूत्र से यासुट् टित् होने से आदि अवयव, होकर जुहु यास्+ति। सुट् तिथोः से तकार को सुट् आगम, जुहुयास् स् ति। लिङ् सलोपोऽनन्त्यस्य से दोनों सकार का लोप, गुण

निषेध होकर **जुहुयात्** रूप बनता है। विधिलिङ् में रूप - **जुहुयात् जुहुयाताम् जुहुयुः। जुहुयाः जुहुयातम् जुहुयात। जुहुयाम्, जुहुयाव, जुहुयाम।**

आशीर्लिङ् में हु धातु से तिप्, यासुट्, सुट् होकर हुयास् स्+ति स्थिति बनती है। यहां किदाशिषि से यासुट् कित् होता है, यासुटः लिङ्शिषि से आर्धधातुक संज्ञा होकर प्राप्त गुण का क्ङिति च से निषेध होता है। ति के इकार का लोप तथा, स्कोः संयोगाद्योरन्ते च से संयोगादि सकार लोप, अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः से हु के उकार को दीर्घ होकर **हूयात्** रूप सिद्ध होता है।

आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप - **हूयात्, हूयास्ताम्, हूयासुः। हूयाः, हूयास्तम्, हूयास्त। हूयासम्, हूयास्व, हूयास्म।** यहा शप् की प्राप्ति ही नहीं होती अतः श्लु भी नहीं होता है और श्लु नहीं होने से द्वित्व भी नहीं होता।

लुङ् में हु धातु से अट्, तिप् शप् अपवाद में च्लि, च्लि को सिच्, इकार लोप, अपृक्त हल् को ईट् आगम, होकर अ हु स् ई त् स्थित बनती है। इट् आगम प्राप्त किन्तु उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध। सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु सूत्र से हु के उकार को वृद्धि औकार तथा सकार को षकार तथा वर्ण सम्मेलन होकर अहौषीत् रूप सिद्ध होता है। ईट् आगम् तिप् और सिप् में होता है अन्यत्र वृद्धि, षत्व, टुत्व कार्य होकर रूप बनते है।

लुङ् में रूप - **अहौषीत्, अहौष्टाम्, अहौषुः। अहौषी, अहौष्टम्, अहौष्ट। अहौषम्, अहौष्व, अहौष्म।**

लृङ् में अट् प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, इकार लोप, शप् का बाधकर स्यतासीलृलुटोः से स्य प्रत्यय, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से हु के उकार को गुण ओकार तथा सकार को षत्व हाकर **अहोष्यत्** रूप सिद्ध होता है।

लृङ् में रूप - **अहोष्यत्, अहोष्यताम् अहोष्यत। अहोष्यः अहोष्यतम् अहोष्यत। अहोष्यम् अहोष्याव, अहोष्याम।**

पाठगत प्रश्न 21.2

1. जुसि च का एक उदाहरण लिखिए।
2. भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च् का अर्थ क्या है?
3. हु धातु का अर्थ क्या है?
4. श्लौ का अर्थ क्या है?
5. हु धातु से लिट् प्रथमपुरूष एकवचन में कितने रूप हैं?
6. शप् को श्लु विधायक सूत्र कौन है?

7. अदभ्यस्तात् का अर्थ क्या है?
8. हु धातु के विधिलिङ् प्रथमपुरूष एकवचन में रूप क्या हैं?
9. हु धातु के आशीर्लिङ प्रथमपुरूष एकवचन में रूप क्या हैं?
10. भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च से कार्य नित्य है या अनित्य?

दिवादिगणः

दिवु, क्रीडा, विजिगीषा, व्यवहार, द्युति, स्तुति, मोद, मद, स्वप्न, कान्ति, गतिषु अर्थ में सेट् परस्मैपदी, और उदित धातु है। वर्तमान काल की विवक्षा में लट् प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, अनुबन्ध लोप होकर दिव्+ति। उसके बाद तिप् सार्वधातुक होने से कर्ता अर्थ में कर्तरिशप् से शप् प्राप्त होता है।

21.13 दिवादिभ्यः श्यन्॥ (3.1.69)

सूत्रार्थ - कर्तवाचक सार्वधातुक परे होने दिवादिगण की धातु से श्यन् प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में दिवादिभ्यः (5/3) श्यन् (1/1) ये दो पद है। कर्तरिशप् से कर्तरि (7/1) की एवं, सार्वधातुके यक् से सार्वधातुके (7/1) पद की अनुवृत्ति है। दिव् आदिः येषां ते दिवादयः तेभ्यः दिवादिभ्यः इति तद्गुण संविज्ञान बहुव्रीहिसमासः। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार होता है। धातोः (6/1) का अधिकार आता है। दिवादि दशगणों में चतुर्थ है। सूत्रार्थ होता है कर्ता अर्थ में सार्वधातुक प्रत्यय परे हो तो दिवादिगणपठित धातुओं से परे श्यन् प्रत्यय होता है। यह सूत्र कर्तरिशप् का अपवाद है। श्यन् के शकार की लशक्वतद्धिते से इत्संज्ञा, नकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा होती है। य शेष रहता है। शकार का अनुबन्ध सार्वधातुकसंज्ञार्थ और नकार का अनुबन्ध ञ्नित्यादिर्नित्यम् सूत्र से आदि उदात्त स्वरार्थ है। विशेष - श्यन् के शित् होने से तिङ्शित् सार्वधातुकम् सूत्र से सार्वधातुक संज्ञा। इस सार्वधातुकसंज्ञक श्यन् प्रत्यय के अपित् होने से सार्वधातुकमपित् से ङित्वद्भाव होता है जिसका फल गुणनिषेध है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से दिव्+ति स्थिति में कर्ता अर्थ में सार्वधातुक परे है। अतः इस सूत्र से शप् का बाह्य होकर श्यन् प्रत्यय एवं अनुबन्धलोप दिव्+य+ति स्थिति में सार्वधातुकसंज्ञा में पुगन्त लघूपधस्य से लघूपधा को गुण प्राप्त किन्तु ङित्वद् होने से किंङति च से निषेध। तब-

24.14 ह लि च॥ (1.8.77)

सूत्रार्थ - हल् परे होने पर रेफान्त और इकारान्त धातु की उपधा को दीर्घ हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में ह लि (7/1), च अव्यय ये दो पद है। सिपि धातोरुर्वा सूत्र से धातोः (6/1) की, र्वोरूंपधाया दीर्घ इकः सूत्र से र्वोः (6/2) उपधायाः (6/1), दीर्घ (1/1), इकः (6/1) इनकी अनुवृत्ति होती है। र् च व् च र्वो तयोः र्वोः इति इतरेतरद्योगद्वन्द्व। र्वोः इति

धातु का विशेषण है। अतः तदन्तविधि में रेफान्त और वकारान्त का अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है - हल् परे होने पर रेफान्त और इकारान्त धातु की उपधा को दीर्घ होता है।

उदाहरण - रेफान्त का उदाहरण विस्तीर्णम् है। दीव्यति वकारान्त का उदाहरण है।

सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से दिव्+यति स्थिति में हल् परे है। अतः हलि च प्रकृत सूत्र से उपधा दीर्घ होकर दीव्यति रूप सिद्ध होता है। तस् आदि रूप स्वयं सिद्ध करने चाहिए।

लट् परस्मैपद में रूप-दीव्यति, दीव्यतः, दीव्यन्ति। दीव्यसि, दिव्यथः, दीव्यथ। दीव्यामि, दीव्यावः, दीव्यामः।

लिट् में धातु सेट् होने से वलादिलक्षण, इट् आगम, पित् प्रत्ययो में लघूपधा गुण होता है। अपित् में नही। असंयोगाल्लिट् कित् से कित् विधान होने से क्ङिति च से निषेध होता है प्रक्रिया स्वयं करे।

लिट् परस्मैपद में रूप - दिदेव, दिदिवतुः, दिदिवुः। दिदेविथ, दिदिवथुः, दिदिव। दिदेव, दिदिविव,, दिदिविम।

लुट् में प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, श्यन्, श्यन् को तास्, इट् आगम, होकर दिव् इ+तास्+ति। तिप् को डा आदेश, टि का लोप होकर देविता रूप सिद्ध होता है।

लिट् परस्मैपद में रूप - देविता, देवितारौ, देवितारः। देवितासि, देवितास्थः, देवितास्थ। देवितास्मि, देवितास्वः, देवितास्मः।

लृट् प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, श्यन् को स्य इट् आगम, पुगन्तलधूपधस्य च से लधूपधा को गुण, सकार को षत्व होकर देविष्यति रूप बनता है। रूप - देविष्यति देविष्यतः, देविष्यन्ति। देतिष्यसि, देविष्यथः देविष्यथ। देविष्यामि। देविष्यावः देविष्यामः।

लोट् में श्यन्, हलिच से उपधादीर्घ होकर रूप सिद्ध होते हैं - दीव्यतु तातङ् में दीव्यतात्, दीव्यताम् दीव्यन्तु। दीव्य तातङ में दीव्यतात् दीव्यतम् दीव्यत। दीव्यानि दीव्याव दीव्याम।

लङ् से अट्, श्यन्, उपधादीर्घ होकर रूप सिद्ध होते हैं - अदीव्यत्, अदीव्यताम्, अदीव्यन्। अदीव्यः, अदीव्यतम् अदीव्यत। अदीव्यम् अदीव्याव अदीव्याम।

विधिलिङ् तिप् में इकार लोप श्यन्, उपधादीर्घ, यासुट्, सुट्, लिङ् सलोपोऽनन्त्यस्य से दोनों सकार का लोप,होकर दीव् य त्। अतोयेय से इय् लोपो व्योर्वलि से यकार लोप दीव् य इ त् तथा आदः गुणः गुण एकार होकर दीव्येत् रूप सिद्ध होता है।

विधिलिङ् में रूप- दीव्येत् दीव्येताम्, दीव्येयुः। दीव्येः दीव्येतम् दीव्येत।दीव्येयम् दीव्येव दीव्येम।

आशीर्लिङ् उपधादीर्घ, यासुट् कित् होने से लघूपधागुण निषेध रूप सिद्ध होते है। विधिलिङ् में रूप - दीव्यात्, दीव्यास्ताम्, दीत्यासुः। दीव्याः, दीव्यास्तम् दीव्यास्त। दीव्यासम् दीव्यास्व दीव्यास्म।

लुङ् से अट्, तिप् इकार लोप, श्यन् अपवाद में च्लि को सिच् इट् आगम उपधादीर्घ अ दीव् इ स् त्। तकार अपृक्त होने से ईट् आगम होकर अदीव् इ स् ई त्। सकार लोप एवं लघूपधागुण होकर अदेवीत् रूप सिद्ध होता है। लुङ् में रूप - अदेवीत्, अदेवीष्टाम्, अदेवीषुः। अदेवीः अदेवीष्टम्, अदेवीष्ट।, अदेवीषम्, अदेवीष्व, अदेवीष्म।

लृङ् से अट्, प्रथम पुरुष एकवचन में तिप् के इकार लोप, श्यन् अपवाद में स्य प्रत्यय अ दिव् स्य त्। लघूपधागुण एवं सकार को षकार होकर अदेविष्यत् रूप सिद्ध होता है। लृङ् में रूप - अदेविष्यत् अदेविष्यत् अदेविष्यताम् अदेविष्यन्। अदेविष्यः अदेविष्यतम् अदेविष्यत। अदेविष्यम् अदेविष्याव अदेविष्याम।

पाठान्त प्रश्न 21.3

1. दिवादिगण में क्या विकरण होता है?
2. श्यन् विकरण विधायक सूत्र क्या है?
3. दिव् धातु का अर्थ क्या है?
4. दीव्यति में दीर्घ किस से होता है?
5. दिवादिगण गणों में कौन सा है?
6. श्यन् प्रत्यय किसका अपवाद है?

पाठ का सार

इस पाठ में अदादिगण, जुहोत्यादिगण, दिवादिगण इन तीन गणों की समालोचना विहित है। उनमें से सर्वप्रथम अदादिगण की प्रथम धातु अद् के विषय में आलोचना की गई। वहाँ अद् धातु में अदिप्रभृतिभ्यः शप् , लिट्यन्यतरस्याम्, शसिवासिधसीनां च, इङ-त्यर्तिव्ययतीनाम्, हु झल्भ्यो हे र्धिः, अदः सर्वेषाम् लुड्सनोर्घस्लृ आदि सूत्रों की व्याख्या की गई है। उसके बाद हु धातु में जुहोत्यादिभ्यःश्लुः, श्लौ, अदभ्यस्तात्, भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च, जुसि च आदि सूत्रों की व्याख्या की गई है। उसके बाद दिव् धातु में दिवादिभ्यःश्यन् से श्यन् विकरण होता है। हलि च से उपधादीर्घ होता है। इस पाठ में लुक्श्लु लुप् का वैशिष्टय दिखाया गया है।

पाठांत प्रश्न

1. लिट्यन्यतरस्याम् सूत्र की व्याख्या कीजिए।
2. शसिवासिधसीनां च सूत्र की व्याख्या कीजिए।

3. हु झल्भ्यो हेर्धिः सूत्र की व्याख्या कीजिए।
4. लुड्सनोर्घस्लृ सूत्र की व्याख्या कीजिए।
5. जुहोति को ससूत्र सिद्ध कीजिए।
6. भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च सूत्र की व्याख्या कीजिए।
7. दिवादिभ्यःश्यन् सूत्र की व्याख्या कीजिए।
8. अदेवीत् को ससूत्र सिद्ध कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

21.1

1. दश।
2. अदिप्रभृतिभ्यः शप्।
3. लुड्सनोर्घस्लृ।
4. अद् से परे अपृक्त को अट् होता है।
5. हु झल्भ्यो हेर्धिः।
6. शसिवासिधसीनां च।
7. लिट्यन्यतरस्याम्।
8. आदि।
9. भक्षण।
10. जघास, आद दो रूप।

21.2

1. अजुहवुः।
2. भीह्रीभृहुवां श्लुवच्च से लिट् में आम् और श्लु के समान कार्य हो।
3. छान और भक्षण।

4. धातु को द्वित्व।
5. जुहाव,जुहवांचकार/जुहवाञ्चकार, जुहवांबभूव/जुहवाम्बभूव, जुहवामास।
6. जुहोत्यादिभ्य:श्लु:।
7. अभ्यस्त धातु से परे झकार को अत्।
8. जुहुयात्।
9. हूयात्।
10. अनित्य।

21.3

1. श्यन्।
2. दिवादिभ्य:श्यन्।
3. दिवु क्रीडा विजिगीषा व्यवहार द्युति स्तुति मोद मद स्वप्न कान्ति गति अर्थहै।
4. हलि च।
5. चतुर्थ।
6. शप्।

22

स्वादि से रुधाादि तक - सु तुद् रुध धातुएं

पूर्व पाठ में आप अदादिगण, जुहोत्यादिगण और दिवादिगण का परिचय प्राप्त कर चुके हैं। अब स्वादिगण, तुदागिण, रुधादिगण इन तीन गणों को जानेंगे। पूर्व में भी प्रतिगण में विकरण का भेद है और विकरण भेद से रुपभेद होता है। जैसे स्वादिगणीय धातुओं से श्नु विकरण प्रत्यय, तुदादिगणीय धातुओं से श विकरण प्रत्यय, रुधादिगणीय धातुओं से श्नम्विकरण प्रत्यय होता है। विकरण भेद से रुपभेद जैसे सु धातु से श्नु विकरण में सुनोति रुप, तुद् धातु से श विकरण में तुदति रुप और रुध् धातु से श्नाविकरण में रुणद्धि रुप होता है। इस पाठ में सभी रुपों को ससूत्र प्रदर्शित नहीं करेंगे अन्यथा पाठ विस्तार होगा। पूर्वतन पाठवत् इस पाठ में भी प्रतिगण प्रथम धातु ही आलोच्य होगी। धातु अन्तर की प्रक्रिया स्वयं समझेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- प्रतिगण कौन सा विकरण होगा यह जान पाने में;
- विकरण विधायक सूत्र का अर्थ जान पाने में;
- विशेष सूत्रों की व्याख्या जान पाने में;
- सु धातु के रुप सिद्ध कर पाने में;
- तुद् धातु के रुप सिद्ध कर पाने में;
- रुध् धातु के रुप सिद्ध कर पाने में;
- इनको जानकर अन्य धातु रुप सिद्ध कर पाने में;
- वहाँ प्रदर्शित वैकल्पिक रुप भी जान पाने में।

टिप्पणियाँ

स्वादिगणः

षुञ् अभिषवे उभयपदी, अनिट् स्वादिगणीय धातु से वर्तमान क्रियावृत्तित्व की विवक्षा में कर्ता अर्थ में लट् परस्मैपद में तिप् प्रत्यय होकर सृ+ति स्थिति में शप् प्राप्ति में यह सूत्र आरम्भ होता है।

22.1 स्वादिभ्यः श्नुः॥ (3.1.73)

सूत्रार्थ - कर्तावाची सार्वधातुक परे होने पर स्वादिगण की धातु से परे श्नु प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में स्वादिभ्यः (5/3), श्नुः (1/1) ये दो पद है। कर्तरिशप् को कर्तरि (7/1), सार्वधातुकेयुक् से सार्वधातुके (7/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार है। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिव्याहारे यङ् सूत्र से धातोः पद अनुवृत्त होता है। दश धातुगणों में स्वादिगण पांचवा है। सु आदिः येषाम् (धातुनाम्) ते स्वादयः (धातवः) इति तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमासः, तेभ्यः स्वादिभ्यः। सूत्रार्थ होता है- कर्ता अर्थ में सार्वधातुक संज्ञक प्रत्यय परे स्वादिगणीय धातुओं से श्नु प्रत्यय होता है। श्नु प्रत्यय का शकार इत्संज्ञक, लशक्वतद्धिते से है। नु मात्र शेष रहता है। यह कर्तरिशप् का अपवाद है।

विशेष - श्नु प्रत्यय के शित् होने से तिङ्शित् सार्वधातुक से सार्वधातुक संज्ञा और सार्वधातुक संज्ञक इस श्नु प्रत्यय की सार्वधातुकमपित् से अपित् होने से ङित्वद्भाव है। इसका फल गुण निषेध है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से सु+ति स्थिति में प्राप्त शप् का बाध करके प्रकृत सूत्र से श्नु प्रत्यय होता है क्योंकि यहां ति कर्ता अर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे है। सु+नु+ति स्थिति में तिङ्शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से सु के उकार गुण प्राप्त तब श्नु प्रत्यय अपित् सार्वधातुक होने से क्ङिति च से गुण निषेध होता है। तिप् सार्वधातुक होने सार्वधातुकार्धधातुकयोः से नु के उकार को गुण ओकार होकर **सुनोति** रुप सिद्ध होता है। द्विवचन में तस् अपित् सार्वधातुक होने से ङित्वत्भाव होकर नु को गुण नहीं होता है। अतः सकार को रुत्व विसर्ग होकर **सुनुतः** रुप सिद्ध होता है। बहुवचन में झि प्रत्यय को अन्तादेश में सु नु अन्ति, स्थिति में नु के उकार को इकोयणचि से यण् प्राप्त किन्तु अचिश्नुधातुभ्रुवा "वोरियवुवङौ से उवङ आदेश प्राप्त होता है तब-

22.2 हुश्नुवोः सार्वधातुके॥ (6.4.87)

सूत्रार्थ - अजादि सार्वधातुक परे हो तो, हु धातु तथा श्नुप्रत्ययान्त जो अनेकाच् अंग है, उस के असंयोगपूर्वक उकार के स्थान पर यण् आदेश हो।

सूत्र व्याख्या - यह पद द्वयात्मक विधि सूत्र है। इस सूत्र से यण् आदेश होता है। हुश्नुवोः (6/2), सार्वधातुके (7/1) सूत्रगत पदच्छेद है। अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से अचि (7/1), एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य से अनेकाचः (6/1) असंयोगपूर्वस्य (6/1), ओः सुपि से ओः (6/1),

इको यण् से यण् (1/1) की अनुवृत्ति होती है। अंगस्य का अधिकार है। पद योजना - अचि सार्वधातुके हुश्नुवोः अनुकाचः अंगस्य असंयोगपूर्वस्य ओः यण्। सार्वधातुके इसका अचि विशेषण है। अतः यस्मिन्विधिस्तदादावत्ग्रहणे परिभाषा से श्नु से श्नु प्रत्ययान्तस्य का ग्रहण होता है। अनेकाचः पद श्नुप्रत्ययान्त अंग से सम्बद्ध है। नास्ति संयोगः पूर्णः यस्मात् असौ इति बहुव्रीहिसमासे असंयोगपूर्वः तस्य असंयोगपूर्वस्य। असंयोग पूर्व का ओः विशेषण है न की श्नु का। हुश्च श्नुश्च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे हुश्नुवौ, तयोः हुश्नवोः। सूत्रार्थ होता है- अजादि सार्वधातुक परे हो तो, हु धातु तथा श्नुप्रत्ययान्त जो अनेकाच् अंग है, उस के असंयोगपूर्वक उकार के स्थान पर यण् आदेश होता है। स्थानेऽन्तरतमः परिभाषा से उकार के स्थान पर वकरादेश होता है। ये सूत्र अचि श्नुधातु ... से प्राप्त उवङ् का अपवाद है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से सु नु अन्ति। स्थिति में श्नु प्रत्यान्त अनेकाच् अंग है। उस अंग का अवयव उकार असंयोगपूर्व भी है। अतः प्रकृत सूत्र से नु के उ को यण् वकार होकर सुन्वन्ति रुप बनता है। सिप् और मिप् से सुनोति के समान प्रक्रिया समझनी चाहिए। सिप् में षत्व आदेश प्रत्ययथोः से होता है। उत्तमपुरुष द्विवचन में वस् में सुनु वस्, बहुवचन में मस् में सुनु मस् स्थिति में अग्रिम सूत्र प्रवृत्त होता है।

22.3 लोपश्चास्यान्यतस्यां म्वोः॥ (6.4.107)

सूत्रार्थ - जिस के पूर्व संयोग नहीं ऐसा जो प्रत्यय का अवयव उकार है, तदन्त का विकल्प कर के लोप हो जाता है म् अथवा व् परे हो तो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में लोपः (1/1), च, (अव्ययपद), अस्य (6/1) अन्यतरस्याम् (7/1), म्वो (7/1) ये पाँच पद है। सूत्रस्थ अस्य पद से उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् (6.4.106) का परामर्श है। उतश्च प्रत्यया असंयोगपूर्वात् से उतः (5/1), प्रत्ययात् (5/1) असंयोगपूर्वात् (5/1) इनकी अनुवृत्ति होती है। उन तीनों का षष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणाम होता है। अंगस्य का अधिकार है। पद योजना - असंयोगपूर्वस्य प्रत्ययस्य उतः अंगस्य म्वोः अन्यतस्याम् लोपः। सूत्रार्थ - जिस के पूर्व संयोग नहीं ऐसा जो प्रत्यय का अवयव उकार है, तदन्त का विकल्प कर के लोप हो जाता है म् अथवा व् परे हो तो। अलोऽन्त्यस्य की परिभाषा से ये आदेश उदन्त अंग के अन्त्य अल् उकार के स्थान पर होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से सु नु वस् यहाँ मकार परे है, उकार श्नु प्रत्यय का अवयव है, उकार से पूर्व संयोग नहीं है इसलिए उकार असंयोगपूर्व है। सुनु उकारान्त अंग भी है। अतः प्रकृत सूत्र से उकार को विकल्प से लोप होकर सुन्वः सुन्मः रुप सिद्ध होते हैं लोप अभावपक्ष में सुनुवः, सुनुमः रूप बनते हैं। इस प्रकार लट् परस्मैपद में रूप- सुनोति, सुनुतः सुन्वन्ति। सुनोषि सुनुथः सुनुथ। सुनोमि, सुन्व/ सुनुवः, सुन्मः/ सुनुमः।

विशेष- सु धातु ञित् होने स्वरित ञितः कत्रेऽभिप्राये क्रियाफले से क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर सु धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होते हैं। क्रियाफल का परगामी होने से शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

टिप्पणियाँ

आत्मनेपद स्थलों में त आदि में कोई भी प्रत्यय तिप् नहीं है, इतः सार्वधातुकमपित् से सभी की ङित् संज्ञा होती हैं। जिससे सर्वत्र नु के उ को गुण निषेध होता है। वहि, महि में लोपश्चास्यन्यतरयाम् म्वोः से उकार का विकल्प से लोप होता है। यहां अच् परे होने पर हुश्नुवोःसार्वणातुके से यण् होता है। टित आत्मनेपदानां टेरे से टि को एत्व होता हैं। वहि, महि में विकल्प से उकार का लोप होता है। लट् आत्मनेपद में रूप- सुनुते सुन्वाते सुन्वन्ते। सुनुषे सुन्वाथे सुनुध्वे। सुन्वे सुन्वहे/सुनुवहे सुन्महे/सुनुमहे।

लिट् में द्वित्वकार्य, आदेश प्रत्यययोः से द्वितीय सकार को षकार, लिट् च योग से लिडादेशतिङ् सार्वधातुक है। अजादि प्रत्ययों परे होने पर हुश्नुवोःसार्वधातुके प्राप्त किन्तु अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से सु के उकार के स्थान पर उवङ् आदेश होकर होता है। थल् में आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इड् आगम प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उसका निषेध प्राप्त उसको भी बाध करके क्रादि नियमानुसार नित्य इट् प्राप्त उसका भी अचस्तास्वत्थल्यलिटो नित्यम् से निषेध प्राप्त है। तब उसका बाध करके भारद्वाज नियम से वैकल्पिक इट् आगम होता है। दो रूप सिद्ध होते हैं। वस् और मस् क्रादि नियमानुसार नित्य इट् आगम। मिप् में णलुत्तमो वा से विकल्प णित्त होता है। इस प्रकार लिट् परस्मैपद में- सुषाव सुषुवतुः सुषुवुः। सुषविथ/ सुषोथ, सुषुवथुः सुषुव। सुषाव/ सुषव सुषुविव सुषुविम।

आत्मनेपद स्थलों में अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से सु के उकार के स्थान पर उवङ् आदेश होकर होता है। तप्रत्यय में लिटस्तझयोरेशिरेच् से तकार को एशादेश होकर सु ए में लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व सु सु ए। अनभ्यास सु के उकार को उवङ् सु स् उव् ए। आदेश प्रत्यययोः से द्वितीय सकार को षकार होकर **सुषुवे** रूप बनता है। झ प्रत्यय को लिटस्तझयोरेशिरेच् से इरेच् आदेश, द्वित्वादि कार्य होकर सु षु इरे। अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से सु के उकार के स्थान पर उवङ् आदेश होकर **सुषुविरे** रूप बनता है। ध्वम् में सुषुव् इ ध्वे। इडागम एवं ध्वम् के ध को ढ विभाषा से होता है। त झ थ प्रत्ययों को छोड़कर टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। थास् ध्वम् वहि महि में क्रादिनियमानुसार नित्य इट् आगम। इस प्रकार आत्मनेपद में रूप - सुषुवे सुषुवाते सुषुविरे। सुषुविषे सुषुवाथे सुषुविढ्वे/सुषुविध्वे। सुषुवे सुषुविवहे सुषुविमहे।

लुट् में कर्तरिशप् से प्राप्त श्नु का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे तासी प्रत्यय सार्वधातुकार्धधातुकयोः से सु को गुण होता है।शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- सोता सोतारौ सोतारः। सोतासि सोतास्थः सोतास्थ। सोतास्मि सोतास्वः सोतास्मः।

प्रथमपुरूष में उभयविधस्थल समान रूप होते हैं। क्योंकि स्थानादि भेद होने पर भी आदेश समान हैं। परस्मैपद में लुटः प्रथमस्य डारौरसः सूत्र से तिप्, तस्, झि को डा, रौ, रस् आदेश आत्मनेपद के त, आताम्, झ को भी होता है। थास् तास् में सकार का लोप होता है। ध्वम् में ध्वम् परे सकार का धि च से लोप होता है। उत्तमपुरूष एकवचन में ह एति से सकार को हकार। थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। है। इस प्रकार लुट् आत्मनेपद में रूप- सोता सोतारौ सोतारः। सोतासे सोतासाथे सोताध्वे। सोताहे सोतास्वहे सोतास्महे।

लृट् में प्राप्त श्नु का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटो: सूत्र से धातु से परे स्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा, सार्वधातुकार्धधातुकयो: से सु को गुण होता है। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। आदेश प्रत्यययो: से षत्व। आर्धधातुकस्येड् वलादे: से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। इस प्रकार लृट् परस्मैपद में- सोष्यति, सोष्यत:, सोष्यन्ति। सोष्यसि, सोष्यथ:, सोष्यथ। सोष्यामि, सोष्याव:, सोष्याम:।

आत्मनेपद स्थलों में थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। आत्मनेपद में रूप- सोष्यते, सोष्येते, सोष्यन्ते। सोष्यसे, सोष्येथे, सोष्यध्वे। सोष्ये, सोष्यावहे, सोष्यामहे।

लोट् परस्मैपद में- सुनोतु, (तातङ् से सुनुतात्) सुनुमाम् सुन्वन्तु। सिप् में सु नु सि सेर्ह्योपिच्च से सि को हि होकर सुनु हि। तब-

22.4 उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात्।। (6.4.106)

सूत्रार्थ - जिस के पूर्व संयोग नहीं ऐसा जो प्रत्यय का अवयव उकार है, उससे परे हि का लुक् हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में उत: (5/1), च, (अव्ययपद), प्रत्ययात् (5/1) असंयोगपूर्वात् (5/1), ये चार पद है। इस विधि सूत्र से हि का लुक् होता है। अतो हे: से हे: (6/1), चिणो लुक् से लुक् (1/1) की अनुवृति है। उन का पंचम्येकवचनान्त से विपरिणाम होता है। अंगस्य का अधिकार है। नास्ति संयोग: पूर्व: यस्मात् असौ असंयोगपूर्व: इति बहुव्रीहिसमास:, तस्मात् असंयोगपूर्वात्। अंगात् का उत: का विशेषण है। सूत्रार्थ होता है - जिस के पूर्व संयोग नहीं ऐसा जो प्रत्यय का अवयव उकार है, उससे परे हि का लुक् होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से सु नु हि यहाँ उतश्च प्रत्ययसंयोगपूर्वात् से हि का लुक होकर सुनु रूप सिद्ध होता है। तातङ् पक्ष में सुनुतात् रूप सिद्ध होता है। उत्तम पुरूष एक वचन में मिप्, मेर्नि: से मि को नि आडुत्तमस्य पिच्च से आट् का आगम नु को गुण एवं अवादि होकर **सुनवानि** रूप बनता है। वस् से **सुनवाव**, मस् से **सुनवाम** में नित्यं ङित: से सकार का लोप होता है। इस प्रकार लोट् परस्मैपद में रूप- सुनोतु/सुनुतात्, सुनुताम्, सुन्वन्तु। सुनु/सुनुतात्, सुनुतम्, सुनुत। सुनवानि, सुनवाव, सुनवाम।

आत्मनेपद स्थलों उत्तम पुरूष को छोड़कर अन्यत्र सार्वधामुकमपित् से ङित्वत् भाव होता है। उत्तम पुरूष में आडुत्तमस्य पिच्च के कारण नहीं होता। प्रथमपुरूष एकवचन में 'त' प्रत्यय को एत्व सुनुते। आमेत: से एत्व को आम् **सुनुताम्**। आताम् में सुनु आताम् स्थिति में हुश्नुवो:सार्वधातुके से नु के उ को यण् वकार होकर सुन्वाताम् रुप सिद्ध होता है। आथाम् में भी यही प्रक्रिया है। झ प्रत्यय में सुनु झ स्थिति में झोऽन्त: का बाधकर आत्मनेपदेष्वनत: से अत एवं टि को एत्व, आमेत: से एत्व को आम् होकर सुनुताम् स्थिति में : सार्वधातुके से नु के उ को यण् वकार होकर सुन्वाताम् रुप सिद्ध होता है। थास् प्रत्यय में थास: से सूत्र से थास् को से होकर,सवाभ्याम् वामौ

टिप्पणियाँ

सूत्र से, के एकार को वकार एवं आदेश प्रत्यययोः से षत्व होकर सुनुष्व रूप सिद्ध होता है। ध्वम् प्रत्यय में सवाभ्याम् वामौ सूत्रसे से के एकार को अम् होकर सुनुध्वम् रूप सिद्ध होता है। इट् प्रत्यय में टि एत्व को एतऐ से ऐ, आट् का आगम, पु के उ को गुण ओ, आटश्च से वृद्धि, तथा अवादेश होकर सुनवै रूप सिद्ध होता है। वहि महि में इसी प्रकार होता है। आत्मनेपद में रूप- सुनुताम् सुन्वाताम् सुन्वताम्। सुनुष्व सुन्वाथाताम् सुनध्वम्। सुनवै सुनवावहै सुनवामहै।

लङ् में अट् प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, श्नुप्रत्यय, इकार लोप, सार्वधातुक होने से नु को गुण होकर अ**सुनोत्** रूप बनता है। सिप् व मिप् में गुण होता है, तस् आदि में नहीं। वस् मस् में नु के उकार का विकल्प से लोप होता है। इस प्रकार लङ् परस्मैपद में रूप- असुनोत् असुनुताम् असुन्वन्। असुनोः असुनुतम् असुनुत। असुनवम् असुन्व /असुनुव, असुन्म/ असुनुम।

आत्मनेपद स्थल में त आदि प्रत्यय अपित् होने से गुण नहीं, झ में झ को अत्, हुश्नुवोःसार्वधातुके से नु के उ को यण् वकार होकर असुन्वत रुप सिद्ध होता है। वहि महि में नु के उकार का विकल्प से लोप होता है। लङ् आत्मनेपद में रूप- असुनुत, असुन्वाताम्, असुन्वत। असुनुथाः, असुन्वाथाम्, असुनुध्वम्। असुन्वि, असुन्वहि/असुनुवहि, असुन्महि/असुनुमहि।

विधिलिङ् में तिप्, श्नु प्रत्यय, इकार लोप, यासुट् एवं सुट् का आगम तथा दोनों सकारों का लोप होकर सुनुयात् रूप बनता है। इस प्रकार विधिलिङ् परस्मैपद में रूप- सुनुयात्, सुनुयाताम्, सुनुयुः। सुनुयाः, सुनुयातम्, सुनुयात। सुनुयाम्, सुनुयाव, सुनुयाम।

विधिलिङ् आत्मनेपद स्थल में त प्रत्यय, श्नु प्रत्यय, लिङः सीयुट् से सीयुट् सुट्, सकार लोप, नु के उकार को यण् एवं यकार लोप होकर सुन्वीत रुप सिद्ध होता है। आत्मनेपद में रूप- सुन्वीत, सुन्वीयाताम्, सुन्वीरन्। सुन्वीथाः, सुन्वीयाथाम्, सुन्वीध्वम्। सुन्वीय, सुन्वीवहि, सुन्वीमहि।

आशीर्लिङ् में आर्धधातुक होने से श्नु नहीं। अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः से उकार को दीर्घ। हु धातु के समान रूप चलते है आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप - सूयात, सूयास्ताम्, सूयासुः। सूयाः, सूयास्तम्, सूयास्त। सूयासम्, सूयास्व, सूयास्म।

आत्मनेपद स्थल में त प्रत्यय, श्नु प्रत्यय, लिङः सीयुट् से सीयुट् सुट्, लिङाशिषि से आर्धधातुक संज्ञा सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण, षत्व, ष्टुत्व होकर सोषीष्ट रुप सिद्ध होता है। थस् में इसी प्रकार, ध्वम् में विभाषेटः से ध को विकल्प में ढ। सर्वत्र सीयुट् सकार को षत्व। इट् में इटाऽत् से अत्। आत्मनेपद में रूप- सोषीष्ट, सोषीयास्ताम्, सोषीरन्। सोषीष्ठाः, सोषीयास्थाम्, सोषीढ्वम्। सोषीय, सोषीवहि, सोषीमहि।

लुङ् में अट् प्रथमपुरूषैकवचन में तिप् श्नु के अपवाद में च्लि को सिच्, इकार लोप, अस्तिसिचोऽपृक्ते से ईट् आगम, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध। तब-

22.5 स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु॥ (7.2.72)

सूत्रार्थ - स्तु, सु, धूञ् धातुओं से परे सिच् को इट् का आगम हो परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो।

सूत्र व्याख्या - इस विधि सूत्र में स्तुसुधूञ्भ्यः (5/3), परस्मैपदेषु (7/3) ये दो पद है। स्तुश्च सुश्च धूञ् च तेषाम् इति इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः तेभ्यः स्तुसुधूञभ्यः। अञ्जेः सिचि से सिचि (7/1), की अनुवृति है। इडत्त्यर्तिव्ययतीनाम् से इट् (1/1), की अनुवृति है। सूत्रार्थ होता है - स्तु, सु, धूञ् धातुओं से परे सिच् को इट् का आगम होता है, परस्मैपद प्रत्यय परे हो तो। टित् होने से आदि अवयव होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से सु धातु से लुङ् में तिप्, इट् आगम, सु को वृद्धि, एवं आवादेश, सकार लोप, सवर्ण दीर्घ होकर असावीत् रूप बनता है। परस्मैपद में रूप - असावीत्, असाष्टिाम्, असाविषुः। असावीः, असाविष्टम्, असाविष्ट। असाविषम्, असाविष्व, असाविष्म।

आत्मनेपद स्थल में अट्, तप्रत्यय, श्नु प्रत्यय, श्नु के अपवाद में च्लि को सिच्, आर्धधातुक संज्ञा, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण, षत्व, ष्टुत्व होकर असोष्ट रुप सिद्ध होता है। इसी प्रकार थास् में समझे। झ को अत् गुण, षत्व, ष्टुत्व होकर असोषत। ध्वम् में धकार को ढकार। आत्मनेपद में रूप- असोष्ट, असोषाताम्, असोषत। असोष्ठाः, असोषाथाम्, असोढ्वम्। असोषी, असोष्वहि असोष्महि।

लृङ् में अट्, तिप्, इकार लोप, श्नु के स्थान पर स्य, आर्धधातुक संज्ञा, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण, षत्व, ष्टुत्व होकर असोष्यत् रुप सिद्ध होता है। लृङ् में उभयस्थल में सर्वत्र आदेश प्रत्यययोः से षत्व होता है। उत्तमपुरूषैकवचन में अमिपूर्वः से पूर्वरूप। वस् मस् में नित्यं ङितः से सकार लोप। लृङ् परस्मैपद में रूप - असोष्यत्, असोष्यताम्, असोष्यन्। असोष्यः, असोष्यतम्, असोष्यत। असोष्यम्, असोष्याव, असोष्याम।

लृङः आत्मनेपद में पूर्ववत् प्रक्रिया में रूप - असोष्यत, असोष्येताम्, असोष्यन्त। असोष्यथाः, असोष्येथाम्, असोष्यध्वम्। असोष्ये, असोष्यावहि, असोष्यामहि।

पाठगत प्रश्न 22.1

1. स्वादिगणीय धातुओं से कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
2. स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु क्या करता है?
3. श्नु प्रत्यय विधायक सूत्र है?
4. स्वादिगणीय सु धातु का अर्थ क्या है?
5. सु धातु परस्मैपद लुङ् प्रथमपुरुष एकवचन में रूप होता है?
6. सु धातु आत्मनेपद लट् प्रथमपुरुष बहुवचन में रूप होता है?
7. सु धातु परस्मैपद लिट् मध्यमपुरुष एकवचन में रूप होता है?

टिप्पणियाँ

8. श्नु प्रत्यय में शकार इत्संज्ञा का प्रयोजन क्या है?

9. आशीर्लिङ् में किसलिए श्नु नहीं होता है?

10. सूयात् में सु के उ को किस से दीर्घ होता है?

तुदादिगणः

तुद व्यथने स्वरितेत, अनिट् तुदादिगणीय धातु से वर्तमान क्रियावृत्तित्व की विवक्षा में कर्ता अर्थ में लट् परस्मैपद में तिप् प्रत्यय होकर तुद्+ति स्थिति में शप् प्राप्ति में यह सूत्र आरम्भ होता है।

22.6 तुदादिभ्यः शः॥ (3.1.77)

सूत्रार्थ - कर्त्तवाची सार्वधातुक परे होने पर तुदादिगण की धातु से परे श प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में तुदादिभ्यः (5/3), शः (1/1) ये दो पद है। कर्तरिशप् को कर्तरि (7/1), सार्वधातु के यक् से सार्वधातु के (7/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार है। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिव्याहारे यङ् सूत्र से धातोः पद अनुवृत्त होता है। दश धातुगणों में तुदादिगण छटा है। तुद् आदिः येषाम् (धातुनाम्) ते तुदाादयः (धातवः) इति तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमासः, तेभ्यः तुदाादिभ्यः। सूत्रार्थ होता है- कर्ता अर्थ में सार्वधातुक संज्ञक प्रत्यय परे तुदादिगणीय धातुओं से श प्रत्यय होता है। श प्रत्यय का शकार इत्संज्ञक लशक्वतद्धिते से है।अपित् होने से ङित्वत् भाव है। यह कर्तरिशप् का अपवाद है।

विशेष - श प्रत्यय के शित् होने से तिङ्शित् सार्वधातुक से सार्वधातुक संज्ञा और सार्वधातुक संज्ञक इस श प्रत्यय की सार्वधातुकमपित् से अपित् होने से ङित्वद्भाव है। इसका फल गुण निषेध है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से तुद्+ति स्थिति में प्राप्त शप् का बाध करके प्रकृत सूत्र से श प्रत्यय होता है क्योंकि यहां ति कर्ता अर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे है। तुद्+अ+ति स्थिति में तिङ्शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से सु के उकार गुण प्राप्त तब श प्रत्यय अपित् सार्वधातुक होने से क्ङिति च से गुण निषेध होकर **तुदति** रुप सिद्ध होता है। हैं। इस प्रकार लट् परस्मैपद में रूप- तुदति, तुदतः, तुदन्ति। तुदसि, तुदथः, तुदथ। तुदामि, तुदावः, तुदामः।

विशेष- तुद् धातु स्वरितेत्त्वात् होने से स्वरित ञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले से क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर तुद् धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होते हैं। क्रियाफल का परगामी होने से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

आत्मनेपद स्थलों में त आदि में कोई भी प्रत्यय तिप् नहीं है, श प्रत्यय की सार्वधातुकमपित् से अपित् होने से ङित्वद्भाव है। अतः लघूपधा को क्ङिति च गुण निषेध है। टित् आत्मनेपदानां

टेरे से टि को एत्व होता है। आताम् में आ का इय्, यकार लोप, अ+इ को गुण। थास् में थास् को से। इट् में टि एवं पररूप। वहि, महि मे अतो दीर्घो यञि से दीर्घ एकादेश होता है। लट् आत्मनेपद में रूप- तुदते, तुदेते, तुदन्ते। तुदसे, तुदेथे, तुदध्वे। तुदे, तुदावहे, निषेध तुदामहे।

लिट् तिप्, सिप्, मिप् में द्वित्वकार्य, हलादिशेष, लघूपधा गुण। अन्यत्र असंयोगाल्लिट् कित् से कित् होने से क्ङिति च लघूपधा गुण निषेध। थल् में आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इड् आगम प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उसका निषेध प्राप्त उसको भी बाध करके क्रादि नियमानुसार नित्य इट् प्राप्त उसका भी अचस्तास्वत्थल्यलिटो नित्यम् से प्राप्त है। तब उसका बाध करके भारद्वाज नियम से वैकल्पिक इट् आगम होता है। दो रूप सिद्ध होते हैं। वस् और मस् क्रादि नियमानुसार नित्य इट् आगम। इस प्रकार लिट् परस्मैपद में- तुतोद, तुतुदतुः, तुतुदुः। तुतोदिथ, तुतुदथुः, तुतुद। तुतोद, तुतुदिव, तुतुदिम।

आत्मनेपद स्थलों में तप्रत्यय में लिटस्तझयोरेशिरेच् से तकार को एशादेश, झ प्रत्यय को इरेच् आदेश, लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व, हलादिशेष, त झ थ प्रत्ययों को छोड़कर टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। थास् ध्वम् वहि महि में क्रादिनियमानुसार नित्य इट् आगम। इस प्रकार आत्मनेपद में रूप - तुतुदे, तुतुदाते, तुतुदिरे। तुतुदिषे, तुतुदाथे, तुतुदिध्वे। तुतुदे, तुतुदिवहे, तुतुदिमहे।

लुट् में इट् निषेध। श का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे तासी प्रत्यय, पुगन्तलघूपधस्य च से तुद् के उ को गुण होता है। अभ्यास की टि का लोप। खरि च से दकार को तकार। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- तोत्ता, तोत्तारौ, तोत्तारः। तोत्तासि, तोत्तास्थः, तोत्तास्थ। तोत्तास्मि, तोत्तास्वः, तोत्तास्मः।

आत्मनेपद स्थल पूर्ववत् प्रक्रिया होती है। इसके लिए एध् धातु को देखे। इस प्रकार लुट् आत्मनेपद में रूप- तोत्ता, तोत्तारौ, तोत्तारः। तोत्तासे, तोत्तासाथे, तोत्ताध्वे। तोत्ताहे, तोत्तास्वहे, तोत्तास्महे।

लृट् में प्राप्त श का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे स्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा, पुगन्तलघूपधस्य च से तुद् के उ को गुण होता है। खरि च से दकार को तकार। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- तोत्स्यति, तोत्स्यतः, तोत्स्यन्ति। तोत्स्यसि, तोत्स्यथः, तोत्स्यथ। तोत्स्यामि, तोत्स्यावः, तोत्स्यामः।

आत्मनेपद स्थलों में थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। आत्मनेपद में रूप- तोत्स्यते, तोत्स्येते, तोत्स्यन्ते। तोत्स्यसे, तोत्स्येथे, तोत्स्यध्वे। तोत्स्ये, तोत्स्यावहे, तोत्स्यामहे।

लोट् उभयस्थल में कोई विशेष कार्य नहीं है। परस्मैपद में रूप- तुदतु, (तातङ् से तुदतात्) तुदताम् तुदन्तु। तुद (तातङ् से तुदतात्), तुदतम्, तुदत। तुदानि, तुदाव, तुदाम।

आत्मनेपद में रूप- तुदताम्, तुदेताम्, तुदन्ताम्। तुदस्व, तुदेथाम्, तुदध्वम्। तुदै, तुदावहै, तुदाम है।

लङ् में अट् प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, शप्रत्यय, इकार लोप, सार्वधातुकमपित् से गुण निषेध होता है। झलां जशोऽन्ते से जश्त्व,वाऽवसाने से विकल्प चर्त्व तकार होता है। इस प्रकार लङ् परस्मैपद में रूप- अतुदत्, अतुदताम्, अतुदन्। अतुदः, अतुदतम्, अतुदत। अतुदम्, अतुदाव, अतुदाम।

आत्मनेपद स्थल में पूर्ववत् सार्वधातुकमपित् से गुण निषेध। लङ् आत्मनेपद में रूप- अतुदत, अतुदेताम्, अतुदन्त। अतुदथाः, अतुदेथाम्, अतुदध्वम्। अतुदे:, अतुदावहि, अतुदामहि।

विधिलिङ् में तिप्, श प्रत्यय, इकार लोप, यासुट् एवं सुट् का आगम तथा दोनों सकारों का लोप, यकार लोप, अ+इ को गुण होकर रूप बनता है। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। इस प्रकार विधिलिङ् परस्मैपद में रूप- तुदेत्, तुदेताम्, तुदेयुः। तुदेः, तुदेतम्, तुदेत। तुदेयम्, तुदेव, तुदेम। विधिलिङ् आत्मनेपद स्थल में प्रक्रिया एध् धातुवत् होती है। आत्मनेपद में रूप- तुदेत, तुदयोताम्, तुदेरन्। तुदेथाः, तुदेयाथाम्, तुदेध्वम्। तुदेय, तुदेवहि, तुदेमहि।

आशीर्लिङ् में लिङाशिषि से आर्धधातुक होने से श प्रत्यय नहीं होती है। तिप् में इकार लोप, यासुट् एवं सुट् का आगम तथा सकार का लोप, क्ङिति च गुण निषेध। आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप - तुद्यात्, तुद्यास्ताम्, तुद्यासुः। तुद्याः, तुद्यास्तम्, तुद्यास्त। तुद्यासम्, तुद्यास्व, तुद्यास्म।

आत्मनेपद स्थल में शप्रत्यय नही होता, आशीर्लिङ् आर्धधातुक होने से। तप्रत्यय, सीयुट् सुट्, स्थिति में तुद् सीय् स् त। समुदाय की तिङ् है, लिङाशिषि से आर्धधातुक संज्ञा है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। लोपो व्योर्वलि से यकार लोप। पुगन्तलघूपधस्य च से गुण प्राप्त किन्तु -

22.7 लिङ्सिचावात्मनेपदेषु॥ (1.2.11)

सूत्रार्थ - इक् के समीप जो हल् उस से परे हलादि लिङ् और सिच् कित् हों तङ् अर्थात् आत्मनेपद प्रत्यय परे हो तो।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में लिङ्सिचौ (1/2), आत्मनेपदेषु (7/3) ये दो पद है। लिङ् च सिच् च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे लिङ्सिचौ इति। इको झल् से झल् (1/1), हलनताच्च से हलन्तात् (5/1), असंयोगाल्लिट् कित् से कित् (1/1), की अनुवृति है। सूत्रार्थ होता है - इक् के समीप जो हल् उस से परे हलादि लिङ् और सिच् कित् हों तङ् अर्थात् आत्मनेपद प्रत्यय परे हो तो।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से तुद् सीय् त स्थिति में प्रक्रत सूत्र से कित् संज्ञा। सुडागम, षत्व, ष्टुत्व होकर तुत्सीष्ट रुप सिद्ध होता है। अन्य रूप स्वयं समझें। आशीर्लिङ्, आत्मनेपद में रूप - तुत्सीष्ट, तुत्सीयास्ताम्, तुत्सीरन्। तुत्सीष्ठाः, तुत्सीयास्थाम्, तुत्सीध्वम्। तुत्सीय, तुत्सीवहि, तुत्सीमहि।

लुङ् परस्मैपद में स्थल में तुद् से अट्, तिप् प्रत्यय, इकार लोप, शप्रत्यय के अपवाद में च्लि को सिच्, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। अस्तिसिचोऽपुक्ते से ईट् आगम, वदव्रजहलन्तस्याचः से तुद् के उकार को वृद्धि औ, सकार लोप

एवं चर्त्व होता है। लुङ् परस्मैपद में रूप- अतौत्सीत्, अतौत्ताम्, अतौत्सुः। अतौत्सीः, अतौत्तम्, अतौत्त। अतौत्सम्, अतौत्स्व, अतौत्स्म।

वदव्रजहलन्तस्याचः सूत्र से आत्मनेपद में तुद् के उकार को वृद्धि नहीं होती है। लिङ्सचावात्मनेपदेषु से कित् होने से गुणवृद्धि नहीं होती। आत्मनेपद में रूप- अतुत्त, अतुत्साताम्, अतुत्सत। अतुत्थाः, अतुत्साथाम्, अतुद्ध्वम्। अतुत्सि, अतुत्स्वहि, अतुत्स्महि।

लृङ् में अट्, तिप्, इकार लोप, श के स्थान पर स्य, आर्धधातुक संज्ञा, पुगन्तलघूपधस्य च से तुद् के उ को गुण होता है। खरि च से दकार को तकार। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। उत्तमपुरूषैकवचन में अमिपूर्वः से पूर्वरूप। वस् मस् में नित्यं ङितः से सकार लोप। लृङ् परस्मैपद में रूप - अतोत्स्यत्, अतोत्स्यताम्, अतोत्स्यन्। अतोत्स्यः, अतोत्स्यतम्, अतोत्स्यत। अतोत्स्यम्, अतोत्स्याव, अतोत्स्याम।

लृङ्ः आत्मनेपद में पूर्ववत् प्रक्रिया में रूप - अतोत्स्यत, अतोत्स्येताम्, अतोत्स्यन्त। अतोत्स्यथाः, अतोत्स्येथाम्, अतोत्स्यध्वम्। अतोत्स्ये, अतोत्स्यावहि, अतोत्स्यामहि।

पाठगत प्रश्न 22.2

1. तुदादिगणीय धातुओं से कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
2. लिङ्सचावात्मनेपदेषु क्या अर्थ है?
3. श प्रत्यय विधायक सूत्र है?
4. तुद् धातु तुदादिगणीय तुद् धातु का अर्थ क्या है?
5. तुद् धातु लुङ् तिप् में रूप होता है?
6. तुद् धातु आत्मनेपद आशिर्लिङ् मध्यमपुरुषैकवचन में रूप होता है?
7. आत्मनेपद लिट् मध्यमपुरुष बहुवचन में रूप होता है?
8. श प्रत्यय में शकार इत्संज्ञा का प्रयोजन क्या है?
9. तुद् धातु आशीर्लिङ् में तप्रत्यय में रूप होता है?
10. तुदति में लघूपधगुण क्यों नहीं होता है?

रुधादिगणः

रुधिर् आवरणे में इर इत्संज्ञा एवं लोप, रुध् शेष रहता है। इरितो वा सूत्र से विकल्प में अङ् का विधान होता है। रुधिर् आवरणे धातु स्वरितेत् अनिट् सकर्मक रुधादिगणीय धातु से वर्तमान क्रियावृत्तित्व की विवक्षा में कर्ता अर्थ में लट् परस्मैपद में तिप् प्रत्यय होकर सश+ति स्थिति में शप् प्राप्ति में यह सूत्र आरम्भ होता है।

22.8 रुधादिभ्यः श्नम्॥ (3.1.78)

सूत्रार्थ - कर्तृवाचक सार्वधातुक परे होने पर रुधादिगण की धातु से परे श्नम् प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में रुधादिभ्यः (5/3), श्नम् (1/1) ये दो पद है। कर्तरिशप् को कर्तरि (7/1), सार्वधातु के यक् से सार्वधातुके (7/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार है। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिव्याहारे यङ् सूत्र से धातोः पद अनुवृत्त होता है। दश धातुगणों में स्वादिगण सातंवा है। रुध् आदिः येषाम् (धातुनाम्) ते रुधादयः (धातवः) इति तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमासः, तेभ्यः रुधादिभ्यः। सूत्रार्थ होता है- कर्ता अर्थ में सार्वधातुक संज्ञक प्रत्यय परे स्वादिगणीय धातुओं से श्नम् प्रत्यय होता है। श्नम् प्रत्यय के शकार की लशक्वतद्धिते मकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा होती है। न मात्र शेष रहता है। यह कर्तरिशप् का अपवाद है।

विशेष - श्नम् प्रत्यय के शित् होने से तिङ्शित् सार्वधातुक से सार्वधातुक संज्ञा और सार्वधातुक संज्ञक इस श्नम् प्रत्यय की सार्वधातुकमपित् से अपित् होने से ङित्वद्भाव है। इसका फल गुण निषेध है। मित् होने से मिदचोऽन्त्यात्परः से अन्तिम अच् के परे होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से रुध्+ति स्थिति में प्राप्त शप् का बाध करके प्रकृत सूत्र से श्नम् प्रत्यय होता है क्योंकि यहां ति कर्ता अर्थ सार्वधातुक प्रत्यय परे है। मिदचोऽन्त्यात्परः से अन्तिम अच् के परे होता है। रु+न+ध्+ति स्थिति में

22.9 झषस्तथोर्धोऽधः॥ (8.2.40)

सूत्रार्थ - झष् से परे तकार, थकार को धकार आदेश हो, परन्तु धा धातु से परे नहीं होता।

सूत्र व्याख्या- इस विधि सूत्र में झषः (5/1),तथोः (6/2), धः(1/1),अधः (5/1)ये चार पद हैं। धः का धकार उच्चारणार्थ है। न धाः अधाः तस्मात् अधः। झष् प्रत्याहार है। सूत्रार्थ होता है- झष् से परे तकार, थकार को धकार आदेश हो, परन्तु धा धातु से परे नहीं होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से रु+न+ध्+ति। स्थिति में प्रकृत सूत्र से तकार को धकार, जश्त्व एवं णत्व होकर रुणद्धि रुप बनता है। तस् में रु न ध् तस्। तस् प्रत्यय की सार्वधातुकमपित् से अपित् होने से ङित्वद्भाव है। इसका फल गुण निषेध है तब-

22.10 श्नसोरल्लोपः॥ (6.4.111)

सूत्रार्थ - श्न तथा अस् के अकार का लोप हो जाता है सार्वधातुक कित्, ङित् परे हो तो।

सूत्रव्याख्या- इस विधि सूत्र में श्नसोः (6/2), अल्लोपः (1/1), ये दो पद हैं। श्नश्च अस् च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वः श्नसोः। अतः लोपः अल्लोपः षष्ठीतत्पुरुषसमासः। अतः उत्सार्वधातुके से सार्वधातुके, गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि से क्ङिति की अनुवृत्ति होती है। सूत्रार्थ होता है- श्न तथा अस् के अकार का लोप हो जाता है सार्वधातुक कित्, ङित् परे हो तो।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से रु+न+ध्+तस् स्थिति में प्रकृत सूत्र से नकार के अकार का लोप, तकार को धकार, जश्त्व एवं सकार को विसर्ग होकर रुण्धः रुप बनता है। लोपाभाव में रुन्द्धः रुप बनता है।

बहुवचन में झिप्रत्यय, झ को अन्तादेश, श्नम्, श्नसोरल्लोपः से नकार होकर रु न् ध् अन्ति एवं परसवर्ण होकार रुन्धन्ति रुप बनता है। सिप् में श्नसोरल्लोपः प्रवृत नहीं होता। णत्व, जश्त्व, चर्त्व होकार रुणत्सि रुप बनता है। इसी प्रकार रुणद्मि। वस् में श्नम्, श्नसोरल्लोपः से नकार के अकार लोप होकर रु न् ध् वस्, सकार को विसर्ग रुन्ध्वः। इसी प्रकार मस् से रुन्ध्मः। लट् परस्मैपद में रूप-रुणद्धि, रुन्धः/रुन्द्धः, रुन्धन्ति। रुणत्सि, रुन्धः/रुन्द्धः, रुन्ध/रुन्द्ध,। रुणद्मि, रुन्ध्वः, रुन्ध्मः।

विशेष- रुध् धातु स्वरितेत होने से स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले से क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर रुध् धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होते हैं। क्रियाफल का परगामी होने से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

आत्मनेपद स्थलों में त आदि में कोई भी प्रत्यय तिप् नहीं है, इतः सार्वधातुकमपित् से सभी की ङित् संज्ञा होती हैं। जिससे सर्वत्र श्नसोरल्लोपः से नकार के अकार लोप। त प्रत्यय में टि को एत्व, तकार को धकार, एक धकार का लोप। लोप अभाव पक्ष में जश्त्व होता है। बहुवचन में झ को अत् होता है। अन्य प्रक्रिया स्वयं कीजिए। लट् आत्मनेपद में रूप- रुन्धे/रुन्द्धे, रुन्धाते, रुन्धते। रुन्त्से रुन्धाथे, रुन्द्ध्वे। रुन्धे, रुन्ध्वहे रुन्ध्महे।

लिट् में द्वित्वकार्य, हलादिशेषे, आर्धधातुक होने से पुगन्तलघूपधस्य च से लघूपधा को गुण, णल् आदि कार्य, थल् में आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इड् आगम प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उसका निषेध प्राप्त उसको भी बाध करके क्रादि नियमानुसार नित्य इट् प्राप्त उसका भी अचस्तास्वल्थल्यलिटो नित्यम् से निषेध प्राप्त है। तब उसका बाध करके भारद्वाज नियम से वैकल्पिक इट् आगम होता है। दो रूप सिद्ध होते हैं। वस् और मस् क्रादि नियमानुसार नित्य इट् आगम। इस प्रकार लिट् परस्मैपद में- रुरोध, रुरुधतुः, रुधतुः। रुरोधिथ, रुरुधथुः, रुरुध। रुरोध, रुरुधिव, रुरुधिम।

आत्मनेपद स्थलों में कोई विशेष कार्य नहीं। इसी प्रकार आत्मनेपद में रूप - रुरुधे, रुरुधाते, रुरुधिरे। रुरुधिषे, रुरुधिथे, रुरुधिध्वे। रुरुधे, रुरुधिवहे, रुरुधिमहे।

लुट् में कर्तरिशप् से प्राप्त श्नम् का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे तासी प्रत्यय आर्धधातुक होने से पुगन्तलघूपधस्य च से लघूपधा को गुण। डित् से परे टि का लोप। तकार को धकार। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- रोद्धा, रोद्धारौ, रोद्धारः। रोद्धासि, रोद्धास्थः, रोद्धास्थ। रोद्धास्मि, रोद्धास्वः, रोद्धास्मः।

इस प्रकार लुट् आत्मनेपद में रूप- रोद्धा, रोद्धारौ, रोद्धारः। रोद्धासे, रोद्धासाथे, रोद्धाध्वे। रोद्धाहे, रोद्धास्वहे, रोद्धास्महे।

टिप्पणियाँ

लृट् में प्राप्त श्नम् का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे स्य प्रत्यय आर्धधातुक होने से पुगन्तलघूपधस्य च से लघूपधा को गुण होता है। खरि च से धकार को तकार। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- रोत्स्यति, रोत्स्यतः, रोत्स्यन्ति। रोत्स्यसि, रोत्स्यथः, रोत्स्यथ। रोत्स्यामि, रोत्स्यावः, रोत्स्यामः।

आत्मनेपद स्थलों में थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित् आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। आत्मनेपद में रूप- रोत्स्यते, रोत्स्येते, रोत्स्यन्ते। रोत्स्यसे, रोत्स्येथे, रोत्स्यध्वे। रोत्स्ये, रोत्स्यावहे, रोत्स्यामहे।

लोट् परस्मैपद में एरुः से उत्व, धत्व, जश्त्व, णत्व होकार रुणद्धु। (तातङ् से रुन्धात्/रुन्द्धात्) सिप् में सेर्ह्यपिच्च से सि करे हि, हुझल्भ्यो हेर्धिः से हि को धि, श्नसोरल्लोपः से नकार के अकार लोप। तकार को धकार, एक धकार का लोप। लोप अभाव पक्ष में जश्त्व होता है। उतम पुरूष में आडुत्तमस्य पिच्च से आट् अपित् होने से अकार लोप नहीं। इस प्रकार लोट् परस्मैपद में रूप- रुणद्धु/रुन्धात्/रुन्द्धात्, रुन्धाम्/रुन्द्धाम्, रुन्धन्तु। रुन्धि/रुन्द्धि/रुन्धात्/रुन्द्धात्, रुन्धम्/रुन्द्धम्, रुन्ध/रुन्द्ध। रुणधानि, रुणधाव, रुणधाम।

आत्मनेपद स्थलों में रूप- रुन्धाम्/रुन्द्धाम्, रुन्धाताम्, रुन्धन्ताम्। रुन्त्स्व रुन्धाथम् रुन्ध्वम्/ रुन्द्ध्वम्। रुणधै, रुणधावहै, रुणधामहै।

लङ् में अट् प्रथमपुरूष एकवचन में तिप्, श्नम् प्रत्यय को णत्व, इकार लोप, अरुणध् त् स्थिति में हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् से तकार लोप,पदान्त धकार को जश्त्व, विकल्प में चर्त्व होकर अरुणत् रूप बनता है। चर्त्व अभाव में अरुणद्। सिप् में

22.11 दश्च॥ (8.2.75)

सूत्रार्थ - सिप् परे पर धातु के पदान्त दकार के स्थान पर विकल्प से रु आदेश हो।

सूत्रव्याख्या- इस विधि सूत्र में दः (6/1), च अव्ययपद ये दो पद है। यहां सिपि धातो रुर्वा सूत्र की अनुवृति है। दः धातोः का विशेषण है। अतः तदन्तविधि से दकारान्त धातु अर्थ आता है। सूत्रार्थ होता है- सिप् परे पर धातु के पदान्त दकार के स्थान पर विकल्प से रु आदेश होता है। अलोऽन्त्यस्य से अन्तिम अल् के स्थान पर होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - रुध् धातु से लङ् में अट्, सिप्,श्नम्, णत्व, इकार लोप, अपृक्त तकार लोप, जश्त्व, विकल्प में चर्त्व होकर अरुणत् रूप बनता है। चर्त्व अभाव में अरुणद् स्थिति में प्रक्रत सूत्र से दकार को रु एवं रेफ को विसर्ग होकर अरुणः रूप बनता है।

इस प्रकार लङ् परस्मैपद में रूप- अरुणत् /अरुणद्, अरुन्धाम्, अरुन्धन्। अरुणः/अरुणत्/अरुणद्, अरुन्धम्/अरुन्द्धम्, अरुन्ध/अरुन्द्ध। अरुणधम्, अरुन्ध्व, अरुन्ध्म।

लङ् आत्मनेपद में रूप- अरुन्ध/अरुन्द्ध, अरुन्धाताम्, अरुन्धत। अरुन्धाः/ अरुन्द्धाः, अरुन्धाथाम्, अरुन्ध्वम्,। अरुन्धि अरुन्ध्वहि, अरुन्ध्महि।

विधिलिङ् में तिप्, श्नम् प्रत्यय, इकार लोप, यासुट् एवं सुट् का आगम तथा दोनों सकारों का लोप, श्नसोरल्लोपः से नकार के अकार लोप होकर रुन्ध्यात् रूप बनता है। इस प्रकार विधिलिङ् परस्मैपद में रूप- रुन्ध्यात्, रुन्ध्याताम्, रुन्ध्युः। रुन्ध्याः, रुन्ध्यातम्, रुन्ध्यात। रुन्ध्याम्, रुन्ध्याव, रुन्ध्याम।

विधिलिङ् आत्मनेपद में रूप- रुन्धीत्, रुन्धीयाताम्, रुन्धीरन्। रुन्धीयाः, रुन्ध्सीयाथाम्, रुन्धीध्वम्। रुन्धीय, रुन्धीवहि, रुन्धीमहि।

आशीर्लिङ् में आर्धधातुक होने से श्नम् नहीं होता। आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप- रुध्यात्, रुध्यास्ताम्, रुध्यासुः। रुध्याः, रुध्यास्तम्, रुध्यास्त। रुध्यासम्, रुध्यास्व, रुध्यास्म।

आत्मनेपद स्थल में त प्रत्यय, श्नम् प्रत्यय, लिङः सीयुट् से सीयुट् सुट्, सुट्तिथोः से सुट्, लिङाशिषि से आर्धधातुक संज्ञा, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। लोपो व्योर्वलि से यकार लोप षत्व, ष्टुत्व, चर्त्व होकर रुत्सीष्ट रुप सिद्ध होता है। आत्मनेपद में रूप- रुत्सीष्ट रुत्सीयास्ताम् रुत्सीरन्। रुत्सीष्ठाः रुत्सीयास्थाम् रुत्सीध्वम्। रुत्सीय रुत्सीवहि रुत्सीमहि।

लुङ् में अट् प्रथमपुरूषैकवचन में तिप् श्नम् के अपवाद में च्लि को सिच्, उसका बाध करके इरितो वा से च्लि को विकल्प से अङ् आदेश, इकार लोप, ङित् होने से लघूपधागुण एवं इट् आगम नहीं होता। परस्मैपद में अङ् आदेश रूप - अरुधत्, अरुधताम्, अरुधन्। अरुधः, अरुधतम्, अरुधत। अरुधम्, अरुधाव, अरुधाम। अङभाव पक्ष में - च्लि को सिच् वदव्रजहलन्तस्याचः से वृद्धि, धकार को चर्त्व होता है - अरौत्सीत्, अरौद्धाम्, अरौत्सुः। अरौत्सीः, अरौद्धम्, अरौद्ध। अरौत्सम्, अरौत्स्व, अरौत्स्म। सिच् की आर्धधातुक संज्ञा, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध।

आत्मनेपद स्थल में लिङ्सचावात्मनेपदेषु से सिच् कित् होने से लघूपधगुण नहीं होता। अट्, तप्रत्यय, श्नम् प्रत्यय, श्नम् के अपवाद में च्लि को सिच् होकर अ रुध् स् त स्थिति में झलो झलि से सकार लोप एवं पूर्व धकार को जश्त्व होकर अरुद्ध रुप सिद्ध होता है। इसी प्रकार स्वयं समझे। आत्मनेपद में रूप- अरुद्ध, अरुत्साताम्, अरुत्सत। अरुद्धाः, अरुत्साथाम्, अरुद्ध्वम्। अरुत्सि, अरुत्स्वहि, अरुत्स्महि।

लृङ् में अट्, तिप्, इकार लोप, श्नम् के स्थान पर स्य, आर्धधातुक संज्ञक होने से लघूपधागुण, धकार को तकार, आर्धधातुक संज्ञा, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध। उभयस्थल कोई विशेष कार्य नहीं होता। लृङ् परस्मैपद में रूप- अरोत्स्यत्, अरोत्स्यताम्, अरोत्स्यन्। अरोत्स्यः, अरोत्स्यतम्, अरोत्स्यत। अरोत्स्यम्, अरोत्स्याव, अरोत्स्याम।

लृङ् आत्मनेपद में पूर्ववत् प्रक्रिया में रूप- अरोत्स्यत, अरोत्स्येताम्, अरोत्स्यन्त। अरोत्स्यथाः, अरोत्स्येथाम्, अरोत्स्यध्वम्। अरोत्स्ये, अरोत्स्यावहि, अरोत्स्यामहि।

पाठगत प्रश्न 22.3

1. रुधादिगणीय धातुओं से कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
2. दश्च सूत्र का अर्थ क्या है?
3. श्नम् प्रत्यय विधायक सूत्र है?
4. रुधादिगणीय रुध् धातु का अर्थ क्या है?
5. रुणद्धि में णत्व किससे होता है?
6. अरुधत् में च्लि के स्थान पर अङ् या चङ् में से कौन होता है?
7. रुध् धातु से परस्मैपद लङ् सिप् में कितने रूप होते हैं?
8. श्नम् प्रत्यय में मकार इत्संज्ञा का प्रयोजन क्या है?
9. रुध् धातु से परस्मैपद लुङ् तिप् में कितने रूप होते हैं?
10. श्नसोरल्लोपः का अर्थ क्या है?

पाठ का सार

इस पाठ में स्वादिगण, तुदादिगण, रुधादिगण इन तीन गणों की समालोचना विहित है। उनमें से सर्वप्रथम स्वादिगण की प्रथम धातु सु के विषय में आलोचना की गई। वहाँ सु धातु में स्वादिभ्यः श्नु विकरण विधायक सूत्र की समालोचना की गई है। उसके बाद हुश्नुवोः सार्वधातुके, लोपश्चास्यान्यतस्यां म्वोः, उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात्, आदि सूत्रों की व्याख्या की गई है। उसके बाद तुद् धातु के विषय में समालोचना की गई है। तुद् धातु से तुदादिभ्यः शः श विकरण विधायक सूत्र की समालोचना की गई है। उसके बाद लिङ्सिचावात्मनेपदेषु सूत्र की व्याख्या की गई है। उससे तुत्सीष्ट रूप सिद्ध होता है। उसके बाद रुध् धातु की समालोचना की गई है। वहां रुधादिभ्यः श्नम् से श्नम् विकरण विधायक सूत्र की समालोचना की गई है। उसके बाद झषस्तथोर्धोऽधः सूत्र की व्याख्या की गई है। श्नसोरल्लोपः से सार्वधातुक कित्, ङित् परे हो तो, श्नम् के अकार का लोप हो जाता है। आगे लङ् सिप् में दश्च सूत्र से अरुणः, अरुणत्, अरुणद् तीन रूप सिद्ध होते हैं। इस पाठ में सभी रूपों की ससूत्र प्रक्रिया प्रदर्शित की गई है। उन्हें स्वयं सिद्ध कीजिए।

पाठांत प्रश्न

1. स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
2. हुश्नुवोःसार्वणातुके सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

3. लोपश्चास्यान्यतस्यां म्वोः सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
4. उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
5. तुदति की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
6. तुत्सीष्ट की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
7. अतौत्ताम् की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
8. तुद्याः की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
9. लिङ्सचावात्मनेपदेषु सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
10. श्नसोरल्लोपः सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
11. सुनोति की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
12. अतौत्सीत्, तुत्सीष्ट की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
13. सुन्वन्ति की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
14. सु धातु परस्मैपद लिट् थल् के रूप सिद्ध कीजिए।
15. सुन्वः, सुनुवः रूप सिद्ध कीजिए।
16. असोढ्वम् रूप सिद्ध कीजिए।
17. रुणद्धि की धातु रूप प्रक्रिया लिखिए।
18. रुध् धातु से लङ् सिप् के रूप सिद्ध कीजिए।
19. रुध् धातु से लुङ् तिप् के रूप सिद्ध कीजिए।
20. रुधादिभ्यः श्नम् सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

22.1

1. श्नु विकरण।
2. सिच् को इट् का आगम।
3. अभिषव।
4. स्वादिभ्यः श्नुः।
5. असावीत्।
6. सुन्तहे, सुनुमहे।

टिप्पणियाँ

7. सुषविथ, सुषोथ।
8. तिङ्शित्सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा।
9. आशीर्लिङ् आर्धधातुक होने से।
10. अक्रत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः से।

22.2

1. श विकरण।
2. इक् के समीप जो हल् उस से परे हलादि लिङ् और सिच् कित् हों तङ् अर्थात् आत्मनेपद प्रत्यय परे हो तो।
3. तुदादिभ्यः शः
4. व्यथनम्।
5. अतौतीत्।
6. तुत्सीष्ठाः।
7. तुतुदिध्वे।
8. तिङ्शित्सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा।
9. तत्सीष्ट
10. श प्रत्यय की सार्वधातुकमपित् से अपित् होने से क्ङितिच से गुण निषेध।

22.3

1. श विकरण।
2. सिप् परे धातु के दकार को रु होता है।
3. रुधादिभ्यः श्नम्।
4. आवरण।
5. अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि।
6. अङ्।
7. अरुणः,अरुणत्, अरुणद् ये तीन रूप।
8. मिदचोऽन्त्यात्परः से अन्तिम अच् से परे।
9. अङ् में अरुधत्, सिच् में अरौत्सीत्।
10. सार्वधातुक ङित् परे श्नम् व अस् के अकार का लोप हो।

23

तनादि से चुरादि तक - तन् कृ क्री चुर् धातुएं

पूर्व पाठ से पूर्व में आप स्वादिगण, तुदादिगण और रुधादिगण का परिचय प्राप्त कर चुके हैं। अब तनादिगण, क्रयादिगण आरै चुरादिगण इन तीन अन्तिम गणों को जानेंगे। पूर्व में भी प्रतिगण में विकरण का भेद है और विकरण भेद से रुपभेद होता है। जैसे तनादिगणीय धातुओं से उ विकरण प्रत्यय, क्रयादिगणीय धातुओं से श्ना विकरण प्रत्यय होता है। विकरण भेद से रुप भेद जैसे तन् धातु से उ प्रत्यय में तनोति रुप, क्री धातु से श्ना प्रत्यय में क्रीणाति रुप होता है। चुरादिगण सबसे विलक्षण है। अन्य गणों में आप देखा है कि जो धातु व प्रत्यय के मध्य में शप् आदि विकरण होते हैं। चुरादिगण में मूल धातु का कोई विकरण नहीं होता है। धातु से स्वार्थ में णिच् प्रत्यय में सनाद्यन्ता धातवः से धातु संज्ञा होकर शप् आदि प्रत्यय होता है। इस पाठ में सभी रुपों को ससूत्र प्रदर्शित नहीं करेंगे अन्यथा पाठ विस्तार होगा। पूर्वतन पाठवत् इस पाठ में भी प्रतिगण प्रथम धातु ही आलोच्य होगी। धातु अन्तर की प्रक्रिया स्वयं समझेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे :

- प्रतिगण कौन सा विकरण होगा यह जान पाने में;
- विकरण विधायक सूत्र का अर्थ जान पाने में;
- विशेष सूत्रों की व्याख्या जान पाने में;
- क्री धातु के रुप सिद्ध कर पाने में;
- तन् चुर् एवं कृ धातु के रुप सिद्ध कर पाने में;
- चुर् धातु के रुप सिद्ध कर उसकी विशेषताओं को जान पाने में;

- इनको जानकर अन्य धातु रुप सिद्ध कर पाने में;
- वहाँ प्रदर्शित वैकल्पिक रुप भी समझ पाने में;

तनादिगण:

तनु विस्तारे स्वरितेत् होने से उभयपदी, सेट् तनादिगणीय धातु से वर्तमान क्रियावृत्तित्व की विवक्षा में कर्ता अर्थ में लट् परस्मैपद में तिप् प्रत्यय होकर तन्+ति स्थिति में शप् प्राप्ति में यह सूत्र आरम्भ होता है।

23.1 तनादिकृञ्भ्यउः॥ (3.1.79)

सूत्रार्थ - कर्तृवाच्य सार्वधातुक परे होने पर तनादिगण की धातु से परे उ प्रत्यय होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में तनादिकृभ्यः (5/3), उः (1/1) ये दो पद है। कर्तरिशप् को कर्तरि (7/1), सार्वधातुके युक् से सार्वधातुके (7/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार है। धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिव्याहारे यङ् सूत्र से धातोः पद अनुवृत्त होता है। दश धातुगणों में स्वादिगण आठवां गण है। तन् आदिः येषाम् (धातुनाम्) ते तनादयः (धातवः) इति तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमासः तेभ्यः तनादिभ्यः। तनादयश्च कृञ् च तेषाम् इतरेतरयोगद्वन्द्वः, तेभ्यः तनादिकृभ्यः। सूत्रार्थ होता है- कर्ता अर्थ में सार्वधातुक संज्ञक प्रत्यय परे तनादिगणीय धातुओं एवं कृधातु से परे उ प्रत्यय होता है। शित् अभाव होने से आर्धधातुक संज्ञा होती है। यह कर्तरिशप् का अपवाद है।

उदाहरण - पूर्वोक्त प्रकार से तन्+ति स्थिति में प्राप्त शप् का बाध करके प्रकृत सूत्र से उ प्रत्यय होता है क्योंकि यहां तिप् सार्वधातुक प्रत्यय परे है। तन्+उ+ति स्थिति में आर्धधातुकं शेषः से उ की सार्वधातुकसंज्ञा में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से उकार को गुण ओकार होकर **तनोति** रुप सिद्ध होता है। इसी प्रकार सिप् मिप् होता है।

द्विवचन में तस् अपित् सार्वधातुक होने से ङित्वत्भाव होकर उ को गुण नहीं होता है। अतः सकार को रुत्व विसर्ग होकर **तनुतः** रुप सिद्ध होता है। बहुवचन में झि प्रत्यय को अन्तादेश में तन् उ अन्ति, स्थिति में नु के उकार को इकोयणचि से यण् वकार होकर **तन्वन्ति** रुप सिद्ध होता है।

विशेष- तन् धातु स्वरितेत् होने स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले से क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर तन् धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रयय होते हैं। क्रियाफल का परगामी होने से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

वस्, मस्, वहि, महि में लोपश्चास्यन्यतरयाम् म्वोः से उकार का विकल्प से लोप होता है। उससे तन्वः/तनुवः, तन्मः/तनुमः, तन्वहे/तनुवहे, तन्महे/तनुमहे रूप सिद्ध होते हैं। सिप् में उतृच प्रत्ययसंयोगपूर्वात् से हि का लोप होता है। आत्मनेपद स्थलों में तादि सभी अपित् होने से सर्वत्र गुण नहीं होता।

इस प्रकार **लट् परस्मैपद में रूप**- तनोति, तनुतः, तन्वन्ति। तनोषि, तनुथः, तनुथ। तनोमि, तन्व/तनुवः, तन्मः/तनुमः। **लट् आत्मनेपद में रूप**- तनुते, तन्वाते, तन्वन्ते। तनुषे, तन्वाथे, तनुध्वे। तन्वे, तन्वहे/तनुवहे, तन्महे/तनुमहे।

लिट् में तिप् को णल् द्वित्वकार्य, हलादिशेषे ततन् अ स्थिति में अत उपधायाः से उपधा वृद्धि होकर ततान रूप सिद्ध होता है। इसी प्रकार मिप् में होता है। तस्, झि, थस्, थ, वस्, मस् में असंयोगल्लिट् कित् से कित् होने से अत एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि से अभ्याससंज्ञक प्रथम तकार का लोप तथा अकार को एकार होता है। किन्तु थल् में नहीं होता। आत्मनेपद स्थलों में सर्वत्र ऐसा ही होता है। सिप्, वस्, मस्, परस्मैपद, एवं थास्, ध्वम् वहि महि आत्मनेपद में इट् आगम होता है। आत्मनेपद त, झ थास् को छोडकर अन्यत्र टि को ए होता है। इस प्रकार **लिट् परस्मैपद में**- ततान, तेनतुः, तेनुः। तेनिथः, तेनथुः, तेन। ततान/ततन, तेनिव, तेनिम।

आत्मनेपद में रूप- तेने, तेनाते, तनिरे। तेनिषे, तेनाथे, तेनिध्वे। तेने, तेनिवहे, तेनिमहे।

लुट् तिप् में उ का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे तासी प्रत्यय आर्धधातुक होने से आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट्, परस्मैपद में लुटः प्रथमस्य डारौरसः सूत्र से तिप्,तस्,झि को डा, रौ, रस् आदेश, आत्मनेपद के त, आताम्, झ को भी होता है। डादेश डित् से टि का लोप। प्रथमपुरूष में उभय विध स्थल समान रूप होते है। थास् को छोडकर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है।

इस प्रकार **लुट् परस्मैपद में**- तनिता, तनितारौ, तनितारः। तनितासि, तनितास्थः, तनितास्थ। तनितास्मि, तनितास्वः, तनितास्मः।

इस प्रकार **लुट् आत्मनेपद में रूप**- तनिता, तनितारौ, तनितारः। तनितासे, तनितासाथे, तनिताध्वे। तनिताहे, तनितास्वहे, तनितास्महे।

लृट् में प्राप्त उ का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे स्य प्रत्यय की आर्धधातुक संज्ञा, आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इट् प्राप्त, आदेश प्रत्यययोः से षत्व होकर तनिष्यति। त प्रत्यय में तनिष्यते रूप सिद्ध होता है। लृट् आत्मनेपद में थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। आत्मनेपद में एध् धातु के समान है। इस प्रकार लृट् परस्मैपद में- तनिष्यति, तनिष्यतः, तनिष्यन्ति। तनिष्यसि, तनिष्यथः, तनिष्यथ। तनिष्यामि, तनिष्यावः, तनिष्यामः।

लृट् आत्मनेपद में रूप- तनिष्यते, तनिष्येत, तनिष्यन्ते। तनिष्यसे, तनिष्येथे, तनिष्यध्वे। तनिष्ये, तनिष्यावहे, तनिष्यामहे।

लोट् परस्मैपद तिप् में उप्रत्यय, तिप् सार्वधातुकसंज्ञक होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से उकार को गुण ओकार, तिप् के इ को उ होकर तनोतु रुप सिद्ध होता है। तातङ् से तनुतात्। आगे स्वयं सिद्ध करें। इस प्रकार **लोट् परस्मैपद में रूप**- तनोतु/तनुतात्, तनुताम्, तन्वन्तु। तनु/तनुतात्, तनुतम्, तनुत। तनवानि, तनवाव, तनवाम।

टिप्पणियाँ

आत्मनेपद में रूपों की सिद्ध के लिए सु धातु देखें - तनुताम्, तन्वाताम्, तन्वताम्। तनुष्व, तन्वाथाताम्, तनध्वम्। तनवै, तनवावहै, तनवामहै।

लङ् में परस्मैपद व आत्मनेपद स्थलों में रूपों की सिद्ध के लिए सु धातु देखें। इस प्रकार **लङ् परस्मैपद में रूप**- अतनोत्, अतनुताम्, अतन्वन्। अतनोः, अतनुतम्, अतनुत। अतनवम्, अतन्व /अतनुव, अतन्म/अतनुम।

लङ् आत्मनेपद में रूप- अतनुत, अतन्वाताम्, अतन्वत। अतनुथाः, अतन्वाथाम्, अतनुध्वम्। अतन्वि, अतन्वहि/अतनुवहि, अतन्महि/अतनुमहि।

विधिलिङ् में परस्मैपद व आत्मनेपद स्थलों में रूपों की सिद्ध के लिए सु धातु देखें। इस प्रकार **विधिलिङ् परस्मैपद में रूप**- तनुयात्, तनुयाताम्, तनुयुः। तनुयाः, तनुयातम्, तनुयात। तनुयाम्, तनुयाव, तनुयाम।

आत्मनेपद में रूप- तन्वीत, तन्वीयाताम्, तन्वीरन्। तन्वीथाः, तन्वीयाथाम्, तन्वीध्वम्। तन्वीय, तन्वीवहि, तन्वीमहि।

आशीर्लिङ् में तिप् की लिङाशिषि से आर्धधातुकसंज्ञा होने से उ प्रत्यय नहीं होता। उसके बाद यासुट् सुट्तिथोः से सुट् आगम, तिप् के इकार का लोप, स्कोःसंयोगाद्यारन्ते च से दोनों सकारों का लोप होकर तन्ययत् रूप सिद्ध होता है। आगे स्वयं सिद्ध करें। **आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप** - तन्यात, तन्यास्ताम्, तन्यासुः। तन्याः, तन्यास्तम्, तन्यास्त। तन्यासम्, तन्यास्व, तन्यास्म।

आत्मनेपद स्थल में एध् धातुवत् रूप होते हैं। केवल प्रथमपुरूषैकवचन में रूप प्रदशित कर रहे है। तन् धातु से त प्रत्यय, लिङः सीयुट् से सीयुट् सुट्, लिङाशिषि से समुदाय की आर्धधातुकसंज्ञा आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट्, लोपो व्योर्वलि से यकार लोप, उभयस्थल में सर्वत्र आदेश प्रत्ययय़ोः से षत्व होता है। तथा ष्टुत्व होकर तनिषीष्ट रुप सिद्ध होता है। **आत्मनेपद में रूप**- तनिषीष्ट, तनिषीयास्ताम्, तनिषीरन्। तनिषीष्ठाः, तनिषीयास्थाम्, तनिषीढ्वम्। तनिषीय, तनिषीवहि, तनिषीमहि।

लुङ् प्रथमपुरूषैकवचन में अट् तिप् उ के अपवाद में च्लि को सिच्, इकार लोप, अस्तिसिचोऽपृक्ते से ईट् आगम, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट्, वदव्रजहलन्तस्याचः से वृद्धि प्राप्त किन्तु नेटि से निषेध हलोदेर्लघाः से विकल्प में तन् के अकार को वृद्धि आकार, इट ईटि से सकार लोप, एवं सवर्णदीर्घ होकर अतानीत् रुप सिद्ध होता है। वृद्धि अभाव में अतनीत् रुप सिद्ध होता है। **वृद्धि पक्ष में रूप** - अतानीत्, अतानिष्टाम्, अतानिषुः। अतानीः, अतानिष्टम्, अतानिष्ट। अतानिषम्, अतानिष्व, अतानिष्म।

वृद्धि अभाव पक्ष में रूप - अतनीत्, अतनिष्टाम्, अतनिषुः। अतनीः, अतनिष्टम्, अतनिष्ट। अतनिषम्, अतनिष्व, अतनिष्म।

तन् लुङ् में अट्, आत्मनेपदसंज्ञक तप्रत्यय, उ के अपवाद में च्लि को सिच्, सिच् के सकार को विकल्प में -

23.2 तनादिभ्यस्तथासोः॥ (2.4.79)

सूत्रार्थ - तनादिगण की धातुओं से परे सिच् का विकल्प से लुक् हो, त अथवा थास् परे हो तो।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में तनादिभ्यः (5/3), तथासोः (7/2) ये दो पद है। तन् आदि येषां ते तनादयः इति बहुव्रीहिसमासः। तृच थाश्च तयोः इतरेतरयोगद्वन्द्वे तथासौ, तयोः तथासोः। गतिस्थाघूपाभूभ्यः सिच् परस्मैपदेषु से सिचः (6/1), ण्यक्षत्रियार्षञितो यूनि लुगणिञोः से लुक् (1/1) की, विभाषा घ्राधेट्शाच्छासः से विभाषा अनुवृति है। सूत्रार्थ होता है - तनादिगण की धातुओं से परे सिच् का विकल्प से लुक् हो, त अथवा थास् परे हो तो।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से अ तन् स त स्थिति में प्रकृत सूत्र से सिच् के सकार का लुक् होता है। क्योंकि यहां त परे है। उसके बाद अतन् त में अग्रिम सूत्र -

23.3 अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति॥ (6.4.37)

सूत्रार्थ - वनु धातु का तथा अनुनासिकान्त अनुदात्तोपदेश धातुओं का और अनुनासिकान्त तनोत्यादि धातुओं का लोप हो झलादि कित् ङित् परे हो तो।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनाम् (6/3), अनुनासिक (6/3), लोपः (1/1), झलि (7/1), क्ङिति (7/1) ये पांच पद है। अनुनासिक लुप्तविभक्ति निर्देश है। अनुदात्त उपदेशे येषां ते अनुदात्तोपदेशाः इति बहुव्रीहिसमासः। तनोतिः आदिः येषां ते तनोत्यादयः। अनुदात्तोपदेशाश्च वनतिश्च तनोत्यादयश्च तेषां अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनाम्। क् च ङ् च क्ङौ तौ इतौ यस्य स क्ङित् तस्मिन् द्वन्द्वगर्भबहुव्रीहिसमासः। झलि पद क्ङिति का विशेषण है। सूत्रार्थ होता है - वन् धातु का तथा अनुनासिकान्त अनुदात्तोपदेश धातुओं का और अनुनासिकान्त तनोत्यादि धातुओं का लोप हो झलादि कित् ङित् परे हो तो।

उदाहरण- यमि रमि नमि गमि हनि मन्यतयोऽनुदात्तोपदेशाः। तनु क्षणु क्षिणु ऋणु तृणु घृणु वनु तनु तनोत्यादयः। इन सभी धातुओं के रूप यहां प्रस्तुत हैं-

1. यम् (रोकना) - यतः (क्त), यतवान् (क्तवतु), यत्वा (क्त्वा)।
2. रम् (खेलना) - रतः (क्त), रतवान् (क्तवतु), रत्वा (क्त्वा)।
3. नम् (झुकना) - नतः (क्त), नतवान् (क्तवतु), नत्वा (क्त्वा)।
4. गम् (जाना) - गतः (क्त), गतवान् (क्तवतु), गत्वा (क्त्वा)।
5. हन् (मारना) - हतः (क्त), हतवान् (क्तवतु), हत्वा (क्त्वा)।
6. मन्य (मानना, जानना) - गतः (क्त), गनवान् (क्तवतु), गत्वा (क्त्वा)।

टिप्पणियाँ

7. वन् (शब्दकरना, सेवाकरना, हिंसाकरना) - वतिः (क्तिन्)।

8. तन् (विस्तार करना) - ततः (क्त), ततवान् (क्तवतु), तत्वा (क्त्वा), अतत, अतथाः।

9. क्षणु (हिंसाकरना) - क्षतः (क्त), क्षतवान् (क्तवतु), क्षत्वा (क्त्वा)। अक्षत, अक्षथाः।

1०. क्षिणु (हिंसाकरना)- क्षितः(क्त), क्षितवान् (क्तवतु), क्षित्वा (क्त्वा)। अक्षित, अक्षिथाः।

11. ऋणु (जाना) - ऋतः (क्त), ऋतवान् (क्तवतु), ऋत्वा (क्त्वा)। आर्त, आर्थाः।

12. तश्णु (खाना) - तृतः (क्त), तृतवान् (क्तवतु), तृत्वा (क्त्वा)। अतृत, अतृथाः।

13. घृणु (चमकना) - घृतः (क्त), घृतवान् (क्तवतु), घृत्वा (क्त्वा)। अघृत, अघृथाः।

14. वनु (मागना) - वतः (क्त), वतवान् (क्तवतु), वत्वा (क्त्वा)। अवत, अवथाः।

15. मन् (जानना) - मतः (क्त), मतवान् (क्तवतु), मत्वा (क्त्वा)। अमत, अमथाः।

पूर्वोक्त प्रकार से अ तन् त स्थिति में सार्वधातुकमपित् से त प्रत्यय का ङित्वत्भाव है और झलादि भी है, क्योंकि तन् के नकार से परे जो त प्रत्यय है वह झलादि ङित् है, वर्णमेल होकर अतत रूप बनता है। सिच् के लुगभावपक्ष में इडागम होकर अ तन् इ स् त स्थिति में षत्व, ष्टुत्व होकर अतनिष्ट रुप सिद्ध होता है। इस प्रकार प्रथमपुरूषैकवचन में दो रूप बनके हैं। ध्वम् में सकार लोप, धकार को ढकार होता है। अन्य रूप स्वयं समझें। इस प्रकार **आत्मनेपद में रूप** - अतत/अतनिष्ट, अतनिषाताम्, अतनिषत।, अतथाः/ अतनिष्ठाः, अतनिषाथाम्, अतनिष्ढ्वम्,। अतनिषि, अतनिष्वहि, अतनिष्महि।

लृङ् में अट्, तिप्, इकार लोप, उ के स्थान पर स्य, षत्व, ष्टुत्व होकर असोष्यत् रुप सिद्ध होता है। लृङ् में उभयस्थल में सर्वत्र आदेश प्रत्यययोः से षत्व होता है। उत्तमपुरूषैकवचन में अमिपूर्वः से पूर्वरूप। वस् मस् में नित्यं ङितः से सकार लोप। **लृङ् परस्मैपद में रूप** - अतनिष्यत्, अतनिष्यताम्, अतनिष्यन्। अतनिष्यः, अतनिष्यतम्, अतनिष्यत। अतनिष्यम्, अतनिष्याव, अतनिष्याम।

लृङः आत्मनेपद में पूर्ववत् प्रक्रीया में रूप - अतनिष्यत, अतनिष्येताम्, अतनिष्यन्त। अतनिष्यथाः, अतनिष्येथाम्, अतनिष्यध्वम्। अतनिष्ये, अतनिष्यावहि, अतनिष्यामहि।

कृ धातुः

अब कृ धातु की समालोचना की जाएगी -

कृ (डुकृञ् विस्तारे) धातु उभयपदी, अनिट्, सकर्मक, तनादिगणीय धातु से वर्तमान क्रियावृत्तित्व की विवक्षा में कर्ता अर्थ में लट् परस्मैपद में तिप् प्रत्यय, होकर कृ+ति स्थिति में शप् प्राप्त शप् का बाध करके तनादिकृभ्यः उः से उ प्रत्यय होता है। कृ+उ+ति स्थिति में उ की आर्धधातुकसंज्ञा में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से ऋकार को गुण, उरण्परः से अर् होता है। कर्+उ+ति स्थिति में

यहां तिप् सार्वधातुक प्रत्यय परे है। सार्वधातुकार्धधातुकयोः से उकार को गुण ओकार होकर करोति बनता है। इसी प्रकार सिप् मिप् होता है।

द्विवचन में तस् प्रत्यय, होकर कृ+तस् स्थिति में शप् प्राप्त शप् का बाध करके तनादिकृभ्यः उः से उ प्रत्यय होता है। ऋकार को गुण, उरण्परः से अर् होकर कर् उ तस् स्थिति में अपित् सार्वधातुक होने से ङित्वत्भाव होकर उ को गुण नहीं होता है। आगे-

23.4 अत उत्सार्वधातुके॥ (6.4.110)

सूत्रार्थ - सार्वधातुक कित् ङित् परे होने पर उप्रत्ययान्त क्रञ् के ह्रस्व अकार के स्थान पर ह्रस्व उकार आदेश होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में अतः (6/1), उत् (1/1) सार्वधातुके (7/1) ये तीन पद है। नित्यं करोतेः से करोतेः (5/1) पद की अनुवृत्ति होती है। उसका षष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणाम है। गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि से क्ङिति की अनुवृत्ति होती है। उतृच प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् से प्रत्ययात् (5/1) उतः (1/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। उनका षष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणाम है। सूत्रार्थ होता है- सार्वधातुक कित् ङित् परे होने पर उप्रत्ययान्त क्रञ् के ह्रस्व अकार के स्थान पर ह्रस्व उकार आदेश होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से कर्+उ+तस् स्थिति में तस् सार्वधातुक होने से प्रकृत सूत्र से अ को उ होता है, सकार को रुत्व विसर्ग होकर **करुतः** रुप सिद्ध होता है।

बहुवचन में झि प्रत्यय को अन्तादेश में कृ उ अन्ति, ऋकार को गुण, उरण्परः से अर् होकर कर् उ अन्ति स्थिति में अकार को उकार होता है उकार को यण् वकार होकर कुर् व् अन्ति स्थिति में हलि च से उपधादीर्घ प्राप्त, आगे-

23.5 न भकुर्छुराम्॥ (8.3.79)

सूत्रार्थ - भसंज्ञक, कुर् व छुर् की उपधा के स्थान पर दीर्घ नहीं होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में न अव्ययपद, भकुर्छुराम् (6/3) ये दो पद है। र्वोरुपधायाः दीर्घ इकः से उपधायाः (6/1), दीर्घः (1/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। भं च कुर् च छुर् च भकुर्छुरः तेषां भकुर्छुराम् इति इतरेतरयोगद्वन्द्वः। भ एक संज्ञा है। जो यचि भम् से होती है। सूत्रार्थ होता है- भसंज्ञक, कुर् व छुर् की उपधा के स्थान पर दीर्घ नहीं होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से कुर्+व+अन्ति स्थिति में प्रकृत सूत्र दीर्घ नहीं होता है। मिलाने पर कुर्वन्ति बनता है।

वस्, मस् में लोपश्चास्यन्यतरयाम् म्वोः से उकार का विकल्प से लोप होता है। तब-

टिप्पणियाँ

23.6 नित्यं करोतेः॥ (6.4.108)

सूत्रार्थ - वकार, मकार पर हो तो कृ धातु के बाद उकारान्त प्रत्यय का नित्य लोप होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधिसूत्र में नित्यम् (2/1), करोतेः (5/1) ये दो पद हैं। नित्यम् क्रिया विशेषण है। उतृच प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् से प्रत्ययात् (5/1) उतः (1/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। उनका षष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणाम है। लोपश्चास्यन्यतरयाम् म्वोः से म्वोः (7/2) लोपः (1/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। सूत्रार्थ होता है- वकार, मकार पर हो तो कृ धातु के बाद उकारान्त प्रत्यय का नित्य लोप होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से कुर्+उ+वस् स्थिति में प्रकृत सूत्र उकारान्त प्रत्यय का नित्य लोप, सकार को रुत्व विसर्ग होकर **कुर्वः** रुप सिद्ध होता है। इसी प्रकार **कुर्मः** बनता है।

विशेष- कृ धातु ञित् होने से स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले से क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर कृ धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रयय होते हैं। क्रियाफल का परगामी होने से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

आत्मनेपद स्थलों में सर्वत्र ङित्वत् भाव नहीं होने से उकार को गुण होता है। अत उत्सार्वधातुके से सर्वत्र अकार को उकार होता है।

इस प्रकार **लट् परस्मैपद में रूप**- करोति, कुरुतः, कुर्वन्ति। करोषि, कुरुथः, कुरुथ। करोमि, कुर्वः, कुर्मः। लट् आत्मनेपद में रूप- कुरुते, कुर्वाते, कुर्वते। कुरुषे, कुर्वाथे, कुरुध्वे। कुर्वे, कुर्वहे, कुर्महे।

लिट् प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, कृ मिप् में परस्मैपदानां णलतुसुस् थलथुसणल्वमाः से तिप् को णल् कृ अ, लिटिधातोरनभ्यासस्य से कृ को द्वित्वकार्य, पूर्वोऽभ्यासः से अभ्याससंज्ञा उरत् से कृ के ऋ को अर् हलादिः शेषः आदि हल् शेष, कुहोश्चुः से चुत्व, णल् णित् होने से अचो ञ्णिति से ऋ को वृद्धि आर् होकर चकार सिद्ध होता है। थल् में गुण होता है। मिप् में णलुत्तमो वा से विकल्प से वृद्धि तथा णित् अभाव में गुण होता है। अतुसादि में असंयोगाल्लिट् कित् से गुण निषेध होने से यण् होता है।

आत्मनेपद में रूप प्रक्रिया एध् धातु के समान होती है। यहां केवल प्रथमपुरूषैकवचन प्रदर्शित कर रहे हैं। प्रथमपुरूषैकवचन में तप्रत्यय को लिटस्तझयोरेशिरेच् से एशादेश, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से ऋकार को गुण प्राप्त असंयोगाल्लिट् कित् से गुण निषेध, लिटिधातोरनभ्यासस्य से कृ को द्वित्वकार्य, पूर्वोऽभ्यासः से अभ्यास संज्ञा उरत् से कृ के ऋ को अर् हलादिः शेषः आदि हल् शेष, कुहोश्चुः से चुत्व, इको यणचि से ऋ को यण् रेफ होकर चक्रे सिद्ध होता है।

इस प्रकार **लिट् परस्मैपद में रूप**- चकार, चक्रतुः चक्रुः। चकर्थ, चक्रथुः, चक्र। चकार/चकर, चकृव, चकृम।

इस प्रकार **आत्मनेपद में रूप** - चक्रे चक्राते, चक्रिरे। चक्रषे, चक्राथे, चक्रद्वे। चक्रे, चकृवहे, चकृमहे।

लुट् में पूर्ववत् इट् निषेध। उ का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटो: सूत्र से धातु से परे तासी प्रत्यय, सार्वधातुकार्धधातुकयो: से गुण होता है। इस प्रकार **लुट् परस्मैपद में**- कर्त्ता, कर्त्तारौ, कर्त्तार:। कर्त्तासि, कर्त्तास्थ:, कर्त्तास्थ। कर्त्तास्मि, कर्त्तास्व:, कर्त्तास्म:।

आत्मनेपद स्थल पूर्ववत् प्रक्रिया होती है। इसके लिए एध् धातु को देखें। इस प्रकार **लुट् आत्मनेपद में रूप**- कर्त्ता, कर्त्तारौ, कर्त्तार:। कर्त्तासे, कर्त्तासाथे, कर्त्ताध्वे। कर्त्ताहे, कर्त्तास्वहे, कर्त्तास्महे।

लृट् में प्राप्त उ का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटो: सूत्र से धातु से परे स्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा, आर्धधातुकस्येड् वलादे: से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। उसके बाद ऋ)नो: स्ये से इट् आगम, स्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा होने से सार्वधातुकार्धधातुकयो: से गुण होता है। एवं षत्व होकर **करिष्यति** रूप बनता है। तप्रत्यय में पूर्ववत् प्रक्रिया में **करिष्यते** रूप बनता है। इस प्रकार **लुट् परस्मैपद में रूप**- करिष्यति, करिष्यत:, करिष्यन्ति। करिष्यसि, करिष्यथ:, करिष्यथ। करिष्यामि, करिष्याव:, करिष्याम:।

आत्मनेपद में रूप- करिष्यते, करिष्येते, करिष्यन्ते। करिष्यसे, करिष्येथे, करिष्यध्वे। करिष्ये, करिष्यावहे, करिष्यामहे।

लोट् उभयस्थल में कोई विशेष कार्य नहीं है। परस्मैपद में रूप- **करोतु,** (तातङ् से **कुरुतात्**) **कुरुताम् कुर्वन्तु। कुरु** (तातङ् से **कुरुतात्**) कुरुतम् कुरुत। करवाणि करवाव करवाम।

आत्मनेपद में रूप- कुरुताम्, कुर्वाताम्, कुर्वन्ताम्। कुरुष्व, कुर्वाथाम्, कुरुध्वम्। करवै, करवावहै, करवामहै।

लङ् में उभयस्थल में कोई विशेष कार्य नहीं है। इस प्रकार लङ् परस्मैपद में रूप- अकुरोत्, अकुरुताम्, अकुर्वन्। अकुरो:, अकुरुतम्, अकुरुत। अकरवम्, अकुर्व अकुर्म।

लङ् आत्मनेपद में रूप- अकुरुत, अकुर्वाताम्, अकुर्वत। अकुरुथा:, अकुर्वाथाम्, अकुरुध्वम्। अकुर्वि, अकुर्वहि, अकुर्महि।

विधिलिङ् में तिप्, उ प्रत्यय, इकार लोप, यासुट् एवं सुट् का आगम, गुणरपर तथा दोनों सकारों का लोप होकर कुर् उ या त् स्थिति में -

23.7 ये च॥ (6.4.109)

सूत्रार्थ - यकारादि प्रत्यय परे हाने पर कृ धातु के बाद उकारान्त प्रत्यय का लोप होता है।

सूत्रव्याख्या - इस विधि सूत्र में ये (7/1), च अव्ययपद ये दो पद हैं। यकार में अकार उच्चारणार्थ है। नित्यं करोते: से करोते: (5/1) की अनुवृत्ति होती है। उतृच प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् से प्रत्ययात् (5/1) उत: (1/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। उनका षष्ठ्येकवचनान्त से विपरिणाम है।

टिप्पणियाँ

लोपश्चास्यन्यतरयाम् म्वोः से म्वोः (7/2) लोपः (1/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। अंगस्य का अधिकार है। सूत्रार्थ होता है - यकारादि प्रत्यय परे हाने पर कृ धातु के बाद उकारान्त प्रत्यय का लोप होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थसमन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से कुर् उ या त् स्थिति में प्रकृत सूत्र से उ का लोप होकर **कुर्यात्** सिद्ध होता है। अन्य रूप स्वयं समझें। आशीर्लिङ् आत्मनेपद में रूप - कुर्यात्, कुर्यातम्, कुर्युः। कुर्याः, कुर्यातम्, कुर्यात। कुर्याम्, कुर्याव, कुर्याम।

आत्मनेपद में रूप- कुर्वीत्, कुर्वीयाताम्, कुर्वीरन्। कुर्वीथाः, कुर्वीयाथाम्, कुर्वीध्वम्। कुर्वीय, कुर्वीवहि, कुर्वीमहि।

आशीर्लिङ् में तिप् में इकार लोप, यासुट् एवं सुट् का आगम तथा सकार का लोप, यात् आर्धधातुक तिङ् है। अतः रिङ्श्यग्लिङक्षु से कृ के ऋ को रिङ् आदेश होकर क्रियात् बनता है। आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप - क्रियात्, क्रियास्ताम्, क्रियासुः। क्रियाः, क्रियास्तम्, क्रियास्त। क्रियासम्, क्रियास्व, क्रियास्म।

आत्मनेपद स्थल में उश्च से झलादिलिङ् कित् है। अतः ऋकार को गुण नहीं होता। प्रथमपुरूषैकवचन तप्रत्यय, सीयुट् सुट्, स्थिति में कृ सीय् स् त। समुदाय तिङ् है, लिङाशिषि से आर्धधातुक संज्ञा है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। लोपो व्योर्वलि से यकार लोप। आदेश प्रत्यययोः से षत्व एवं ष्टुत्व होकर क्रषीष्ट बनता है।

आशीर्लिङ् आत्मनेपद में रूप - क्रषीष्ट, क्रषीयास्ताम्, क्रषीरन्। क्रषीष्ठाः क्रषीयास्थाम्, क्रषीढ्वम्। क्रषीय, क्रषीवहि, क्रषीमहि।

लुङ् परस्मैपद में स्थल में कृ से अट्, तिप् प्रत्यय, इकार लोप, उ प्रत्यय के अपवाद में च्लि को सिच्, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। अस्तिसिचोऽपृक्ते से ईट् आगम, सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु से कृ के ऋकार को वृद्धि आर् एवं सकार लोप होकर अकार्षीत् होता है। इस प्रकार लुङ् परस्मैपद में रूप - अकार्षीत्, अकार्ष्टाम्, अकार्षुः। अकार्षीः, अकार्ष्टम् अकार्ष्ट। अकार्षम्, अकार्ष्व, अकार्ष्म।

आत्मनेपद प्रथमपुरूषैकवचन में तप्रत्यय, कृ से अट्, उप्रत्यय के अपवाद में च्लि को सिच्, अ कृ स् त स्थिति में तनादिभ्यस्तथासोः से विकल्प से सकार लोप होकर अक्रत तथा लोपाभाव में ह्रस्वादंगात् से झल् परे सिच् सकार का लोप होकर अक्रत समान रूप बनता है। जहां झल् परे नहीं सकार लोप नहीं अक्रषाताम्, अक्रषाथाम् बनता है।

आत्मनेपद में रूप - अक्रत, अक्रषाताम्, अक्रषत। अक्रथाः, अक्रषाथाम्, अक्रढ्वम्। अक्रषि, अक्रष्वहि, अक्रष्महि।

लृङ् उभयस्थल में स्य को आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होने पर भी उाके बाद ऋ) नोः स्ये से इट् आगम, स्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा होने से सार्वधातुकार्धधातुकयोः से गुण होता है। कोई विशेष कार्य नहीं है। इस प्रकार लङ् परस्मैपद

में रूप- अकरिष्यत्, अकरिष्यताम्, अकरिष्यन्। अकरिष्यः, अकरिष्यतम् अकरिष्यत। अकरिष्यम्, अकरिष्याव, अकरिष्याम।

आत्मनेपद में रूप- अकरिष्यत, अकरिष्येताम्, अकरिष्यन्त। अकरिष्यथाः, अकरिष्येथाम् अकरिष्यध्वम्। अकरिष्ये, अकरिष्यावहि, अकरिष्यामहि।

पाठगत प्रश्न 23.1

1. तनादिगणीय धातुओं से कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
2. कृ धातु से कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
3. तनादिभ्यस्तथासोः का अर्थ क्या है?
4. ये च का अर्थ क्या है?
5. नित्यं करोतेः का अर्थ क्या है?
6. अनुदात्तोपदेशादि सूत्र को पूरा कीजिए?
7. तन् धातु आत्मनेपद लट् उत्तमपुरुष द्विवचन में रूप होता है?
8. कृ धातु परस्मैपद आशीर्लिङ् प्रथमपुरुष एकवचन में रूप होता है?
9. करिष्यति में इट् आगम किससे होता है?
10. तन् धातु आत्मनेपद लङ् प्रथमपुरुषैकवचन में कितने रूप होते है?

क्रयादिगणः

क्री (डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये) उभयपदी, अनुदात्तेत, अनिट्, सकर्मक क्रयादिगणीय धातु से वर्तमान क्रियावृत्तित्व की विवक्षा में कर्ता अर्थ में लट् परस्मैपद में तिप् प्रत्यय होकर तुद्+ति स्थिति में शप् प्राप्ति में यह सूत्र आरम्भ होता है।

23.8 क्रयादिभ्यः श्ना॥ (3.1.81)

सूत्रार्थ - कर्तृवाच्य सार्वधातुक परे होने पर क्रयादिगण की धातु से परे श्ना प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में क्रयादिभ्यः (5/3), श्ना (1/1) ये दो पद है। कर्तरिशप् को कर्तरि (7/1), सार्वधातुकेयक् से सार्वधातुके (7/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार है। धातोरेवाचो हलादेः क्रियासमभिव्याहारे यङ् सूत्र से धातोः पद अनुवृत्त होता है। दश धातुगणों में तुदादिगण नौवा गण है। क्री आदिः येषाम् (धातुनाम्) ते क्रयादयः

टिप्पणियाँ

(धातवः) इति तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिसमासः, तेभ्यः क्रयादिभ्यः। सूत्रार्थ होता है- कर्ता अर्थ में सार्वधातुक संज्ञक प्रत्यय परे क्रयादिगणीय धातुओं से श्ना प्रत्यय होता है। श प्रत्यय के शकार इत्संज्ञक लशक्वतद्धिते से है। ना शेष रहता है। अपित् होने से ङित्वत् भाव है। यह कर्तरिशप् का अपवाद है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से क्री+ति स्थिति में प्राप्त शप् का बाध करके प्रकृत सूत्र से श्ना प्रत्यय होता है क्योंकि यहां ति कर्ता अर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे है। क्री+ना+ति स्थिति में तिङ्शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से सु के उकार गुण प्राप्त तब श्ना प्रत्यय अपित् सार्वधातुक होने से क्ङिति च से गुण निषेध। उसके बाद नकार को अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि से णकार होकर **क्रीणाति** रुप सिद्ध होता है।

तस् में क्री+ना+तस् स्थिति में -

23.9 ई हल्यघोः॥ (6.4.113)

सूत्रार्थ - हलादि कित् ङित् सार्वधातुक परे होने पर श्ना और अभ्यस्त अंग के अकार के स्थान पर ईकार होता है किन्तु घु संज्ञक धातुओं के आकार के स्थान पर ईकार नहीं होता।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में ई (लुप्त प्रथमैकवचनान्त पद) हलि (7/1), अघोः (6/1) ये तीन पद है। श्नाभ्यस्तयोरातः से श्नाभ्यस्तयोः (6/2), आतः (6/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। अत उत्सार्वधातुके से सार्वधातुके (7/1) पद की अनुवृत्ति होती है। गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि से क्ङिति की अनुवृत्ति होती है। सूत्रार्थ होता है- हलादि कित् ङित् सार्वधातुक परे होने पर श्ना और अभ्यस्त अंग के अकार के स्थान पर ईकार होता है किन्तु घु संज्ञक धातुओं के आकार के स्थान पर ईकार नहीं होता।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से क्री+ना+तस् स्थिति में प्राप्त शप् का बाध करके प्रकृत सूत्र से श्ना प्रत्यय होता है क्योंकि यहां ति कर्ता अर्थक सार्वधातुक प्रत्यय परे है। क्री+ना+ति स्थिति में तिङ्शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा में सार्वधातुकार्धधातुकयोः से सु के उकार गुण प्राप्त तब श्ना प्रत्यय अपित् सार्वधातुक होने से क्ङिति च से गुण निषेध। उसके बाद प्रकृत सूत्र से ना को ईकार तथा नकार को अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि से णकार एवं सकार को विसर्ग होकर **क्रीणीतः** रुप सिद्ध होता है।

बहुवचन में झि को अन्तादेश से क्री+ना+अन्ति स्थिति में -

23.10 श्नाभ्यस्तयोरातः॥ (6.4.112)

सूत्रार्थ - सार्वधातुक कित् ङित् परे हो तो श्ना और अभ्यस्त अंग के आकार का लोप हो।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में श्नाभ्यस्तयोः (6/2), आतः (6/1) ये दो पद है। श्नसोरल्लोपः से लोपः (1/1) पद की अनुवृत्ति होती है। अत उत्सार्वधातुके से सार्वधातुके (7/1) पद की अनुवृत्ति

होती है। गमहनजनखनघसां लोपः क्ङित्यनङि से क्ङिति की अनुवृत्ति होती है। सूत्रार्थ होता है- सार्वधातुक कित् ङित् परे हो तो श्ना और अभ्यस्त अंग के आकार का लोप होता है।

विशेष- यहां श्नाभ्यस्तयोरातः उत्सर्ग सूत्र है। ई हल्यघोः का अपवाद है। श्नाभ्यस्तयोरातः सामान्यतया अजादि व हलादि कित् व ङित् सार्वधातुक परे अर्थ प्राप्त होता है। किन्तु हलादि कित् व ङित् सार्वधातुक परे हो तो ई हल्यघोः प्रवृत होता है। अतः ई हल्यघोः का अपवाद है। उससे हलादि कित् व ङित् सार्वधातुक परे हो तो श्नाभ्यस्तयोरातः प्रवृत नहीं होता है। अतः अजादि कित् व ङित् सार्वधातुक परे हो तो श्नाभ्यस्तयोरातः प्रवृत होता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से क्री+ना+ अन्ति स्थिति में अजादि कित् सार्वधातुक परे है। प्रकृत सूत्र से श्ना प्रत्यय आकार का लोप एवं नकार को णकार होकर **क्रीणन्ति** रूपसिद्ध होता है। इसी प्रकार आगे हलादि ङित् सार्वधातुक परे हो तो ईत्व, अजादि ङित् सार्वधातुक परे हो तो आकार लोप करना चाहिए।

विशेष- क्री धातु ञित होने से स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले से क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर तुद् धातु से विहित लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय होते हैं। क्रियाफल का परगामी होने से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

इस प्रकार **लट् परस्मैपद में रूप**- क्रीणाति, क्रीणीतः क्रीणन्ति। क्रीणासि क्रीणीथः क्रीणीथ। क्रीणामि क्रीणीवः क्रीणीमः।

लट् आत्मनेपद में रूप- क्रीणीते, क्रीणाते, क्रीणते। क्रीणीषे, क्रीणाथे, क्रीणीध्वे। क्रीणे, क्रीणीवहे, क्रीणीमहे।

लिट् प्रथमपुरूषैकवचन में तिप्, कृ तिप् में परस्मैपदानां णलतुसुस् थलथुसणल्वमाः से तिप् को णल् क्री अ, लिटिधातोरनभ्यासस्य से क्री को द्वित्वकार्य, पूर्वोऽभ्यासः से अभ्याससंज्ञा, हलादिः शेषः आदि हल् शेष, की क्री अ। उसके बाद ह्रस्वः सूत्र से अभ्यास के ईकार को इकार, कुहोश्चुः से चुत्व, णल् णित् होने से अचो ञ्णिति से ई को वृद्धि ऐ होकर चिकै अ अयादेश होकर **चिक्राय** सिद्ध होता है। अतुसादि में असंयोगाल्लिट् कित् से गुण निषेध होने से यण् होता है। अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ सूत्र से इकार के स्थान पर इयङ् आदेश होकर चिक् र् इय् अतुस् होता है। मिप् में णलुत्तमो वा से विकल्प से वृद्धि तथा णित् अभाव में गुण होता है। सकार को विसर्ग होकर **चिक्रियतुः** रूप होता है।

थल् में आर्धधातुकस्येड्वलादेः से इड् आगम प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् सूत्र से उसका निषेध प्राप्त उसको भी बाध करके क्रादि नियमानुसार नित्य इट् प्राप्त उसका भी अचस्तास्वत्थल्य लिटो नित्यम् से निषेध प्राप्त है। तब उसका बाध करके भारद्वाज नियम से वैकल्पिक इट् आगम होता है। दो रूप सिद्ध होते हैं। वस् और मस् क्रादि नियमानुसार नित्य इट् आगम। विभाषेटः से ध्वम् के ध को वैकल्पिक ढत्व होता है।

इस प्रकार **लिट् परस्मैपद में रूप**- चिक्राय, चिक्रियतुः, चिक्रियुः। चिक्रियिथ/ चिक्रेथ, चिक्रियथुः, चिक्रिय। चिक्रिय/ चिक्राय, चिक्रियिव, चिक्रियिम।

टिप्पणियाँ

इस प्रकार **आत्मनेपद में रूप** - चिक्रिये, चिक्रियाते, चिक्रियिरे। चिक्रियिषे, चिक्रियाथे, चिक्रियिढ्वे/ चिक्रियिध्वे। चिक्रिये, चिक्रियिवहे, चिक्रियिमहे।

लुट् में श्ना का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे तास् प्रत्यय, आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। इस प्रकार **लुट् परस्मैपद में**- क्रेता, क्रेतारौ, क्रेतारः। क्रेतासि, क्रेतास्थः, क्रेतास्थ। क्रेतास्मि, क्रेतास्वः, क्रेतास्मः।

आत्मनेपद स्थल पूर्ववत् प्रक्रिया होती है। इसके लिए एध् धातु को देखें। इस प्रकार **लुट् आत्मनेपद में रूप**- क्रेता, क्रेतारौ, क्रेतारः। क्रेतासे, क्रेतासाथे, क्रेताध्वे। क्रेताहे, क्रेतास्वहे, क्रेतास्महे।

लृट् प्रथमपुरूषैकवचन में प्राप्त श्ना का अपवाद होकर स्यतासीलृलुटोः सूत्र से धातु से परे स्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से क्री के ई को गुण होता है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। सकार को षत्व। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। इस प्रकार **लुट् परस्मैपद में**- क्रेष्यति, क्रेष्यतः, क्रेष्यन्ति। क्रेष्यसि, क्रेष्यथः, क्रेष्यथ। क्रेष्यामि, क्रेष्यावः, क्रेष्यामः।

आत्मनेपद स्थलों में थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। **आत्मनेपद में रूप**- क्रेष्यते, क्रेष्येते, क्रेष्यन्ते। क्रेष्यसे, क्रेष्येथे, क्रेष्यध्वे। क्रेष्ये, क्रेष्यावहे, क्रेष्यामहे।

लोट् उभयस्थल में कोई विशेष कार्य नहीं है। परस्मैपद में रूप- क्रीणातु, (तातङ् से क्रीणीतात्) क्रीणीताम्, क्रीणन्तु। क्रीणीहि (तातङ् से क्रीणीतात्) क्रीणीतम्, क्रीणीत। क्रीणानि, क्रीणाव, क्रीणाम।

आत्मनेपद में रूप- क्रीणीताम्, क्रीणाताम्, क्रीणताम्। क्रीणीष्व, क्रीणाथाम्, क्रीणीध्वम्। क्रीणै, क्रीणावहै, क्रीणामहै।

इस प्रकार **लङ् परस्मैपद में रूप**- अक्रीणात्, अक्रीणीताम्, अक्रीणन्। अक्रीणाः, अक्रीणीतम्, अक्रीणीत। अक्रीणाम्, अक्रीणीव, अक्रीणीम।

लङ् आत्मनेपद में रूप- अक्रीणीत, अक्रीणाताम्, अक्रीणत। अक्रीणीथाः, अक्रीणाथाम्, अक्रीणीध्वम्। अक्रीणि, अक्रीणीवहि, अक्रीणीमहि।

विधिलिङ् परस्मैपद में रूप- क्रीणीयात्, क्रीणीयाताम्, क्रीणीयुः। क्रीणीयाः, क्रीणीयातम्, क्रीणीयात। क्रीणीयाम्, क्रीणीयाव, क्रीणीयाम।

विधिलिङ् आत्मनेपद में रूप- क्रीणीत, क्रीणीयाताम्, क्रीणीरन्। क्रीणीथाः, क्रीणीयाथाम्, क्रीणीध्वम्। क्रीणीय, क्रीणीवहि, क्रीणीमहि।

आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप - क्रीयात्, क्रीयास्ताम्, क्रीयासुः। क्रीयाः, क्रीयास्तम्, क्रीयास्त। क्रीयासम्, क्रीयास्व, क्रीयास्म।

आशीर्लिङ् आत्मनेपद में रूप - क्रेषीष्ट, क्रेषीयास्ताम्, क्रेषीरन्। क्रेषीष्ठाः, क्रेषीयास्थाम्, क्रेषीढ्वम्। क्रेषीय, क्रेषीवहि, क्रेषीमहि।

लुङ् परस्मैपद में स्थल में क्री से अट्, तिप् प्रत्यय, इकार लोप, श्नाप्रत्यय के अपवाद में च्लि को सिच्, अस्तिसिचोऽपुक्ते से ईट् आगम, सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु से क्री के ई को वृद्धि ऐत्व, सकार को षत्व होकर अक्रैषीत् रूप होता है।

लुङ् परस्मैपद में रूप- अक्रैषीत्, अक्रैष्टाम्, अक्रैषुः। अक्रैषीः, अक्रैष्टम्, अक्रैष्टम्, अक्रैष्ट। अक्रैषम्, अक्रैष्व, अक्रैष्म।

आत्मनेपद में रूप- अक्रेष्ट, अक्रेषताम्, अक्रेषत। अक्रेष्ठाः, अक्रेषाथाम् अक्रेढ्वम्। अक्रेषि, अक्रेष्वहि, अक्रेष्महि।

लृङ् में अट्, तिप्, इकार लोप, श्ना के स्थान पर स्य, आर्धधातुक संज्ञास्य प्रत्यय आर्धधातुक संज्ञा, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से क्री के ई को गुण होता है। आर्धधातुकस्येड् वलादेः से इट् प्राप्त किन्तु एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् से निषेध होता है। सकार को षत्व। शेष प्रक्रिया भू धातुवत् होती है।

लृङ् परस्मैपद में रूप - अक्रेष्यत्, अक्रेष्यताम्, अक्रेष्यन्। अक्रेष्यः, अक्रेष्यतम्, अक्रेष्यत। अक्रेष्यम्, अक्रेष्याव, अक्रेष्याम।

लृङ्: आत्मनेपद में पूर्ववत् प्रक्रिया में रूप - अक्रेष्यत, अक्रेष्येताम्, अक्रेष्यन्त। अक्रेष्यथाः, अक्रेष्येथाम्, अक्रेष्यध्वम्। अक्रेष्ये, अक्रेष्यावहि, अक्रेष्यामहि।

पाठगत प्रश्न 23.2

1. क्री धातु से कौन सा विकरण प्रत्यय होता है?
2. श्ना प्रत्यय विधायक सूत्र है?
3. क्री धातु लिट् मध्यमपुरुषबहुवचन परस्मैपद में कितने रूप होते हैं?
4. क्री धातु लिट् मध्यमपुरुषबहुवचन आत्मनेपद में रूप होता हैं?
5. क्रीणन्ति में आकार लोप किससे होता है?
6. क्री धातु का अर्थ क्या है?
7. क्री धातु उभयपदी है या नहीं?

चुरादिगणः

दश गणों में चुरादिगण अन्तिम है। यह अन्य गणों से विलक्षण है। णिच् दो प्रकार का होता है। 1 स्वार्थिक 2 हेतुमान। धातु के लकार विधान से पूर्व जब स्वार्थ में णिच् होता है तब उसकी

सनाद्यन्ता धातवः से धातु संज्ञा में लकार शप् इत्यादि होते हैं। प्रकृति ही अर्थ की परिपोषक होती है। इस हेतु से यह णिच् स्वार्थिक कहा जाता है।-अनिर्दिष्टार्थाः प्रत्ययाःस्वार्थे भवन्ति। जब हेत्वर्थ में णिच् होता है।तब वह हेतुमान णिच् कहा जाता है।

चुर स्तेये धातु से स्वार्थ में णिच् विधान के लिए समत्र प्रस्तुत है-

23.11 सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्॥ (3.1.25)

सूत्रार्थ - सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच, वर्म, वर्ण, चूर्ण और चुर् आदि धातुओं के बाद णिच् प्रत्यय होता है।

सूत्र व्याख्या - इस विधिसूत्र में सत्याप पाशरूपवीणा तूलश्लोक सेनालोमत्वच वर्मवर्ण चूर्णचुरादिभ्यो (5/3), णिच् (1/1) ये दो पद है। चुर् आदिः येषाम् (धातुनाम्) ते चुरादयः (धातवः) इति बहुव्रीहिसमासः। सत्यापश्च पाशश्च रूपश्च वीणा च तूलं च श्लोकश्च सेना च लोम च त्वचश्च वर्म च वर्ण च चूर्ण च चुरादश्च तेषामितरेतरयोगद्वन्द्वे सत्यापपाशरूपवीणा तूलश्लोक सेनालोमत्वचवर्मवर्ण चूर्णचुरादिभ्यः इति बहुव्रीहिगर्भः द्वन्द्वसमासः। प्रत्ययः (1/1) परश्च (1/1) का अधिकार है। सूत्रार्थ होता है- सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोम, त्वच, वर्म, वर्ण, चूर्ण और चुर् आदि धातुओं के बाद णिच् प्रत्यय होता है। णिच् प्रत्यय के णकार की चुटू से व चकार की हलन्त्यम् से इत्संज्ञा होती है। इ मात्र शेष रहता है।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - चुर् धातु से लट् विधान से पूर्व प्रकृत सूत्र से स्वार्थ में णिच् होता है। णिच् की आर्धधातुकं शेषः आर्धधातुकसंज्ञा, पुगन्तलघूपधस्य च से लघूपधा चुर् के उ को ओ गुण होकर चोरि बनता है। उसके बाद चोरि की सनाद्यन्ता धातवः से धातु संज्ञा में लकार शप् इत्यादि होते हैं। तब शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं। किन्तु क्रियाफल का कर्तृगामी होने पर आत्मनेपद प्रत्यय होते हैं। उनकी सिद्धि के लिए अग्रिम सूत्र-

23.12 णिचश्च॥ (1.3.74)

सूत्रार्थ - यदि क्रिया का फल कर्तृगामी हो तो णिजन्त के बाद आत्मनेपद हो

सूत्र व्याख्या- इस विधि सूत्र में णिचः (5/1), च अव्ययपद ये दो पद हैं। अनुदात्तङित आत्मनेपदम् से आत्मनेपदम् (1/1), स्वरितञितः कर्तृऽभिप्राये क्रियाफले से कर्तृऽभिप्राये (7/1), क्रियाफले (7/1) पदों की अनुवृत्ति होती है। णिच् एक प्रत्यय है। उससे प्रत्ययग्रहणे तदन्ता ग्राह्याः से तदन्त विधि से णिजन्त धातु से यह अर्थ प्राप्त होता है। सूत्रार्थ होता है- यदि क्रिया का फल कर्तृगामी हो तो णिजन्त के बाद आत्मनेपद प्रत्यय होता है। इस प्रकार चुरादि धातु से परे क्रिया का फल कर्तृगामी होने पर आत्मनेपद प्रत्यय और क्रियाफल का परगामी होने पर परस्मैपद प्रत्यय होते हैं।

उदाहरण में सूत्रार्थ समन्वय - पूर्वोक्त प्रकार से चोरि ल् स्थिति में कर्तृगामी होने पर प्रकृत सूत्र से लकार के स्थान पर आत्मनेपद प्रत्यय। लट् प्रथमपुरूषैकवचन तप्रत्यय में चोरि त। त प्रत्यय

की तिङ् शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा होकर कर्तरि शप् से कर्ता अर्थ में शप् का आगम तथा अनुबन्ध लोप चोरि अ त, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इ को गुण होता है। टित आत्मनेपदानां टेरे सूत्र से त् के 'अ' टि संज्ञक को ए तथा अयादि होकर **चोरयते** रूप सिद्ध होता है।

क्रियाफल का परगामी होने से शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् से परस्मैपद प्रत्यय होते हैं। लट् प्रथमपुरूषैकवचन तिप्प्रत्यय में चोरि ति। त प्रत्यय की तिङ् शित् सार्वधातुकम् से सार्वधातुक संज्ञा होकर कर्तरि शप् से कर्ता अर्थ में शप् का आगम तथा अनुबन्ध लोप चोरि अ ति, सार्वधातुकार्धधातुकयोः से इ को गुण तथा अयादि होकर **चोरयति** रूप सिद्ध होता है।

चुर् धातु से लिट् आर्धधातुक विधान में स्वार्थ में सत्यापपाशरूपवीणा तूलश्लोकसेनालोमत्व चवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच् से णिच् होता है। णिच् की आर्धधातुकं शेषः आर्धधातुकसंज्ञा, पुगन्तलघूपधस्य च से लघूपधा चुर् के उ को ओ गुण होकर चोरि बनता है। उसके बाद चोरि की सनाद्यन्ता धातवः से धातु संज्ञा होती है। अनद्यतन परोक्षभूतार्थ क्रियावृत्ति का परोक्षे लिट् से लिट् लकार होकर चोरि+लिट् स्थिति में चोरि धातु अनेकाच् होने से कास्यनेकाच आम्वक्तव्यो लिटि वार्तिक से आम् प्रत्यय चोरि आम् ल्। अयामन्ताल्वाय्येत्न्विष्णुषु से चोरि के इकार को अय् आदेश चोर् अय् आम् ल्। उसके बाद आमः सूत्र से लिट् का लोप। लिट् कृदतिङ् सूत्र से कृतसंज्ञक है चोरयाम् से लिट् का लोप में प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् सूत्र से प्रत्ययलक्षण करके चोरयाम् कृदन्त है। उसकी कृत्तद्धितसमासाश्च सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होती है। स्वौजसौट ... सूत्र से सु सुबन्त में चोरयाम्+सु स्थिति में आमः सूत्र से सु का लोप होकर चोरयाम् शेष रहता है। इसका पुनः प्रत्ययलक्षण करके सुबन्त होने से सुप्तिङन्तं पदम् से पद संज्ञा होती है। चोरयाम् इस आमन्तत्व से कृञचानुप्रयुज्यते लिटि सूत्र से लिट् परक को कृ, भू, अस् धातुओं प्रयोग होता है। सर्वप्रथम कृ धातु का प्रयोग प्रस्तुत है। प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में चोरयाम्+कृ+ति में स्थिति परस्मैपदानां णलतुसुस् थलथुसणल्वमाः से तिप् को णल् होकर चोरयाम्+कृ+अ। लिटिधातोरनभ्यासस्य से कृ को द्वित्वकार्य चोरयाम्+कृ+कृ+अ। पूर्वोऽभ्यासः से अभ्याससंज्ञा में उरत् से अभ्यासऋकार को अर् चोरयाम्+कर्+कृ+अ। हलादिः शेषः आदि हल् शेष चोरयाम्+क+कृ+अ। कुहोश्चुः से चुत्व, णल् णित् होने से अचो ञ्णिति से ऋ को वृद्धि आर् होकर चोरयाम्+क+कार्+अ। मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर **चोरयाञ्चकार** रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में **चोरयांचकार** रूप बनता है।

आम्प्रत्यय की प्रकृति ण्यन्त चोरि धातु उभयपदी है। इस लिए अनुप्रयुज्य कृ धातु भी उभयपदी होती है। अतः आत्मनेपद प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में **चोरयाञ्चक्रे** रूप सिद्ध होता है। पूर्ववत् प्रक्रिया से चोरयाम्+कृ+ल्। प्रथमपुरूष एकवचन की विवक्षा में तप्रत्यय चोरयाम्+कृ+त। स्थिति में लिटस्तझयोरेशिरेच् से त को एश्, अनुबन्ध लोप चोरयाम्+कृ+ए। लिटि धातोरनभ्यासस्य सूत्र से द्वित्व, अभ्यास कार्य में चोरयाम+च+कृ+ए तथा इकोयणचि से यण् होकर चोरयाम्+च+क्+र्+ए स्थिति में तथा मोऽनुस्वारः से पदान्त मकार को अनुस्वार एवं वा पदान्तस्य सूत्र से अनुस्वार को विकल्प से परसवर्ण होकर **चोरयाञ्चक्रे** रूप सिद्ध होता है। तथा परसवर्ण के अभाव में **चोरयांचक्रे** रूप बनता है।

टिप्पणियाँ

चुरादिगणीय सभी धातुओं से णिच् होता है। इसलिए वे णिजन्त होती हैं। कास्यनेकाच आम्वक्तव्यो लिटि वार्तिक से चुरादिगणीय सभी धातुओं से लिट् में आम् प्रत्यय होता है। तथा कृ भू अस् का अनुप्रयोग होता है।

लिट् में कृ का अनुप्रयोग-

चोरयांचकार, चोरयांचक्रतुः, चोरयांचक्रुः। चोरयांचकर्थ, चोरयांचक्रथुः, चोरयांचक्र। चोरयांचकार/ चोरयांचकर, चोरयांचक्रव, चोरयांचक्रम।

चोरयाञ्चकार, चोरयाञ्चक्रतुः, चोरयाञ्चक्रुः। चोरयाञ्चकर्थ, चोरयाञ्चक्रथुः, चोरयाञ्चक्र। चोरयाञ्चकार/ चोरयाञ्चकर, चोरयाञ्चकृव, चोरयाञ्चकृम।

चोरयांचक्रे, चोरयांचक्राते, चोरयांचक्रिरे। चोरयांचक्रषे, चोरयांचक्राथे, चोरयांचक्रढ्वे। चोरयांचक्रे, चोरयांचकृवहे, चोरयांचकृमहे।

चोरयाञ्चक्रे, चोरयाञ्चक्राते, चोरयाञ्चक्रिरे। चोरयाञ्चक्रषे, चोरयाञ्चक्राथे, चोरयाञ्चक्रढ्वे। चोरयाञ्चक्रे, चोरयाञ्चकृवहे, चोरयाञ्चकृमहे।

भू का अनुप्रयोग- चोरयाम्बभूव, चोरयाम्बभूवतुः, चोरयाम्बभूवुः। चोरयाम्बभूविथ, चोरयाम्बभूवथुः, चोरयाम्बभूव। चोरयाम्बभूव, चोरयाम्बभूविव, चोरयाम्बभूविम।

चोरयांबभूव, चोरयांबभूवतुः, चोरयांबभूवुः। चोरयांबभूविथ, चोरयांबभूवथुः, चोरयांबभूव। चोरयांबभूव, चोरयांबभूविव चोरयांबभूविम।

अस् का अनुप्रयोग- चोरयामास, चोरयामासतुः, चोरयामासुः। चोरयामासिथ, चोरयामासथुः, चोरयामास। चोरयामास चोरयामासिव चोरयामासिम। इस प्रक्रिया के लिए एध् के रूप देखे।

चुरादिगणीय धातुओं से णिजन्त विहित होने से अनेकाच् होकर सेट् है। इस लिए लुट् में तास् को इट् का आगम होता है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- चोरयिता, चोरयितारौ, चोरयितारः। चोरयितासि, चोरयितास्थः, चोरयितास्थ। चोरयितास्मि, चोरयितास्वः, चोरयितास्मः।

आत्मनेपद स्थल पूर्ववत् प्रक्रिया होती है। इसके लिए एध् धातु को देखें। इस प्रकार लुट् आत्मनेपद में रूप- चोरयिता, चोरयितारौ, चोरयितारः। चोरयितासे, चोरयितासाथे, चोरयिताध्वे। चोरयिताहे, चोरयितास्वहे, चोरयितास्महे।

इसकी प्रक्रिया भू धातुवत् होती है। इस प्रकार लुट् परस्मैपद में- चोरयिष्यति, चोरयिष्यतः, चोरयिष्यन्ति। चोरयिष्यसि, चोरयिष्यथः, चोरयिष्यथ। चोरयिष्यामि, चोरयिष्यावः, चोरयिष्यामः।

आत्मनेपद स्थलों में थास् को छोड़कर आथाम् आदि में टित आत्मनेपदानाम् टेरे सूत्र से टि को एत्व होता है। आत्मनेपद में रूप- चोरयिष्यते, चोरयिष्येते, चोरयिष्यन्ते। चोरयिष्यसे, चोरयिष्येथे, चोरयिष्यध्वे। चोरयिष्ये, चोरयिष्यावहे, चोरयिष्यामहे।

लोट् उभयस्थल में कोई विशेष कार्य नहीं है। परस्मैपद में रूप- चोरयतु, (तातङ् से चोरयतात्) चोरयताम्, चोरयन्तु। चोरय (तातङ् से चोरयतात्), चोरयतम्, चोरयत। चोरयाणि, चोरयाव, चोरयाम।

आत्मनेपद में रूप- चोरयताम्, चोरयेताम्, चोरयन्ताम्। चोरयस्व, चोरयेथाम्, चोरयध्वम्। चोरये, चोरयावहै, चोरयाम है।

इस प्रकार लङ् परस्मैपद में रूप- अचोरयत्, अचोरयताम्, अचोरयन्। अचोरयः, अचोरयतम्, अचोरयत। अचोरयम्, अचोरयाव, अचोरयाम।

लङ् आत्मनेपद में रूप- अचोरयत, अचोरयेताम्, अचोरयत। अचोरयथाः, अचोरयेथाम्, अचोरयध्वम्। अचोरये, अचोरयावहि, अचोरयामहि।

विधिलिङ् परस्मैपद में रूप- चोरयत्, चोरयेताम्, चोरयेयुः। चोरयेः, चोरयेतम्, चोरयेत। चोरयेय्, चोरयेव, चोरयेम।

विधिलिङ् आत्मनेपद में रूप- चोरयेत, चोरयेयाताम्, चोरयेरन्। चोरयेथाः, चोरयेयाथाम्, चोरयेध्वम्। चोरये, चोरयेवहि, चोरयेमहि।

आशीर्लिङ् परस्मैपद में रूप - चोर्यात्, चोर्यास्ताम्, चोर्यासुः। चोर्याः, चोर्यास्तम्, चोर्यास्त। चोर्यासम्, चोर्यास्व, चोर्यास्म।

आशीर्लिङ् आत्मनेपद में रूप - चोरयिषीष्ट, चोरयिषीयास्ताम्, चोरयिषीरन्। चोरयिषीष्ठाः, चोरयिषीयास्थाम्, चोरयिषीढ्वम्। चोरयिषीय, चोरयिषीवहि, चोरयिषीमहि।

चुर् धातु से पूर्ववत् प्रक्रिया से चोरि लुङ् प्रथमपुरूषैकवचन में अट् तिप् इकार लोप, शप् के अपवाद में च्लि को सिच्, उसका बाधकर णिश्रिदुस्रुभ्यःकर्तरि चङ् से चङ् णेरनिटि से णि के इ का लोप णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः से उपधा ओकार को ह्रस्व उकार। उसके बाद चङि से द्वित्व होकर अ+चुर्+चुर्+अ+त्। अभ्यास संज्ञा में हलादिशेष अचुचुर्अत् यहां सन्वल्लघुनिचङ्परेऽनग्लोपे से चु को सन्वत् भाव में अभ्यास चु के उ को दीर्घो लघोः से दीर्घ ऊकार होकर **अचूचुरत्** रुप सिद्ध होता है। आत्मनेपद में तप्रत्यय में **अचूचुरत** रुप सिद्ध होता है।

(सूत्र- णिश्रिदुस्रुभ्यःकर्तरि चङ् 3.1.48-कर्तृ अर्थ लुङ् परेहोने पर ण्यन्त, श्रि, द्रु, स्रु धातुओं से परे च्लि को चङ् होता है।)

(सूत्र- णेरनिटि 6.4.51 - अनिट् आर्धधातुक परं हो तो णि का लोप होता है।)

(सूत्र- णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः 7.4.1 - चङ्परक णि परे हो तो उपधा को ह्रस्व होता है।)

(सूत्र- दीर्घो लघोः 7.4.94 - सन्वद्भाव के विषय में अभ्यास के लघु को दीर्घ होता है।)

(सूत्र- चङि 6.1.11- चङ् परे होने पर अभ्यास भिन्न धातु के प्रथम एकाच् को द्वित्व होता है।)

(सूत्र- सन्वल्लघुनिचङ्परेऽनग्लोपे 7.4.93- यदि अक् का लोप न हुआ हो तो चङ् परे होने पर लघु परे रहते सन् के समान कार्य होते है।)

लुङ् परस्मैपद में रूप - अचूचुरत्, अचूचुरताम्, अचूचुरन्। अचूचुरः, अचूचुरतम्, अचूचुरत। अचूचुरम्, अचूचुराव, अचूचुराम।

आत्मनेपद में रूप - अचूचुरत, अचूचुरेताम्, अचूचुरन्त। अचूचुरथाः, अचूचुरेथाम्, अचूचुरध्वम्। अचूचुरे, अचूचुरावहि, अचूचुरामहि।

लृङ् परस्मैपद में रूप - अचोरयिष्यत्, अचोरयिष्यताम्, अचोरयिष्यन्। अचोरयिष्यः, अचोरयिष्यतम्, अचोरयिष्यत। अचोरयिष्यम्, अचोरयिष्याव, अचोरयिष्याम।

लृङ्: आत्मनेपद में पूर्ववत् प्रक्रिया में रूप - अचोरयिष्यत, अचोरयिष्येताम्, अचोरयिष्यन्त। अचोरयिष्यथाः, अचोरयिष्येथाम्, अचोरयिष्यध्वम्। अचोरयिष्ये, अचोरयिष्यावहि, अचोरयिष्यामहि।

पाठगत प्रश्न 23.3

1. चुर् धातु से णिच् किस अर्थ में होता है?
2. चुर् धातु से स्वार्थ में णिच किस सूत्र से होता है?
3. चोरयति, चोरयते दोनों किस किस सूत्र से होते हैं?
4. चुर् धातु लिट् में कितने रूप होते हैं?
5. सत्यापदि सूत्र को पूरा कीजिए?
6. चोरयति में कौन सा विकरण होता हैं?

पाठ का सार

इस पाठ में तनादिगण, क्रयादिगण, चुरादिगण इन तीन गणों की समालोचना विहित है। उनमें से सर्वप्रथम तनादिगण की प्रथम धातु तन् के विषय में आलोचना की गई। वहाँ तन् धातु में तनादिकृभ्यः उ विकरण विधायक सूत्र की समालोचना की गई है। उसके बाद तनादिभ्यस्तथासोः, अनुदात्तोप देशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति, अत उत्सार्वधातुके, न भकुर्छुराम्, नित्यं करोतेः, ये च आदि सूत्रों की व्याख्या की गई है। उसके बाद तुद् धातु के विषय में समालोचना की गई है। क्री धातु से क्रयादिभ्यः श्ना से श्ना विकरण विधायक सूत्र की समालोचना की गई है। उसके बाद ई हल्यघोः श्नाभ्यस्तयोरातः सूत्रों की व्याख्या की गई है। अन्त में चुर् धातु की समालोचना

की गई है। वहां चुर् धातु से णिच् कैसे होता है। कौन सा विकरण होता है। इसकी समालोचना की गई है। इस पाठ में सभी रूपों की ससूत्र प्रक्रिया प्रदर्शित की गई है। उन्हें स्वयं सिद्ध करें। इस प्रकार भ्वादि से चुरादिगण तक दसगण है। इस प्रकरण में इनका नाम तिङन्त प्रकरण है।

पाठांत प्रश्न

1. सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच् सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
2. अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
3. तनादिभ्यस्तथासो सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
4. तन् धातु लट् परस्मैपद व आत्मनेपद में सविकल्प रूप लिखिए।
5. कृ धातु लट् परस्मैपद व आत्मनेपद में सविकल्प रूप लिखिए।
6. क्री धातु लट् परस्मैपद व आत्मनेपद में सविकल्प रूप लिखिए।
7. चुर् धातु लट् परस्मैपद व आत्मनेपद में सविकल्प रूप लिखिए।
8. चुर् धातु लिट् में कृ धातु के अनुप्रयोग में सविकल्प रूप लिखिए।
9. चुर् धातु लिट् में भू धातु के अनुप्रयोग में सविकल्प रूप लिखिए।
10. अचूचुरत् की प्रक्रिया लिखिए।
11. अक्रैषीत् की प्रक्रिया लिखिए।
12. अक्रत की प्रक्रिया लिखिए।
13. अक्रे चकार की प्रक्रिया लिखिए।
14. कुरुतः की प्रक्रिया लिखिए।
15. चोरयति, चोरयते की प्रक्रिया लिखिए।
16. चोरयाञ्चकार की प्रक्रिया लिखिए।
17. चोरयाञ्चक्रे की प्रक्रिया लिखिए।
18. क्री धातु लिट् परस्मैपद व आत्मनेपद में रूप लिखिए।

19. कृ धातु लिट् परस्मैपद व आत्मनेपद में रूप लिखिए।
20. अतानीत् अतनीत् की प्रक्रिया लिखिए।
21. अतत अतनिष्ट की प्रक्रिया लिखिए।
22. चिक्राय की प्रक्रिया लिखिए।
23. क्रर्वन्ति की प्रक्रिया लिखिए।
24. नित्यं करोतेः सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
25. ये च सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
26. ई हल्यघोः सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
27. श्नाभ्यस्तयोरातः सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।
28. अत उत्सार्वधातुके सूत्र की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

23.1

1. उ विकरण।
2. उ विकरण।
3. तनादिगण की धातुओं से परे सिच् का विकल्प से लुक् हो, त अथवा थास् परे हो तो।
4. यकारादि प्रत्यय परे हाने पर कृ धातु के बाद उकारान्त प्रत्यय का लोप होता है।
5. वकार, मकार पर हो तो कृ धातु के बाद उकारान्त प्रत्यय का नित्य लोप होता है।
6. अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो झलि क्ङिति।
7. तन्वहे तनुवहे।
8. क्रियात्।
9. ऋद्धनोः स्ये।
10. टतत, अतनिष्ट दो रूप।

23.2

1. श्ना

2. क्यादिभ्यः श्ना।
3. चिक्रयिथ, चिक्रेथ।
4. चिक्रियिध्वे, चिक्रियिढ्वे।
5. श्नाभ्यस्तयोरातः।
6. द्रव्यविनिमय।
7. उभयपदी।

23.3

1. स्वार्थिक।
2. सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्।
3. णिचश्च।
4. चोरयाञ्चकार, चोरयाम्बभूव, चोरयामास तीन रूप।
5. सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्णचूर्णचुरादिभ्यो णिच्।
6. शप् विकरण।

टिप्पणियाँ

एतत्पुस्तकस्थसूत्राणां सूची
(अकारादिक्रमेण)

पाठे स्थानम्-सूत्र-अष्टाध्ययीक्रमः

[१९.१] अकृत्सार्वधातुकयोर्दीघः।। (७.४.२५)
[१७.९] अचस्तास्वत् थल्यनिटो नित्यम।। (७.२.६१)
[१७.५] अचो ञ्णिति।। (७.१.९१)
[१७.१] अत आदेः।। (७.४.७०)
[२३.४] अत उत्सार्वधातुके।। (६.४.११०)
[१७.२] अत उपधायाः।। (७.२.११६)
[१८.१] अत एकहल्मध्ये०।। (६.४.१२०)
[१३.८] अतो दीर्घो यञि।। (७.३.१०१)
[१६.४] अतो येयः।। (७.२.८०)
[१८.५] अतो लोपः।। (६.४.४८)
[१९.८] अतो हलादेर्लघोः।। (७.२.७)
[१५.९] अतो हेः।। (६.४.१०५)
[२१.६] अदः सर्वेषात्।। (३.४.१११)
[२१.१०] अदभ्यस्तात्।। (७.१४)
[२१.१] अदिप्रभृतिभ्यः शपः।। (२.४.७२)
[१५.१३] अनद्यतने लङ्।। (३.२.१११)
[१४.११] अनद्यतने लुट्।। (३.३.१५)
[१२.६] अनुदात्तङित आत्मनेपदम्।। (१.३.१२)
[२३.३] अनुदात्तोपदेशवनति०।। (६.४.३७)
[१४.९] अभ्यासे चर्च।। (८.४.५३)
[१७.६] असंयोगाल्लिट् कित्।। (१.२.५)
[१९.२] अस्तिसिचो[पृक्ते।। (७.३.९६)
[१२.१२] अस्मद्युत्तमः।। (१.४.१०६)
[१५.१६] आटश्च।। (६.१.९०)
[१५.१५] आडजादीनाम्।। (६.४.७२)
[१५.११] आडुत्तमस्य पिच्च।। (३.४.९२)
[१८.६] आमः।। (२.४.८१)
[२०.१०] आमेतः।। (३.४.९०)
[२०.५] आम्प्रत्ययवत् कृञो०।। (१.३.६३)
[१८.४] आयादय आर्धधातुके वा।। (३.१.३१)
[१३.२] आर्धधातुकं शेषः।। (३.४.११४)
[१२.१०] आर्धधातुकस्येड् वलादेः।। (७.२.३५)
[१५.३] आशिषि लिङ्-लोटौ।। (३.३.१७३]
[२०.४] इजादेर्द्वा गुरूमयतोऽनृच्छः।। (३.१.३६)
[१९.३] इट ईटि।। (८.२.२८)
[२०.१५] इटोऽत्।। (३.४.१०६)
[२१.४] इडत्यर्तिव्ययतीनाम्।। (७.२.६६)
[२०.७] इणः षीध्वंलुङ्लिटां०।। (८.३.७८)
[१५.१७] इतश्च।। (३.४.९९)
[१३.११] इदितो नुम् धातोः (७.१.५८)
[२३.९] ई हल्यघोः।। (६.४.११३)
[२२.४] उतश्च प्रत्ययाद०।। (६.४.१०६)
[१७.१०] उपदेशेऽत्वतः।। (७.२.६२)
[१८.८] उरत्।। (७.४.६६)
[१७.११] ऋतो भारद्वाजस्य।। (७.२.६३)
[१७.७] एकाच उपदेशेऽनुदात्तात्।। (७.२.१०)
[२०.१२] एत ते।। (३.४.९३)
[१५.४] एरुः।। (३.४.८६)
[१३.५] कर्तरि शप्।। (३.१.६८)
[१६.७] किताशिषि।। (३.४.१०४)
[१७.४] कुहोश्चुः।। (७.४.६२)
[१८.७] कृञ् चानुप्रयुज्यते लिटि।। (३.४.४०)

एतत्पुस्तकस्थसूत्राणां सूची (अकारादिक्रमेण)

[१८.११] आत औ णलः।। (७.१.३४)
[२०.२] आतो ङितः।। (७.२.८१)
[२०.१७] आत्मनेपदेष्वनतः।। (७.१.५)
[१८.१०] आदेच उपदेशेऽशिति।। (६.१.४५)
[१६.१२] गाति-स्था-घु-पा०।। (२.४.७७)
[१८.३] गुपूधूपविच्छिपणि।। (३.१.२८)
[१६.१०] च्लि लुङि।। (३.१.२३)
[१६.११] च्लेः सिच्।। (३.१.२२)
[२१.१२] जुसि च।। (७.३.८३)
[२१.८] जुहोत्यादिभ्यःश्लुः।। (२.४.७५)
[२२.९] झषस्तथोर्धोऽधः।। (७.२.४०)
[२०.१४] झस्य रन्।। (३.४.१०५)
[१६.६] झेर्जुस्।। (३.४.१०८)
[१३.७] झो[न्तः।। (७.१.३)
[२०.१] टित आत्मनेपदानां टेरे।। (३.४.७९)
[१७.१२] णलुत्तमो वा।। (७.१.९१)
[२३.१२] णिचश्च।। (१.३.७४)
[१३.१०] णो नः।। (६.१.६३)
[१२.५] तङानावात्मनेपदम्।। (१.४.९९)
[२३.१] तनादिकृञभ्य उः।। (३.१.७९)
[२३.२] तनादित्यस्तथासोः।। (२.४.७९)
[१५.७] तस्थस्थमिपां तान्तन्तामः।। (३.४.१०१)
[१२.१०] तान्येकवचनद्विवचन०।। (१.४.१०१)
[१४.१४] तासस्त्योर्लोपः।। (७.४.५०)
[१२.९] तिङस्त्रीणि त्रीणि०।। (१.४.१००)
[१३.१] तिङ् शित् सार्वधातुकम्।। (३.४.११३)
[१२.३] तिप्तस्झि-सिप्थस्थ०।। (३.४.७८)
[२२.६] तुदादिभ्यः शः।। (३.१.७७)
[१५.५] तुह्योस्तातङ्ङाऽ०।। (७.१.३५)
[१८.२] थलि च सेटि।। (६.४.१२१)
[२०.३] थासः से।। (३.४.८०)
[१७.८] कृसृभृवृस्तुद्रुस्त्रुश्रुवो०।। (७.२.१३)
[१६.८] क्ङिति च।। (१.१.५)
[२३.८] क्र्यादिभ्यःश्ना।। (३.१.८१)
[१८.१२] गमहनजनखनघसां०।। (६.४.९८)
[१४.२] परस्मैपदानां णल०।। (३.४.८२)
[१४.१] परोक्षे लिट् (३.२.११५)
[१३.१२] पुगन्तलघूपधस्य च।। (७.३.८६)
[१९.१०] पुषादिद्युताद्यलृदितः०।। (१.३.५५)
[१४.५] पूर्वो[भ्यासः।। (६.१.४)
[१४.८] भवतेरः।। (७.४.७३)
[२१.११] भीह्रीभृहुवांश्लुवच्च।। (३.१.३९)
[१४.३] भुवो वुग् लुङ्-लिटोः।। (६.४.८८)
[१६.१३] भूसुवोस्तिङि।। (७.३.८८)
[१६.१६] माङि लुङ्।। (३.३.१७५)
[१५.१०] मेर्निः।। (३.४.८९)
[१६.२] यासुट् परस्मैपदेषु०।। (३.४.१०३)
[१२.११] युष्मद्युपपदे समाना०।। (१.४.१०४)
[२३.७] ये च।। (६.४.१०९)
[१४.१५] रि च।। (७.४.५१)
[२२.८] रुधादिभ्यःश्नम्।। (३.१.७८)
[१२.१] लः कर्मणि च भावे०।। (३.४.६९)
[१२.४] लः परस्मैपदम्।। (१.४.९८)
[१६.३] लिङः स लोपोऽनन्त्यस्य।। (७.२.७९)
[२०.१३] लिङ सीयुट्।। (३.४.१०२)
[१३.४] लिङाशिषि।। (३.४.११६)
[१६.१८] लिङ्-निमित्ते लृङ्०।। (३.३.१३९)
[२२.७] लिङ्सिचावात्मनेपदेषु।। (१.२.११)
[२.६] लिटस्तझयोरेशिरेच्।। (३.४.८१)
[१४.४] लिटि धातोरनभ्यासस्य।। (६.१.८)
[१.१३] लिट् च।। (३.४.११५)
[२१.२] लिट्यन्यतरस्याम्।। (२.४.४०)

टिप्पणियाँ

टिप्पणियाँ

एतत्पुस्तकस्थसूत्राणां सूची (अकारादिक्रमेण)

[२२.११] दट्ठा।। (८.२.७५)

[२१.१३] दिवादिभ्यः श्यन्।। (३.१.६९)

[१७.३] द्विर्वचनेऽचि।। (१.१.५९)

[१३.९] धात्वादेः षः सः।। (६.१.६२)

[२०.८] धि च।। (८.२.२५)

[२३.५] न भकुर्छुराम्।। (८.२७९)

[१६.१५] न माङ्योगे।। (६.४.७४)

[२३.६] नित्यं करोतेः।। (६.४.१०८)

[१५.१२] नित्यं ङितः।। (३.४.९९)

[१९.७] नेटि।। (७.२.४)

[१२.२] वर्तमाने लट्।। (३.२.१२३)

[१६.१] विधिनिमन्त्रणा०।। (३.३.१६१)

[२१.३] शासिवसिघसीनां च।। (८.३.६०)

[१२.८] शेषात् कर्तरि परस्मैपदम् (१.३.७८)

[१२.१३] शेषे प्रथमः।। (१.४.१०७)

[२२.१०]श्नसोरल्लोपः।। (६.४.१११)

[२३.१०]श्नाभ्यस्तयोरातः।। (६.४.११२)

[२१.९] श्लौ।। (६.१.१०)

[२३.११] सत्यापपाशरूपवीणा०।। (६.१.२५)

[२०.११] सवाभ्यां वामौ।। (३.४.९१)

[१६.१४] सार्वधातुकमपित्।। (१.२.४)

[१३.६] सार्वधातुकार्धधातुकयोः।। (७.३.८४)

[१९.५] सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु।। (७.२.१)

[१९.४] सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च।।(३.४.१०९)

[२०.१६] सुट् तिथोः।। (३.४.१०७)

[१५.१४] लुङ्-लङ्-लृङ्-क्ष्वडुदात्तः।। (६४.७१)

[१६.९] लुङ्।। (३.२.११०)

[२१.७] लुङ्सनोर्घसॢ।। (२.४.३७)

[१४.१३] लुटः प्रथमस्य डारौरसः।। (२.४.८५)

[१५.१] लृट् शेषे च।। (३.३.१३)

[१५.६] लोटो लङ्वत्।। (३.४.८५)

[१५.२] लोट् च।। (३.३.१६२)

[२२.३] लोपश्चास्यान्यतरस्यां।। (६.४.१०७)

[१६.५] लोपो व्योर्वलि।। (६.१.६४)

[१९.६] वदव्रजहलन्तस्याचः।। (७.२.३)

[१५.८] सेर्ह्यपिच्च।। (३.४.८७)

[२२.५] स्तुसुधूञभ्यः परस्मैपदेषु।। (७.२.७२)

[१६.१७] स्मोत्तरे लङ् च।। (३.३.१७६)

[१४.१२] स्यतासी लृलुटोः।। (३.१.३३)

[१८.९] स्वरतिसूतिसूयति०।। (७.२.४४)

[१२.७] स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले।। (१३.७२)

[२२.१] स्वादिभ्यःश्नुः।। (३.१.७३)

[२२.९] ह एति।। (७.४.५२)

[१४.६] हलादिः शेषः।। (७.४.६०)

[२१.१४] हलि च।। (८.२.७७)

[२१.५] हु-झल्भ्यो हेर्धिः।। (६.४.१०१)

[२२.२] हुनुवोः सार्वधातुके।। (६.४.८७)

[१९.९] हम्यन्त-क्षण्क्षसजागृ०।। (७.२.५)

[१४.७] ह्रस्वः।। (७.४.५९)